IMRAN KHAN

Civil (IInd year)

BCME

BCME

विषय-सूची

क्र० सं०	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	भवन निर्माण (Building Construction)	... 1
2.	नींव (Foundations)	... 26
3.	सीलरोधन तथा दीमक उपचार (Damp Proofing & Anti-termite treatment in Buildings)	... 44
4.	डाटें तथा लिन्टल, गाड़, टेक तथा फरमावन्दी (Arches and Lintels)	... 56
5.	दरवाजे, खिड़कियाँ तथा रोशनदान (Doors, Windows & Ventilators)	... 63
6.	फर्श तथा फर्श आवरण (Floors & Floorings)	... 73
7.	छतें तथा छत-आवरण (Roofs & Roof-Coverings)	... 77
8.	सोपान व जीना कक्ष (Stairs & Stair-Case)	... 88
9.	उपरि परिष्कृति (Surface Finishings)	... 92
10.	भवनों का आयोजन व कंक्रीट निर्माण (Planning of Buildings & Concrete Constructions)	... 100
11.	संवातन व वातानुकूलन (Ventilation & Air-conditioning)	... 122
12.	ध्वनि से रोधन, ऊष्मा व अग्निरोधन प्रणाली (Sound, Thermal & Fire Insulation System)	... 111
13.	भूकम्प प्रतिरोधी निर्माण व अनिवार्य सेवायें (Earthquake Resistance Constructions & Essential Services)	... 114
14.	अनुरक्षण व मरम्मत (Maintenance & Repairs)	... 119
15.	निर्माण कार्यों पर सुरक्षा (Safety in Construction)	... 126
16.	भौम जल अवक्षय तथा वर्षा जल संचयन (Ground Water Depletion & Rain Water Harvesting)	... 129
•	मॉडल पेपर-I (Model Paper-I)	... 133
•	मॉडल पेपर-II (Model Paper-II)	... 133
•	मॉडल पेपर-III (Model Paper-III)	... 134
•	परीक्षा प्रश्न पत्र (Exam. Paper)	

1 भवन निर्माण (Building Construction)

(A) **प्रश्न 1—उपयोग की दृष्टि से भवन कितने प्रकार के होते हैं? उनके नाम दें।** *(UPSTE 200*

उत्तर—

भवनों के प्रकार (Types of Buildings)

प्रयोग की दृष्टि से भवन निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

(i) आवासीय भवन (Residential Buildings).

(ii) सार्वजनिक भवन (Public Buildings).

(iii) व्यावसायिक भवन (Commercial Buildings).

(iv) औद्योगिक भवन (Industrial Buildings).

(v) धार्मिक तथा ऐतिहासिक भवन (Religious and Historical Buildings)।

वर्णन निम्न है—

(1) आवासीय भवन—व्यक्ति अथवा परिवार के रहने के लिये जो मकान बनाये जाते हैं, उन्हें आवासीय भवन कहते हैं। इनमें आवश्यक रूप से सोने के, बैठने के, स्नान करने, खाना बनाने तथा अन्य कार्यों के लिये अलग-अलग कमरे निर्मित किये जाते हैं। यह एकल तली अथवा बहुतली होते हैं। इनमें वायु, प्रकाश की उचित व्यवस्था की जाती है। इनमें पेय जल आपूर्ति तथा दूषित जल निकास की व्यवस्था भी की जाती है। आवासीय भवनों के अन्तर्गत मकान, बंगला, फ्लैट, क्वार्टर इत्यादि आते हैं।

(2) सार्वजनिक भवन—जो मकान जनता के हित तथा सार्वजनिक प्रयोग के लिये बनाये जाते हैं, सार्वजनिक भवन कहलाते हैं। साधारणतः इनमें परिवारके रहने की सुविधायें नहीं होतीं। जैसे—सरकारी कार्यालय, स्कूल, कॉलेज, यूनिवर्सिटी पुस्तकालय, बस स्टेशन, रेलवे स्टेशन, स्टेडियम, चिकित्सालय, संग्रहालय, थियेटर, सिनेमाहाल, जलपान गृह, थाना, क्लब इत्यादि।

सामान्यतः सार्वजनिक भवन सरकारी सम्पत्ति होते हैं परन्तु कुछ निजी सम्पति होने पर भी, सार्वजनिक प्रयोग में आते और प्रत्येक व्यक्ति बिना रोक-टोक उसका प्रयोग कर सकता है।

(3) व्यावसायिक भवन—जिन भवनों में व्यापार तथा इससे सम्बन्धित कार्य होता है, व्यावसायिक भवन कहलाते हैं। जैसे—दुकानें, बाजार, गोदाम, डाक्टरों, वकीलों व अन्य पेशेवरों के चैम्बर, हलवाइयों तथा नाइयों की दुकान, होटल, कैन्टीन बुकस्टाल इत्यादि।

(4) औद्योगिक भवन—जहाँ पर विभिन्न वस्तुओं का निर्माण अथवा उत्पादन किया जाता है और इसके लिये विभिन्न प्रकार की मशीनें, उपकरण स्थापित किये गये हैं, औद्योगिक भवन कहलाते हैं, जैसे—फैक्टरी, मिल, वर्कशाप, गैराज, पावर हाउस, रासायनिक प्रयोगशाला, डेरीफार्म इत्यादि।

उत्पादन तथा सुरक्षा की दृष्टि से कार्य सम्बन्धित व्यक्ति ही इन भवनों में जा सकता है। साधारण व्यक्ति का बिना आज्ञा प्रवेश वर्जित होता है।

(5) धार्मिक तथा ऐतिहासिक भवन—आवास तथा व्यवसाय के लिये इनका उपयोग नहीं होता, परन्तु व्यक्ति तथा वर्ग विशेष के कुछ धार्मिक कार्यों के उद्देश्य से बनाये गये भवन, धार्मिक भवनों के अन्तर्गत आते हैं, जैसे—मन्दिर, गुरुद्वारे मस्जिद, गिरजाघर आदि।

पुराने समय में किसी विशेष कारण तथा प्रयोग के लिये निर्मित भवन जैसे—दुर्ग, मीनार, तहखाने, किले, यज्ञशालायें जो अब यादगार तथा ऐतिहासिक चिन्ह के रूप में सुरक्षित रखे गये हैं, ऐतिहासिक भवन कहलाते हैं।

civilguru.net

प्रश्न 2—राष्ट्रीय भवन संहिता के आधार पर भवनों का वर्गीकरण कीजिए।

उत्तर—

भवन के उपयोग के आधार पर वर्गीकरण
(Classification of Buildings based on occupancy as per N.B. Code)

उपयोग के आधार पर राष्ट्रीय भवन संहिता में भवनों को निम्न 9 वर्गों में रखा गया है—

वर्ग A—आवासीय भवन (Residential),
वर्ग B—शैक्षणिक भवन (Educational),
वर्ग C—संस्थागत भवन (Institutional),
वर्ग D—सभा भवन (Assembly),
वर्ग E—व्यावसायिक भवन (Business),
वर्ग F—वाणिज्यिक भवन (Mercantile),
वर्ग G—औद्योगिक भवन (Industrial),
वर्ग H—भण्डारण भवन (Storage),
वर्ग J—जोखिम वाले भवन (Hazardous)।

विस्तृत वर्णन निम्न है—

(i) वर्ग A–आवासीय भवन—इन भवनों में आवश्यक रूप से विश्राम करने, रहने और सोने की व्यवस्था होती है। इन भवनों में भोजन बनाने का कक्ष हो सकता है अथवा नहीं भी हो सकता है। इसके उपवर्ग निम्न हैं—

A-1 अस्थायी निवास गृह जैसे—धर्मशाला, सराय, रैनबसेरा इत्यादि।
A-2 व्यक्तिगत आवासीय भवन, जिनमें एक अथवा दो परिवारों के आवास की व्यवस्था हो।
A-3 डोरमिटरी (Dormitory), होस्टल, रेलवे विश्राम गृहों आदि में इसी श्रेणी में आते हैं।
A-4 फ्लेट (Flats) तीन अथवा अधिक परिवारों के एक ही भवन में रहने के लिये।
A-4 होटल एवं मोटल, जहाँ 15 से अधिक व्यक्तियों के रहने की व्यवस्था हो।

(ii) वर्ग B–शैक्षणिक भवन—इसके अन्तर्गत पाठशाला, नर्सरी, स्कूल, विद्यालय, कॉलिज, विश्वविद्यालय इत्यादि के भवन आते हैं, जिनमें सामान्य रूप से व्याख्यान कक्ष, प्रयोगशालायें, पुस्तकालय इत्यादि बनाये जाते हैं।

(iii) वर्ग C–संस्थागत भवन—इस वर्ग में विभिन्न संस्थानों के भवन आते हैं। संस्थागत भवनों को निम्न उपवर्ग में रखा गया है—

C–1 चिकित्सालय, नर्सिंग होम इत्यादि।
C–2 अनाथालय, वृद्ध व विकलांगों के आश्रम इत्यादि।
C–3 बन्दीगृह, जेल, नारी मुक्ति केन्द्र, पागलखाने इत्यादि।

(iv) वर्ग D–सभा भवन—ऐसे भवन जिनमें लोग सामाजिक, धार्मिक, मनोरंजन इत्यादि कार्यों के लिये एकत्रित होते हैं, जैसे—मन्दिर, सिनेमाहाल, नाचघर, स्टेडियम, क्लब, रेलवे व बस स्टेशन इत्यादि।

(v) वर्ग E–व्यासायिक भवन—इसके अन्तर्गत बैंक भवन, चिकित्सकों के क्लीनिक, वकीलों के चैम्बर, व्यावसायिक कम्पनियों के कार्यालय, ब्यूटी पार्लर, लेखा-अभिलेख कक्ष इत्यादि आते हैं।

(vi) वर्ग F–वाणिज्यिक भवन—इस वर्ग में दुकानें, स्टोर, शोरूम आदि आते हैं। क्रय-विक्रय से सम्बन्धित कार्यालय तथा स्टोर यदि मुख्य भवन में स्थित हैं, तो इन्हें भी वाणिज्यक भवन में लिया जाता है।

(vii) वर्ग G–औद्योगिक भवन—जिन भवनों में वस्तुओं का निर्माण/उत्पादन होता है, औद्योगिक भवन कहलाते हैं। ये भवन मिल, वर्कशाप, फैक्टरी, कारखाना आदि नामों से जाने जाते हैं।

(viii) वर्ग H–भण्डारण भवन—सामान्य प्रकार का माल रखने व स्टोर करने के लिये बनाये गये भवन जैसे—गोदाम, बेयर हाऊस, कोल्ड स्टोरेज, साइलो, खाद्य अन्न घर आदि भण्डारण भवन कहलाते हैं। अति ज्वलनशील व विस्फोटक पदार्थों का संग्रह करने वाले भवनों को अलग वर्ग में रखा गया है।

(ix) वर्ग J–जोखिम वाले भवन—जिन भवनों में अति ज्वलनशील, विस्फोटक व जन-स्वास्थ्य के लिये हानिकारक पदार्थों का उत्पादन, भण्डारण, हस्तन किया जाता है, जैसे—पेट्रोल, डीजल के डिपो, गैस सिलिण्डर शेड, कारूद भण्डार, मैगजोन हाऊस, आतिशबाजी घर इत्यादि इस वर्ग में आते हैं।

(A) प्रश्न 3—भवन निर्माण में कौन-कौन से पदार्थ उपयोग में आते हैं? बताइये।

उत्तर—भवन निर्माण पदार्थ (Construction Material) :

भवनों तथा अन्य सिविल निर्माण कार्यों के लिये निम्नलिखित पदार्थ विशेष महत्त्व रखते हैं—

(1) पत्थर (Stone)—धरातल जमीन के ऊपर अथवा भूमि के नीचे स्थित चट्टानों से निकाला जाता है। इसका उपयोग भवन निर्माण, सड़कों तथा भारी इन्जीनियरी कार्यों में अधिक किया जाता है। ग्रेनाइट (Granite), बलुआ पत्थर (Lime stone), स्लेट (Slate), संगमरमर या बिलौरी पत्थर (Marble) आदि मुख्य इन्जीनियरी पत्थर हैं। दीवारों के लिये बलुआ पत्थर, फर्शों के लिये संगमरमर, छत के लिये स्लेट, सड़क गिट्टी के लिये ग्रेनाइट, सीमेन्ट उत्पादन के लिये चूना पत्थर अधिक काम होते हैं।

(2) ईंट (Bricks)—उपयुक्त मृदा (बालू, मृत्तिका आदि) को सुघट्य अवस्था में साँचों में डालकर, भट्टों में पकाकर ईंट बनाई जाती हैं। यह दीवारों, नींव, फर्श के लिये इस्तेमाल की जाती हैं। विभिन्न देशों में ईंटों के अनेक माप प्रचलित हैं। भारत में B.I.S. (भारतीय मानक ब्यूरो) द्वारा ईंटों का माप 20 cm × 10 cm × 10 cm (कुल माप 19 cm × 9 cm × 9 cm) निर्धारित है। इसे मॉडयूली ईंट (Modular Brick) कहते हैं। इससे पूर्व अधिक प्रचलित माप 9" × 4$\frac{1}{2}$" × 3" (23 cm × 11·5 cm × 8 cm) था।

(3) देशरती चूना (Lime)—चिनाई, मसाला, कंक्रीट तथा पुताई के लिये चूना प्रयोग किया जाता है। इसमें ही चूना, चूना पत्थर (Lime Stone) को फूँककर (निस्तापन करके) बनाया जाता है। चूने में बन्धक गुण होते हैं। प्रयोग से पहले चूना को पानी डालकर बुझा लेना आवश्यक है।

(4) सीमेन्ट (Cement)—चूनामय तथा मृत्तिकामय पदार्थों को उचित अनुपात में मिलाकर, चूर्णी भट्ठी (Rotary Kiln) में फूँककर तथा महीन पीसकर, सीमेन्ट बनाया जाता है। पानी मिलाने पर यह जमने (Set) लगता है और कठोर होकर ताकत ग्रहण कर लेता है। सीमेन्ट में चूना से अधिक उत्तम बन्धक गुण होते हैं। सीमेन्ट का प्रयोग मसाला तथा सीमेन्ट कंक्रीट बनाने में किया जाता है। सामान्य कार्यों के लिये पोर्टलैण्ड सीमेन्ट (Ordinary Portland Cement) प्रयोग किया जाता है।

(5) कंक्रीट (Concrete)—बन्धक पदार्थ में कुछ निष्क्रिय पदार्थ मिलाकर तथा पानी डालकर कंक्रीट तैयार की जाती है। जब बन्धक पदार्थ सीमेन्ट होता है तो यह मिश्रण सीमेन्ट कंक्रीट कहलाती है और जब चूना बन्धक पदार्थ के रूप में डाला जाता है, इसे चूना कंक्रीट कहते हैं। निष्क्रिय पदार्थ गिट्टी, बालू, सुर्खी इत्यादि होते हैं।

कंक्रीट को सुघट्य स्थिति में किसी भी आकार व रूप में ढाला जा सकता है। कठोर होने पर यह एक कृत्रिम पत्थर का रूप ले लेती है, जिसमें कृत्रिम पत्थर से उत्तम तथा वांछित गुण होते हैं। कंक्रीट सम्पीडन में बहुत अधिक सामर्थ्य रखती है। तनन प्रतिबलों के प्रति समक्ष बनाने के लिये, सीमेन्ट कंक्रीट में उचित मात्रा में प्रबलन इस्पात (छड़ें) डाला जाता है। तब यह प्रबलित सीमेंट कंक्रीट (Reinforced Cement Concrete) कहलाती हैं।

कंक्रीट तथा प्रबलित सीमेंट कंक्रीट, नींव, फर्श, छत स्लैब, लिन्टल, धरन, स्तम्भ, दीवारें, सड़कों, पुलों, पानी की टंकियों आदि अनेक रचनाओं के लिये प्रयोग की जाती है।

(6) इमारती लकड़ी या प्रकाष्ठ (Timber)—इमारती लकड़ी वृक्षों से प्राप्त होती है। भारत में टीक, शीशम, देवदार, कैल, चीड़, साल आदि मुख्य इन्जीनियरी वृक्ष हैं। टिम्बर से प्लाईवुड, बेटन-बोर्ड, फाइबर-बोर्ड आदि भी बनाये जाते हैं, जिनके उपयोग अनेक हैं।

इमारती लकड़ी दरवाजों, खिड़कियों, शहतीरों, कड़ियों पाइलों (Piles), छत कैंचियों (Trusses), रेलवे स्लीपरों, फर्शों, अन्तरछद (Ceiling) इत्यादि कार्यों में इस्तेमाल की जाती है।

Civilguruji.net

(7) इस्पात (Steel)—इन्जीनियरी कार्यों में धातुओं का विशेष स्थान है, फिर भी संरचनात्मक कार्यों में इस्पात का बहुत अधिक उपयोग होता है। मृदु इस्पात के बेल्लित गर्डर, ज्वाइस्ट, छड़ें, एंगल, चैनल, पाइप, पत्ती, टी तथा अन्य खण्ड अनेक कार्यों में इस्तेमाल होते हैं। प्रबलित कंक्रीट में विशेष रूप से मृदु इस्पात की गोल (अथवा टोर) छड़ों का प्रयोग होता है।

प्रश्न 4—भवन के मुख्य घटक क्या-क्या हैं? सचित्र बताइये। *(UPBTE 2001)*

उत्तर—

भवन के घटक
(Component Parts of a Building)

भवन के सामान्यत: निम्नलिखित घटक होते हैं—

(i) नींव (Foundation)

(ii) कुरसी या प्लिंथ (Plinth)

(iii) सील रोक रद्दा (Damp Proof Course)

(iv) अधिरचना-दीवारें, खम्भे व प्रस्तम्भ (Walls, Pillars and Columns)

(v) डाट, लिन्टल तथा धूप अवरोधक (सन-शैड) (Arches, Lintels and Sun Shades)

(vi) फ़र्श (Floor)

(vii) छत (Roof)

(viii) मुँडेर (Parapet)

(ix) सोपान या जीना (Stair Case)

(x) दरवाजे, खिड़कियाँ तथा रोशनदान (Doors, Windows & Ventilators)

भवन की सुन्दरता तथा उपयोगिता बढ़ाने के लिये दीवारों पर प्लास्टर अथवा टीप करके पुताई तथा सफेदी की जाती है और इस्पात व लकड़ी कार्य पर रंग-रोगन किया जाता है।

आवासीय भवनों के लिये निम्नलिखित आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति भी की जाती है—

(i) पेयजल सप्लाई (Water supply)

(ii) दूषित-जल निकासी (Drainage)

(iii) विद्युत सप्लाई (Electricity)।

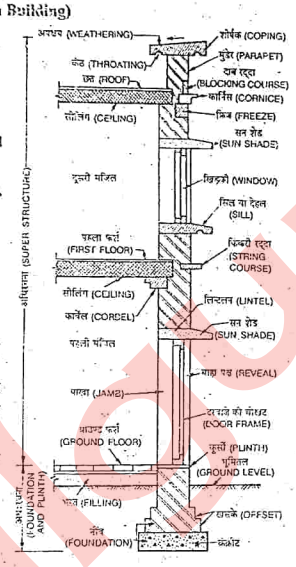

चित्र 1.1

प्रश्न 5—संरचना के कितने प्रकार होते हैं? बताइये।

उत्तर—

संरचना के प्राकार (Types of Structure)

भवन इन्जीनियरी की दृष्टि से संरचनायें दो प्रकार की होती हैं—

(i) भारवाही संरचना (Load Bearing Structure)

(ii) ढाँचायुक्त या फ्रेम संरचना (Framed Structure)

वर्णन निम्न है—

(1) भार वाही संरचना—इस प्रकार की संरचना में छतों, फर्शों, गर्डरों, कैंचियों का भार सीधा दीवारों पर आता है। दीवारें उपरोक्त भार के अतिरिक्त अपना स्वयं का भार भी वहन करती हैं। दीवारों के लिये ठोस नींव डाली जाती है। सामान्य प्रकार के भवन इसी वर्ग में आते हैं।

भार-वाही संरचनाओं में, निर्माण के पश्चात् इनकी भार-वाही दीवारों की स्थिति में कोई फेर-बदल नहीं किया जा सकता। दीवारें भी काफी मोटी रखनी पड़ती हैं।

(2) ढाँचायुक्त या फ्रेम संरचना—इस प्रकार की संरचना में चिनाई, इस्पात, काष्ठ कंक्रीट आदि के प्रस्तम्भ उचित दूरी पर खड़े करके, उनके ऊपर धरनों, गर्डरों, छतों, फर्शों, कैंचियों आदि को टिकाया जाता है। यह स्तम्भ अपने भार के अतिरिक्त, संरचना का सभी प्रकार का भार (चल व अचल) वहन करते हैं। स्तम्भों के लिये पर्याप्त गहरी नींव बनायी जाती है।

प्रस्तम्भों के मध्य खाली जगहों में पर्दा दीवारें (Partition Walls) खड़ी कर दी जाती हैं और वांछित माप के कमरे तैयार कर लिये जाते हैं। यह पर्दा दीवारें स्वयं के भार के अतिरिक्त अन्य कोई भार वहन नहीं करती हैं और इनकी नींव भी नहीं होती। यह सीधे फर्श पर से ही उठा ली जाती हैं।

पर्दा दीवारें लकड़ी, काँच, प्लाईवुड, प्लास्टिक, एस्बेस्टस, चिनाई इत्यादि की हो सकती हैं। इनको पैनल दीवार भी कहते हैं। चिनाई में यह आधी ईंट मोटी (10 cm) पर्याप्त रहती है।

फ्रेम संरचना में, आवश्यक होने पर, पैनलों की स्थिति को बदलकर फर्शों तथा कमरों का क्षेत्रफल घटाया-बढ़ाया जा सकता है। अब 4 तलों से अधिक ऊँचे भवनों के लिये फ्रेम संरचना ही बनायी जाती है।

प्रश्न 6—चिनाई से आप क्या समझते हैं?

उत्तर—

चिनाई (Masonry)

पत्थर के खण्डों अथवा ईंटों को गारे-मसाले (mortar) द्वारा आबद्ध करके निर्माण करने को चिनाई कहते हैं। चिनाई में जब पत्थरों का प्रयोग किया जाता है, तो यह पत्थर की चिनाई (Stone Masonry) कहलाती है और जब ईंटों का इस्तेमाल किया जाता है तो उसे ईंट चिनाई (Brick Masonry) कहते हैं। चिनाई में मसाले का विशेष स्थान है, बगैर मसाले की चिनाई पत्थरों अथवा ईंटों का ढेर है, जिसकी कोई निश्चित सामर्थ्य व आयु नहीं होती। चिनाई करके भवनों तथा अन्य संरचनाओं की दीवारें खड़ी की जाती हैं।

प्रश्न 7—चिनाई का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिये।

उत्तर—

चिनाई का वर्गीकरण
(Classification of Masonry)

चिनाई का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है—

(i) चिनाई-खण्डों के आधार पर,

(ii) मसाले के प्रकार के आधार पर,

(iii) मसाले के प्रयोग के आधार पर।

इनका वर्णन निम्नलिखित है—

9412845190

चिनाई-खण्डों के आधार पर चिनाई के वर्ग

चिनाई में प्रयोग किये गये खण्डों (Units) के अनुसार चिनाई निम्न प्रकार की होती है—

(i) पत्थर की चिनाई (Stone Masonry),

(ii) ईंटों की चिनाई (Brick Masonry),

(iii) पत्थर व ईंट की मिश्रित चिनाई (Composite Masonry),

(iv) खोखले ब्लाकों की चिनाई (HOllow Blocks Masonry)।

पत्थर की चिनाई में विभिन्न माप के अथवा समान माप के खण्ड प्रयोग किये जाते हैं। ऊबड़-खाबड़ फलकों वाले पत्थरों के खण्डों को थोड़ा बहुत काट-छाँट कर दीवार में स्टीक टिकने योग्य बनाया लिया जाता है।

ईंट चिनाई में सभी ईंटें एक ही मानक माप की तथा आकार की होती हैं, जो दीवार में बड़ी सरलता से अपने स्थान पर टिक जाती हैं।

मिश्रित चिनाई में पत्थरों व ईंटों का मिला-जुला इस्तेमाल होता है।

civilsurvey.net

ऐसे स्थानों पर जहाँ अच्छी ईंट उपलब्ध नहीं हो पातीं, विशेष तौर से पर्वतीय तथा रेगिस्तानी क्षेत्रों में, कंक्रीट के खोखले ब्लाकों की चिनाई की जाती है। यह ब्लाक भीतर से खोखले होते हैं और ईंटों की भाँति इनको मसाले में लगाया जाता है।

मसाले के प्रकार के आधार पर चिनाई के वर्ग

पत्थर अथवा ईंट की चिनाई करते समय बन्धक के रूप में गारा या मसाले का प्रयोग किया जाता है। यह मसाला, सीमेंट का, चूने का अथवा मिट्टी का गारा हो सकता है।

मसाले-गारे के प्रकार के अनुसार चिनाई का वर्गीकृत निम्नलिखित है—

(i) सीमेंट मसाले की चिनाई (Masonry in Cement Mortar)—जब पत्थर अथवा ईंट की चिनाई में सीमेंट मसाले का प्रयोग किया जाता है तो यह सीमेंट मसाले की चिनाई कहलाती है। सरकारी तथा उच्च श्रेणी के निर्माण में यही चिनाई अधिक अपनायी जाती है। मसाले के लिये, सामान्यतः सीमेंट और बालू का अनुपात 1 : 4, 1 : 5 व 1 : 6 रखा जाता है।

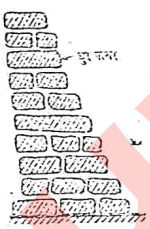

चित्र 1.2

(ii) चूने मसाले की चिनाई (Masonry in Lime Mortar)—चिनाई में जब चूने मसाले का प्रयोग किया जाता है तो उसे चूने मसाले की चिनाई कहते हैं। सीमेंट के आविष्कार से पहले सभी निर्माण-कार्य चूना मसाले में किया जाता था। अब सीमेंट के अभाव के कारण इसका चलन फिर बढ़ रहा है। मसाले के लिये चूना व सुर्खी का अनुपात 1 : 2 रखा जाता है।

(iii) मिट्टी-गारे की चिनाई (Masonry in Mud Mortar)—जब चिनाई में मिट्टी-गारा का प्रयोग किया जाता है तो इसे मिट्टी-गारे की चिनाई कहते हैं। सस्ते अथवा अस्थाई निर्माण के लिये मिट्टी-गारे की चिनाई की जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों के निर्माण में अधिकतर यही चिनाई अपनाई जाती रही है। गारा बनाने के लिये अच्छी प्रकार की साफ मिट्टी प्रयोग की जाती है।

मसाले के प्रयोग के आधार पर चिनाई के वर्ग

जब चिनाई में बन्धक के रूप में गारा या मसाला प्रयोग किया जाता है, तो इसे (i) गीली चिनाई (Wet Masonry) कहते हैं। यदि चिनाई में किसी भी प्रकार के गारे का प्रयोग न किया जाये तो इसे (ii) सूखी चिनाई (Dry Masonry) कहते हैं। सूखी चिनाई कम महत्व की पुश्ता दीवारों व टेक बन्दी के अस्थाई स्तम्भों के लिये जाती है।

प्रश्न 8—पत्थर चिनाई क्या होती है? इसके उपयोग, सामान्य सिद्धान्त व सावधानियों का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—जब चिनाई में पत्थर के खण्डकों का इस्तेमाल किया जाता है, तो वह पत्थर की चिनाई कहलाती है। पत्थर चट्टानों से प्राप्त किये जाते हैं। इनको उचित माप में काटकर और गढ़ाई करके दीवार में स्टीक टिकने योग्य बनाया जाता है। पत्थर की चिनाई की सामर्थ्य, पत्थर की किस्म की अपेक्षा निर्माण-कारीगरी पर अधिक निर्भर करती है। पत्थर की चिनाई के लिये ग्रेनाइट, बलुआ पत्थर, चूना पत्थर, संगमरमर, स्लेट आदि का प्रयोग किया जाता है। वास्तुकला के लिये बलुआ पत्थर तथा संगमरमर उपयुक्त रहता है। चिनाई के लिये पत्थर ठोस, कठोर, टिकाऊ होना चाहिए और इसमें दारारें, झिर्री, फटान, बालू-छिद्र, पच्चर इत्यादि नहीं होने चाहियें। पत्थर-खण्डक का जल अवशोषण 5% (भार अनुसार) से अधिक नहीं होना चाहिये।

पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ अच्छा पत्थर आसानी से व सस्ता उपलब्ध होता है, पत्थर की चिनाई अधिक प्रचलित है। पत्थर चिनाई की दीवारों पर कलात्मक चित्रण किया जा सकता है, इसकी आयु भी पर्याप्त होती है, परन्तु पत्थर की चिनाई पर व्यय अधिक आता है। पत्थर की चिनाई विशेष तौर पर महत्वपूर्ण भवनों, धार्मिक, ऐतिहासिक तथा स्मृति-चिन्ह संरचनाओं के लिये अपनायी जाती है।

इन्जीनियरी क्षेत्र में पत्थर की चिनाई बाँधों, पुलों, चिमनियों तथा जलीय संरचनाओं के लिये बड़े पैमाने पर अपनायी जाती है। इन्जीनियरी निर्माण के लिये ग्रेनाइट की 100 kg/cm^2, संगमरमर की 500 kg/cm^2, बलुआ पत्थर की 300 kg/cm^2 से कम सम्पीडन सामर्थ्य नहीं होनी चाहिये।

पत्थर की चिनाई के सामान्य सिद्धान्त तथा सावधानियाँ
(General Principal of Construction of Stone Masonry)

पत्थर की चिनाई करते समय नीचे दी गई बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये—

(1) खण्ड चयन—पत्थर में सभी खण्ड एक साइज और आकार के नहीं होते, अतः चिनाई के प्रकार के अनुरूप पत्थरों का चयन कर लेना चाहिये। बड़े पत्थरों को जो चिनाई में फिट नहीं होते, तोड़कर उपयुक्त माप के बना लेने चाहियें।

(2) प्राकृतिक तल—पत्थरों को दीवारों में अपने प्राकृति तल (Natural Bed) अर्थात् जिस स्थिति में वह चट्टानों से निकाले जाते हैं, पर रखना चाहिये, ताकि वह अधिक भार पर भी बने रहें। पत्थर के संस्तर यदि भार-रेखा के समानान्तर रख दिये जायें तो संस्तर सतह पर पत्थर फटकर नष्ट हो जाता है।

(3) खोखल भराव—दीवार के भीतरी खाली भाग को सावधानी से छोटे गाटों व कतरों से भर देना चाहिये अन्यथा यह भाग कमजोर रह जाता है। गाटों के एक मायका न होने के कारण, दीवार के भीतरी भाग में, रिक्त रह जाने की सम्भावना बनी रहती है।

(4) असतत ऊर्ध्वाधर जोड़—चिनाई के ऊर्ध्वाधर जोड़ लगातार एक सतत रेखा में नहीं आने चाहियें अन्यथा दीवार उस अविच्छिन्न रेखा पर खिसक जायेगी। पत्थरों के आकार व परिमाप में भिन्नता होने के कारण चिनाई में असतत-जोड़ प्राप्त करने में काफी मेहनत करनी पड़ती है।

(5) कार्य प्रगति—चिनाई-दीवार की पूरी लम्बाई एक साथ ऊपर उठानी चाहिये और धीरे-धीरे उठानी चाहिये ताकि नींव की मृदा स्वयं को भार सहन के योग्य बनाती रहे। मृदा पर एकदम बहुत अधिक भार आने पर उसके नीचे दब जाने की सम्भावना बनी रहती है, जिससे दीवार के ढह जाने का पथ उत्पन्न हो जाता है। एक दिन में एक से 1.5 मीटर से ऊँची दीवार नहीं बनानी चाहिये।

(6) पत्थरों को भिगोना—पत्थरों को दीवार में लगाने से पहले पानी डालकर भिगो लेना चाहिये ताकि वह मसाले की तराई सोखकर इसे कमजोर न बना दे।

(7) ठोस तथा उपकारित पत्थर—चिनाई में पच्चर (Chips) का प्रयोग जहाँ तक हो सके, नहीं करना चाहिये। ठोस, मजबूत, कठोर, सुसंहत (Compact), समान रूपरेखा-कण वाले एवं अच्छी प्रकार से उपकारित पत्थरों का प्रयोग करना चाहिये।

(8) धुर पत्थर—पत्थर की चिनाई में दीवार की उचित ऊँचाई पर धुर पत्थर (through stone) या जकड़ पत्थर (Bond Stone) का प्रयोग करना चाहिये। धुर पत्थर दीवार की दोनों फलकों को आपस में बाँधे रखने का कार्य करता है। तीन-चार रदों के बाद एक धुर पत्थर का रद्दा लगाना चाहिये। (देखें चित्र 1.3)।

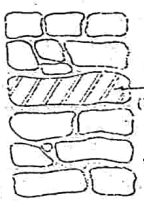

पत्थर की दीवार का खण्ड

चित्र 1.3

(9) सीधाई—प्रत्येक पत्थर लगाते समय दीवार की ऊर्ध्वाधर सतह की साहुल द्वारा जाँच करते रहना चाहिये। ढालू फलकों व सतहों की ढाल-फर्मा (Template) से जाँच करनी चाहिये।

(10) जोड़ समापन—सभी जोड़ों की फलक पर मोटाई 2 cm से अधिक नहीं होनी चाहिये। चिनाई के साथ-साथ दीवार की फलकों के जोड़ों को 25 मिमी० गहराई तक खुर्च देना चाहिये ताकि बाद में टीप (Pointing) करने में सरलता रहे और टीप का मसाला जोड़ों को पकड़ ले।

(11) तराई—चिनाई पर एक सप्ताह तक पानी डालते रहना चाहिये ताकि जोड़ों में लगाया गया मसाला अपनी वांछित सामर्थ्य ग्रहण कर सके।

(12) पुरानी व नई चिनाई का जोड़—जब पुरानी चिनाई के ऊपर नयी चिनाई करनी हो, तो पुरानी तथा सूखी सतह को तारों के ब्रुश से खुरच कर अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिये और पानी डालकर गीला कर लेना चाहिये ताकि पुरानी व नयी चिनाई का जोड़ सुदृढ़ बन सके।

(13) कोनिया खण्ड—कोनिया पत्थर की मोटाई, रदे की मोटाई से कम नहीं होनी चाहिये। इसकी लम्बाई व चौड़ाई, मोटाई के 2 से 2.5 गुना होनी चाहिये।

(14) तनन भार—पत्थर की चिनाई पर तनन बल नहीं आने चाहियें, क्योंकि इसकी तनन सामर्थ्य कम होती है।

civilguruji.net

प्रश्न 9—पत्थर की गढ़ाई की आवश्यकता क्यों पड़ती है? पत्थर गढ़ाई की किन्हीं दो विधियों को बताइये। *(UPBTE 1999)*

उत्तर—

पत्थरों की गढ़ाई (Dressing of Stones)

जिस समय पत्थर खदान (Quarry) से निकाले जाते हैं, वे टेढ़े-मेढ़े व बेडौल होते हैं। उनके माप व आकार भी भिन्न-भिन्न होते हैं। इस स्थिति में उनको चिनाई में प्रयोग नहीं किया जा सकता। अतः पत्थर के बेतरतीब, बड़ौल और अनावश्यक भागों को झाड़ व काट-छाँटकर अलग कर दिया जाता है। इस कार्य को पत्थरों की गढ़ाई कहते हैं।

गढ़ाई के लाभ

पत्थरों की गढ़ाई करने से निम्न लाभ मिलते हैं—

(i) पत्थर-खण्ड का आकार व माप सुनिश्चित हो जाता है और वह दीवार में सटीक टिक जाता है और सरलता से बॉड (Bond) स्थापित हो जाता है।

(ii) चिनाई के जोड़ समान रखे जा सकते हैं।

(iii) चिनाई का रूप निखर जाता है।

(iv) निर्माण कार्य गति से बढ़ता है।

(v) चिनाई की सामर्थ्य बढ़ जाती है।

पत्थर की गढ़ाई का स्तर, पत्थर के उपयोग, इसके गुण, संरचना का महत्व तथा पत्थर-तराशियों की कौशलता पर निर्भर करता है। पत्थर की गढ़ाई हस्त-औजारों व मशीनों द्वारा की जाती है।

पत्थर की गढ़ाई दो चरणों में की जाती है—

(i) खादान गढ़ाई (Quarry Dressing)—पत्थरों के भाटों की मोटी-मोटी गढ़ाई खदान पर ही कर ली जाती है तथा इसके अनावश्यक व टेढ़े-मेढ़े कोनों को भारी हथौड़े से झाड़ दिया जाता है। इससे पत्थर के परिवहन का व्यय घट जाता है। इसे मोटी गढ़ाई (Rough Dressing) भी कहते हैं।

(ii) स्थल गढ़ाई (Site Dressing)—निर्माण स्थल पर पत्थरों की पुनः गढ़ाई की जाती है, जिसे स्थल गढ़ाई अथवा महीन गढ़ाई (Fine Dressing) कहते हैं। चिनाई की श्रेणी का स्तर पत्थर की महीन तथा उत्तम गढ़ाई पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे पत्थर की गढ़ाई महीन होती जायेगी, उसका रूप, आकार, गुण व उपयोगिता निखरती जायेगी।

गढ़ाई के प्रकार

महीन गढ़ाई करने के लिये जिन हस्त औजारों या मशीनों की सहायता ली जाती है उसी के नाम पर इस गढ़ाई का नामकरण किया जाता है। पत्थर गढ़ाई की कुछ मुख्य टाइप इस प्रकार हैं—

(i) हथौड़ा गढ़ाई (Hammer Dressing)

(ii) छेनी गढ़ाई (Chiesel Dressing)

(iii) रेती या फाइन टूल्ड गढ़ाई (Tooled Dressing)

(iv) घिसाई तथा पालिशिंग (Rubbed and Polished Finish)

उपरोक्त गढ़ाई के चित्र नीचे दिये गये हैं।

चित्र 1.4–विभिन्न प्रकार की पत्थर गढ़ाई

प्रश्न 10—पत्थर की चिनाई का वर्गीकरण करें, किसी एक चिनाई का संक्षेप में वर्णन करें।

उत्तर—

ढोंका या रबल चिनाई (Rubble Masonry) *(UPBTE 2002, 13)*

जब अन-गढ़े अथवा कुछ गढ़े पत्थरों से चिनाई की जाती है, तो इसे ढोंका या रबल चिनाई कहते हैं। इस चिनाई के जोड़ असमान व अधिक मोटे होते हैं और पत्थर की सतहें भी ऊबड़-खाबड़ रहती हैं। रबल चिनाई को गढ़ाई तथा कार्य स्तर के आधार पर निम्न वर्गों में विभाजित किया गया है—

(i) सूखी ढोंका चिनाई (Random Rubble-Set Dry)

(ii) गारा युक्त ढोंका चिनाई (Random Rubble-Set in Mortar)

(iii) चौकोर ढोंका चिनाई (Squared Rubble Masonry)

(iv) पत्थर की पिचिंग (Dry Stone Pitching)

वर्णन निम्न है—

(i) सूखी ढोंका चिनाई—इस चिनाई में हथौड़ों से झाड़े हुए पत्थर के मोटे भाटों को बिना छान-बीन किये, ढेर से उठा-उठाकर गारे के बगैर दीवार में लगाया जाता है। यह एक-दूसरे में फँसे रहने के कारण अपनी स्थिति में बने रहते हैं। रिक्तियों में छोटे पत्थर (पच्चर) भर दिये जाते हैं। इस चिनाई की सामर्थ्य, मेशन की कार्य कौशलता पर निर्भर करती है। यह एक बहुत सस्ती तथा निम्न श्रेणी की चिनाई है। (चित्र 1.5)।

इस चिनाई का प्रयोग खेत-खलियानों की चार-दीवारी, पशुओं के बाड़े, पहाड़ी ढलानों की प्रतिधारक दीवारों, अस्थायी झोपड़ों, पुश्ता दीवारों आदि के लिये किया जाता है।

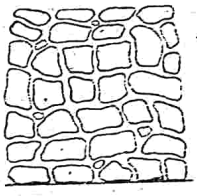

चित्र 1.5–ढोंका चिनाई

(ii) गारा युक्त ढोंका चिनाई—जब ढोंका चिनाई में जोड़ गारे (मसाले) से भर जाते हैं, तो यह गारा युक्त ढोंका चिनाई कहलाती है। यह चिनाई, सूखी ढोंका चिनाई से अधिक सामर्थ्यवान होती है। इस चिनाई में भी पत्थर को ढेर से उठाकर, बिना काट-छाँट किये बगैर दीवार में टिका दिया जाता है (चित्र 1.6)।

यह चिनाई परिसर की दीवारों, पुलों की पक्ष भित्तियों, प्रतिधारक दीवारों आदि के लिये अपनायी जाती है। देखने में यह चिनाई आकर्षक लगती है, अतः यह भवनों की सामने की दीवारों के लिये भी वास्तुकला की दृष्टि से अपनायी जाती है।

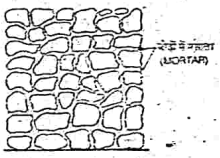

चित्र 1.6–गारा युक्त ढोंका चिनाई

(iii) चौकोर ढोंका चिनाई—इस चिनाई में हथौड़ों से गढ़े लगभग चौकोर पत्थर प्रयोग किये जाते हैं। इस चिनाई को कार्य कौशलता के आधार पर दो भागों में विभाजित किया गया है—

(1) स्तर-हीन ढोंका चिनाई (Uncoursed Rubble Masonry)

(2) स्तर-युक्त या रद्देदार ढोंका चिनाई (Coursed Rubble Masonry)

(1) स्तर-हीन ढोंका चिनाई—यह एक निम्न कोटि की पत्थर चिनाई है। इस चिनाई में पत्थर किसी व्यवस्थित ढंग से नहीं लगे होते। इसमें रद्दा या स्तर की पहचान नहीं हो पाती। पत्थरों के माप भी भिन्न होते हैं। यह चिनाई सामान्य में कम प्रयोग पड़ती है और कम भार-वाही दीवारों के लिये प्रयोग की जाती है। जहाँ तक सम्भव हो, इस चिनाई में ऊर्ध्वाधर जोड़ एक सतत रेखा पर नहीं पड़ने चाहियें। चिनाई में गोल सतह वाले पत्थर नहीं लगाने चाहियें और पत्थरों के माप के अनुसार 30 cm से 90 cm की ऊँचाई पर रद्दे एक तल पर ले आने चाहियें (चित्र 1.7)।

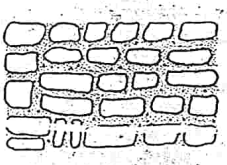

चित्र 1.7–स्तरहीन ढोंका चिनाई

(2) स्तर-युक्त या रद्देदार ढोंका चिनाई—इस चिनाई में रद्दे स्पष्ट तथा ठीक ढंग से लगाये जाते हैं, परन्तु पत्थरों की माप तथा शक्ल समान नहीं होती। यह चिनाई स्तर-हीन चिनाई से अच्छी होती है। इसके जोड़ एक जैसे और पतले रखे जाते हैं और उपयुक्त ऊँचाई के बाद धुर पत्थर लगाया जाता है (चित्र 1.8)।

civilguru.pt

यह चिनाई आवासीय भवनों, गोदाम, स्टोर, चौहद्दी दीवार आदि बनाने में अपनायी जाती है।

(iv) पत्थर की पिचिंग—नदी-नालों, नहरों तथा भराव वाली जगहों को पानी से कटने से रोकने के लिये, इस पर सूखे पत्थरों की पिचिंग कर दी जाती है। पत्थरों को हाथों से रखकर अच्छी तरह सैट किया जाता है, ताकि ये अपने आधार पर सटीक बैठ जायें और नीचे की तुलछे नहीं। बड़े पत्थरों की रिक्तियों में छोटे माप के पत्थर ध्यानपूर्वक भर देने चाहियें। पत्थरों के नीचे मूरम की परत भी बिछायी जाती है।

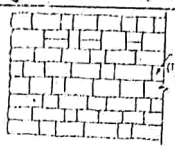

अग्रदृश्य

चित्र 1.8–स्तर-युक्त ढोका चिनाई

पिचिंग के लिये पत्थर ठोस, भारी तथा लगभग समान मोटाई के होने चाहियें। पत्थर की पिचिंग कच्ची नहरों, मृदा बन्धों, सड़कों की पार्श्व ढालों पर की जाती है।

प्रश्न 11—वरश्म या ऐश्लर चिनाई क्या होती है?

उत्तर— **वरश्म या ऐश्लर चिनाई** (Ashlar Masonry)

जब पत्थरों को विशेष ढंग से गढ़ाई करके मसाले से दीवार में लगाया जाता है तो इसे संशोधित या ऐश्लर चिनाई कहते हैं। इस चिनाई में जोड़ महीन तथा समान मोटाई के होते हैं और पत्थरों का आकार, कोने तथा बाहरी सतह एक जैसी बनायी जाती है। देखने में यह चिनाई सुन्दर लगती है। इसकी गणना उच्चकोटि की चिनाई में होती है। अतः इसका प्रयोग उत्तम श्रेणी के भवनों तथा महत्त्वपूर्ण इन्जीनियरी संरचनाओं के लिये किया जाता है।

गढ़ाई के स्तर के अनुसार ऐश्लर चिनाई के वर्ग नीचे दिये गये हैं—

(i) उत्तम ऐश्लर चिनाई (Fine Ashlar Masonry)

(ii) मोटी या अधगढ़ ऐश्लर चिनाई (Rough Tooled Ashlar Masonry)

(iii) पखदार या चैम्फर्ड ऐश्लर चिनाई (Chamfered Ashlar Masonry)

इनका वर्णन निम्न है—

(i) उत्तम ऐश्लर चिनाई—इस चिनाई के सभी पत्थर समान माप के होते हैं। पत्थर की सामने की सतहों को उत्तम गढ़ाई व घिसाई की जाती है। कोई भी पत्थर 30 cm से कम मोटा नहीं होना चाहिये तथा लम्बाई, मोटाई का 2 से 3 गुना होनी चाहिये। खड़ी ऊर्ध्वाधर व क्षैतिज जोड़ समान मोटाई के होते हैं। यह 4 cm से अधिक मोटे नहीं होनी चाहियें। देखने में यह चिनाई ईंट-चिनाई जैसी लगती है। विशेष ऐश्लर चिनाई में सामने के पत्थर घिसाई व पालिशिंग करके लगाये जाते हैं (चित्र 1.9)।

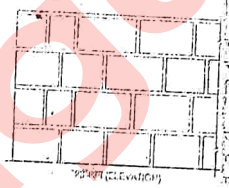

अग्रदृश्य (ELEVATION)

चित्र 1.9–उत्तम ऐश्लर चिनाई

यह चिनाई पर्याप्त महँगी होती है और यादगारी तथा उच्च श्रेणी के भवनों के लिये अपनायी जाती है।

(ii) मोटी या अधगढ़ ऐश्लर चिनाई—इस चिनाई में पत्थरों की सामने की सतह कुछ रफ और असम रहती है परन्तु कोने ठीक ढंग से तराशे जाते हैं। चिनाई के जोड़ 6 cm से अधिक मोटे नहीं होने चाहियें। दीवार की सामने की सतह चट्टानी फिनिश जैसी दिखती है। यह उत्तम ऐश्लर से [illegible] ऐश्लर की श्रेणि में रखी जाती है (चित्र 1.10)।

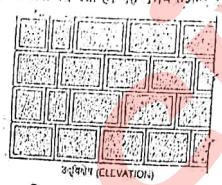

अग्रदृश्य (ELEVATION)

चित्र 1.10–मोटी या अधगढ़ ऐश्लर चिनाई

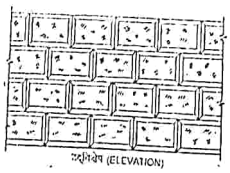

अग्रदृश्य (ELEVATION)

चित्र 1.11–पखदार या चैम्फर्ड ऐश्लर चिनाई

(iii) पखदार या चैम्फर्ड ऐश्लर चिनाई—इस चिनाई में पत्थरों की गढ़ाई तथा सतह उपरोक्त अश्लर चिनाई जैसी ही होती है परन्तु सतह उपरोक्त अश्लर चिनाई जैसी ही होती है परन्तु पत्थर के सामने दिखने वाले किनारों को 45° पर 'चैम्फरिंग' करके ढालदार बनाया दिया जाता है, जो चिनाई में V-आकार के नजर आते हैं और दीवार को सुन्दरता बढ़ाते हैं।

प्रश्न 12—पत्थर चिनाई में लगने वाले प्रमुख जोड़ क्या-क्या हैं? *(UPBTE 2000)*

उत्तर— **पत्थर चिनाई में जोड़ (Joints in Stone Masonry)**

चिनाई में पत्थरों की दो सिलों (Slabs) या ब्लाकों को आपस में मजबूती से बाँधने के लिये यांत्रिक जोड़ लगाये जाते हैं, क्योंकि चिनाई मसाला जोड़ इतने टिकाऊ नहीं होते। चिनाई में जहाँ एक ब्लाक के दूसरे ब्लाक पर से फिसल जाने की सम्भावना बनी रहती हो, वहाँ भी जोड़ लगाये जाते हैं। यह जोड़ अन्तः पाशन (Inter-lock) का कार्य करते हैं और दीवारों में बाहर निकले खण्डकों को पलट जाने से रोकते हैं। यान्त्रिक जोड़ पत्थरों का पार्श्विक विचलन और विस्थापन भी रोकते हैं।

पत्थर चिनाई में लगने वाले मुख्य जोड़ निम्न हैं—

(i) टबलरी या बट जोड़ (Butt Joint)

(ii) पतामी या चढ़ाव जोड़ (Rebated or Lapped Joint)

(iii) जीभी-झिरी जोड़ (Tongued and Grooved Joint)

(iv) टेबल जोड़ (Tabled Joint)

(v) प्लग जोड़ (Plug Joint)

(vi) गुज्झी या डावल जोड़ (Dowel Joint)

(vii) शिंकेजा जोड़ (Cramped Joint)।

इन जोड़ों का वर्णन निम्न है—

(i) टबलरी या बट जोड़—यह एक सरल प्रकार का जोड़ है, जो दो खरस पत्थरों को एक-दूसरे से सटाकर बनाया जाता है। पत्थर के फर्शों व छत पीकों में यह जोड़ लगाया जाता है। जोड़ को जल-सह बनाने के लिये इसमें चिनाई-मसाला भर दिया जाता है। (चित्र 1.12)।

चित्र 1.12–बट जोड़

(ii) पतभी या चढ़ाव जोड़ (Rebated or Lapped Joint)—यह जोड़ पत्थर के चौकों की चिनाई में पताम (Rebate) काटकर तथा इन्हें एक-दूसरे पर चढ़ाकर बनाया जाता है। फर्श व छत में प्रयोग किये जाने वाली पत्थर की स्लैब से सामान्य उद्देश्य के लिये यह जोड़ लगाया जाता है। इस जोड़ में पानी प्रवेश नहीं कर पाता। दो प्रकार के पतामी जोड़ चित्र 1.13 में दिखाये गये हैं। तिरछा पतामी जोड़ (चित्र 1.13) में अधिक स्थिर रहता है।

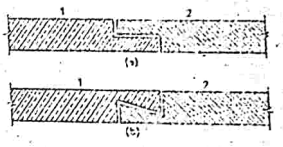

चित्र 1.13–पतामी या चढ़ाव जोड़

(iii) जीभी-झिरी जोड़—यह जोड़ बनाने के लिये एक ब्लाक की चिनाई में उभार या जीभी बनायी जाती है और दूसरे ब्लाक की मोटाई में जीभी के अनुरूप एक झिरी काटी जाती है और फिर दोनों ब्लाकों को एक-दूसरे में सटाकर फिट कर दिया जाता है। यह जोड़ पत्थर की सीढ़ी में, चौकी (Landing) की स्लैबों में लगाया जाता है। इस जोड़ की सामर्थ्य काफी होती है, परन्तु खाँचे काटने में समय लगता है (चित्र 1.14)।

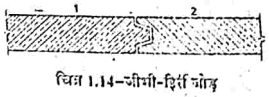

चित्र 1.14–जीभी-झिरी जोड़

(iv) टेबल जोड़—यह जोड़ जीभी-झिरी जोड़ की भाँति बनाया जाता है, परन्तु इसमें उभार तथा नली आकार में बनाये जाते हैं। यह जोड़ एक ब्लाक को दूसरे ब्लाक पर से फिसलने से रोकता है। जोड़ का खाँचा 3 से 4 cm गहरा रखा जाता है। टेबल जोड़ ऊर्ध्वाधर अथवा ढालू स्थिति में डाले गये पत्थर के ब्लाकों में लगाया जाता है (चित्र 1.15)।

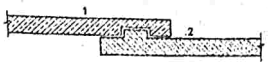

चित्र 1.15–टेबल जोड़

Civilguru.net

(v) प्लग जोड़—पत्थर की दो स्लैबों या ब्लाकों को, जिन्हें आपस में जोड़ना होता है, में तिरछी झिरीं काट ली जाती है। फिर उनको आपस में सटाकर, इस झिरीं में सीमेंट-मसाला या पिघला हुआ सीसा भर दिया जाता है, जो स्थायी रूप से पत्थरों को बाँध देता है। (चित्र 1.16)।

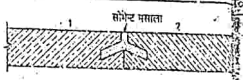

चित्र 1.16–प्लग जोड़

(vi) गुज्झी या डावल जोड़—जब पत्थर के खण्डकों का भार के कारण अथवा अन्य कारण से खिसकने की सम्भावना हो, तो खण्डकों में झिरीं काटकर उसमें जंग न लगने वाले धातु (जैसे गन-मैटल या ताँबे) की मोटी छड़ (डावल) फँसा दी जाती हैं और छेदों में सीमेंट मसाला अथवा सीसा भर दिया जाता है। डावल जोड़ चित्र 1.17 में दिखाया गया है। डावल जोड़ पत्थर चिनाई में खम्भों की तली पर तथा ऊपरी रद्दों में लगाये जाते हैं, ताकि यह अपनी स्थिति में बने रहे। भारी जलीय संरचनाओं में भी इस जोड़ का इस्तेमाल किया जाता है।

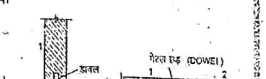

चित्र 1.17–गुज्झी जोड़

(vii) शिकंजा जोड़—बाहर बढ़े हुये खण्डकों (Blocks) को खिसकने से रोकने के लिये, इनमें झिरीं काटकर धातु का मोटा शिकंजा फँसा दिया जाता है और खाली स्थान में सीसा और सीमेंट मसाला भर दिया जाता है। यह जोड़ पर्याप्त मजबूत होता है। कोर्निंग, कार्निस आदि के ब्लाकों को जोड़ने के लिये यह जोड़ उत्तम रहता है (चित्र 1.18)।

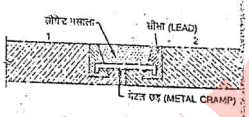

चित्र 1.18–शिकंजा जोड़

प्रश्न 13—पत्थर की कोर-पट्टी अथवा पत्थर मढ़ाई का क्या अर्थ है?

उत्तर—पत्थर की कोर-पट्टी अथवा पत्थर मढ़ाई (Stone Cladding)—पूर्व-ढालित कंक्रीट अथवा पत्थरों के (पतले) चौकों (पेनलों) को दीवार की खड़ी पलकों (सतहों) पर जड़ना-मढ़ना ताकि दीवार-सतह जल-शोषक बन जाये और इसकी सुन्दरता बढ़ जाये, कोर पट्टी या पत्थर मढ़ाई कहते हैं। पत्थर की कोर-पट्टी ग्रेनाइट, मार्बल, स्लेट, बलुआ पत्थर आदि की हो सकती है। कोर-पट्टी हालांकि दीवार सतह से मजबूती से जुड़ी होती है, परन्तु यह दीवार पर पड़ने वाले संरचनात्मक भारों के वहन करने में कोई योगदान नहीं देती है। अब बाहरी दीवारों पर प्लास्तर/टीप के स्थान पर सफेद या रंगीन पत्थर-चौकों की मढ़ाई अधिक प्रचलित हो रही है। पत्थर-मढ़ाई पर पुताई/समोसम आदि करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

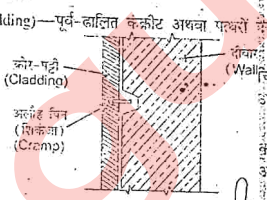

चित्र 1.19–कोर-पट्टी (Cladding)

स्लेट की कोर पट्टी के पेनल का माप 0·76 m × 1·80 m और मोटाई, 38, 25 या 12 mm होती है। ग्रेनाइट तथा अन्य पत्थरों की पट्टी का माप 0·90 m × 1·22 m होता है और मोटाई 62, 30 या 25 mm तक होती है।

कोर-पट्टी को दीवार पर जड़ने के लिये धातु के शिकंजे (Cramps) लगाये जाते हैं। शिकंजे ऐसी धातु के बने हों, जिसमें जंग न लगे। प्रत्येक पेनल में न्यूनतम एक शिकंजा अवश्य लगाना चाहिये। ये शिकंजे दोहरी भुजा (Double Toed), सिंगल भुजा या S-प्रकार के हो सकते हैं। कोर-पट्टी कार्य में सभी जोड़ सीधे, समान व कागजी-महीन होने चाहियें। कोर-पट्टी के पीछे सीलन/पानी नहीं जाने चाहिये। कोर पट्टी के पीछे 12 mm मोटा [illegible] कोर-पट्टी को दीवार-सतह पर बड़ी सावधानी से लगाना चाहिये। पेनल के उखड़ कर नीचे गिरने पर गम्भीर दुर्घटना हो सकती है, क्योंकि एक सामान्य पेनल का भार 50 kg से अधिक हो सकता है। ऊँचाई पर स्थित क्षतिग्रस्त पेनल की मरम्मत करने में भी दिक्कत आती है।

अब कंक्रीट की कोर-पट्टी का भी प्रयोग होने लगा है। दीवार की कोर-पट्टी की सतह पर विभिन्न सम्मूर्ति, रंग अथवा उपचार किये जाते हैं। कोर-पट्टी चित्र 1.19 में दर्शायी गयी है।

प्रश्न 14—ईंट चिनाई क्या होती है? ईंट चिनाई में प्रयुक्त होने वाली प्रमुख ईंटों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर— (A) **ईंट चिनाई (Brick Masonry)**

ईंटों को मसाले-गारे से आबद्ध करके जो चिनाई की जाती है, उसे ईंटों की चिनाई कहते हैं।

ईंट चिनाई में निम्न प्रकार की ईंट प्रयोग की जाती हैं—

(i) सामान्य पकी मृत्तिका ईंट (Ordinary Burnt Brick)

(ii) धूम-भस्म चूना ईंट (Fly ash-Lime Brick)

(iii) मृत्तिका धूम-भस्म ईंट (Clay-Flyash Brick)

(iv) धूम-भस्म बालू चूना ईंट (Flyash-Sand-Lime Brick)

(v) टाइल ईंट (Tile-Brick)।

प्रश्न 15—ईंट चिनाई कितने प्रकार की होती है?

उत्तर—

ईंट चिनाई के प्रकार
(Types of Brick Masonry)

ईंटों की श्रेणी तथा मसाले के प्रकार के अनुसार ईंट चिनाई की किस्में निम्नलिखित हैं—

(i) पक्की चिनाई, (ii) कच्ची-पक्की चिनाई, (iii) कच्ची चिनाई।

इनका वर्णन निम्न है—

(i) पक्की चिनाई (Pucca Masonry)—भली-भाँति पकी हुई उत्तम श्रेणी की ईंटों को सीमेंट या चूना मसाले में चिनाई, पक्की चिनाई कहलाती है। स्थायी निर्माण कार्यों में यही चिनाई अपनायी जाती है।

(ii) कच्ची-पक्की चिनाई (Kacha-Pucca Masonry)—पकी हुई ईंटों की मिट्टी-गारे में चिनाई, कच्ची-पक्की चिनाई कहलाती है। यह चिनाई सस्ते व अस्थायी मकानों के लिये की जाती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिये भी यह चिनाई उपयुक्त रहती है।

(iii) कच्ची चिनाई (Mud Masonry)—बिना पकी अथवा कच्ची (Sun Dried) ईंटों को मिट्टी-गारे में चिनाई, कच्ची चिनाई कहलाती है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में तथा जहाँ वर्षा कम होती है, अपनायी जाती है। झुग्गी-झोंपड़ी, पशुओं के बाड़े आदि के लिये यह चिनाई उपयुक्त तथा सस्ती पड़ती है। इसकी आयु बहुत कम होती है।

प्रश्न 16—ईंट चिनाई के सामान्य सिद्धान्त व सावधानियाँ क्या हैं? ***(UPBTE 2002)***

उत्तर— (A)

ईंट चिनाई के सामान्य सिद्धान्त तथा सावधानियाँ
(General Principles of Brick Masonry)

पत्थर-चिनाई की तुलना में ईंट-चिनाई करना सरल है तथा कम समय लगता है। इसका मूल कारण ईंटों का सुहस्त होना तथा मानक साइज है, जिससे ईंट आसानी से हस्तन (हैंडल) की जा सकती है। फिर भी [illegible] चिनाई में अनेक सावधानियाँ रखनी पड़ती हैं जिनका वर्णन नीचे किया जा रहा है—

(i) चाल—सभी सरकारी चिनाई कार्यों में अंग्रेजी चाल (English Bond) अपनायी जायेगी [illegible] किसी अन्य चाल का स्पष्ट निर्देश न दिया गया हो। जो चाल अपनायी गई है, उसे [illegible] आगे बढ़ाना चाहिये अन्यथा जोड़ों के क्रम बिगड़ जायेंगे और [illegible]

(ii) ईंटों का भिगोना—ईंटों को चिनाई में प्रयोग करने से पहले अच्छी प्रकार (6 घण्टे तक टैंक में डालकर–CPWD) पानी से भिगो लेना चाहिये। यदि सूखी ईंट दीवार में लगायी जाती है, तो वह मसाले से नमी सोखती है और मसाला अपनी पूर्ण सामर्थ्य ग्रहण नहीं कर पाता है। मिट्टी गारे की चिनाई करते समय ईंटों को भिगोना आवश्यक नहीं है।

(iii) मसाला—चिनाई का मसाला पतला नहीं होना चाहिये अन्यथा वह जोड़ों से बाहर बहने लगेगा। ऐसा सुवट्य मसाला जो करनी (Trowel) से उठाकर लगाया जा सके, उपयुक्त होता है।

(iv) **ईंट की डिब्बी**—चिनाई में ईंट की डिब्बी (Frog) ऊपर को रखी जायेगी। सबसे ऊपरी रद्दे (Top Course) डिब्बी नीचे को रखी जाती है, परन्तु इसमें मसाला अच्छी तरह से भर देना चाहिये।

(v) **आधार तल**—ईंटों के रद्दे का आधार तल (Bed) दीवार पर पड़ने वाले भार के समकोणक होना चाहिये।

(vi) **जोड़**—क्रमागत रद्दों के खड़े (ऊर्ध्वाधर) जोड़ एक सीध में आने चाहिये परन्तु यह सतत नहीं होने चाहियें। क्षैतिज जोड़ भी एक क्षैतिज रेखा पर रहने चाहि। चिनाई में उपरोक्त सभी जोड़ों की मोटाई 10 mm से अधिक नहीं होनी चाहिये। जोड़ में मसाला अच्छी तरह भर देना चाहिये।

(vii) **खड़ंजा रद्दा** (Brick on edge)—कुर्सी तल, खिड़की की देहल, जीभी-पट अन्तश्छद तथा मुंडेर के शीर्ष पर आवश्यक रूप से खड़ी ईंट लगानी चाहिये (यह पुरानी माप की ईंटें 23 cm×11·5 cm×8 cm के लिये हैं)।

(viii) **शुद्धता व सिधाई**—जैसे-जैसे चिनाई ऊपर उठती जाये, साहुल (Plum-Bob) व अन्य औजारों से दीवार की शुद्धता व सीधाई की जाँच करते रहना चाहिये।

(ix) **निर्माण**—दीवार पूरी लम्बाई में एक साथ ऊपर उठानी चाहिये ताकि नींव की अवमृदा पर समान रूप से भार पड़े। इसी प्रकार एक दिन में $1\frac{1}{2}$ या 2 मीटर से अधिक ऊँची दीवार नहीं उठानी चाहिये ताकि अवमृदा पर अकस्मात अत्यधिक भार न आये, अन्यथा नींव के नीचे धँस जाने की सम्भावना रहती है।

(x) **वर्षा-पाइप**—सभी वर्षा-जल व सीवर पाइप जो चिनाई में दबाने हैं, अपनी निर्धारित स्थिति पर खड़े करके, अच्छी तरह चिन देना।

(xi) **बेट**—ईंट-चिनाई में अद्धों (Bats) का प्रयोग यथासम्भव नहीं होना चाहिये, क्योंकि इससे चिनाई कमजोर पड़ जाती है। जोड़ काटने के लिये जो डेल्ली (क्लोजर) लगायी जाये, वह सही माप की होनी चाहिये।

(xii) **जोड़ उपचार**—जैसे-जैसे चिनाई ऊपर उठती जाये, दीवार की फलकों के जोड़ों को 15-20 मिमी० गहराई तक खुरच कर मसाला साफ करते जाना चाहिये ताकि बाद में दीवार पर किया जाने वाला प्लास्तर या टीप सतह को अच्छी तरह पकड़ सके।

(xiii) **स्राव-छिद्र** (Weep Holes)—प्रतिधारक तथा पराज्ञ वाली दीवारों में 2 मी० के क्षैतिज व ऊर्ध्व अन्तरालों पर 7·5 cm × 5 cm अथवा 7·5 cm × 7·5 cm माप के स्राव-छिद्र रखने होंगे।

(xiv) **वर्षा से बचाव**—ताजी चिनाई को 12 घण्टे तक अकस्मात वर्षा/पाला से बचाना चाहिये। गीली चिनाई को वर्षा के समय तिरपाल से ढांप देना चाहिये।

(xv) **तराई**—ईंट-चिनाई पर एक सप्ताह तक पानी छिड़क कर इसकी तराई करते रहना चाहिये। प्रत्येक दिन के चिनाई कार्य पर बिछि डाल देनी चाहिये ताकि तराई अवधि का ध्यान रहे।

(xvi) **एक ईंट मोटी दीवार**—एक अथवा इससे कम मोटी दीवार की एक फलक ठीक सीधी, शुद्ध व समतल रखी जायेगी। दूसरी (Back) फलक में, ईंट की शुद्धता में कुछ अन्तर होने के कारण कुछ असमता आ सकती है, जिसे बाद में प्लास्तर से पाट दिया जाता है।

(xvii) **पाड़**—चिनाई की पाड़ पर्याप्त मजबूत होनी चाहिये। यह मजदूरों व सामग्री का भार सम्भालने योग्य होनी चाहिये और वहाँ हल्का सा कम्पन/लटकन नहीं चाहिये।

अन्य सावधानियाँ

(i) चिनाई ऊपर उठाने से पहले दरवाजों, खिड़कियों की चौखटें अपने उचित स्थान पर फिट कर देनी चाहियें। यदि ऐसा करना सम्भव न हो तो इनके होल्ड-फास्ट (Hold-Fast) के लिये निर्धारित स्थान छोड़ देने चाहियें। जब पानी तथा फ्लैश के पाइप चिनाई में दबाने हो तो यह स्थान पहले से ही निर्धारित करके, पाइप सीमेन्ट-मसाले अथवा कंक्रीट में दबाने चाहिये।

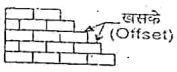

चित्र 1.20–रेकिंग-बैक खसके।

(ii) जब दीवार पूरी लम्बाई एक चरण में ऊपर उठायी जानी सम्भव न हो तो दीवार के सिरे पर उचित खसके या रेकिंग-बैक खसके (Raking-Back) छोड़ने चाहियें (चित्र 1.20)।

(iii) मुख्य दीवार से क्रास दीवार को जोड़ने के लिये मुख्य दीवार में दाँते खसके (Toothing) या खाँचे छोड़ने चाहियें (चित्र 1.21)। इससे दोनों दीवारों का संगम मजबूत बनता है।

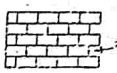

चित्र 1.21–दाँते खसके।

(iv) लकड़ी के धरनों को दीवार में दबाना नहीं चाहिये। इससे लकड़ी के गलने का भय रहता है। धरनों के सिरों को कार्बेल या टेम्प्लेट पर टिकाना चाहिये अथवा सिरों पर अच्छी तरह कोलतार लगा देना चाहिये।

(v) निर्माण करते समय, पाड़ (Scaffold) के पुटलॉग (Putlogs) के छिद्रों को जो दीवार में रह जाते हैं, बाद में सावधानी से चिनाई द्वारा भर देना चाहिये।

(vi) दीवार पर प्लास्तर चिनाई के तीन सप्ताह बाद करना चाहिये। इससे चिनाई को पूर्णतः सैट होने का समय मिल जाता है। प्लास्तर के लिये 10 mm और टीप के लिये 15 mm तक चिनाई-कोल में हो, जोड़ों को खुरच देना चाहिये ताकि सह-उपचार या दीवार से अभिलाग (Bond) उत्तम प्राप्त हो।

(vii) लम्बी दीवारों में 30 से 45 मी० के अन्तराल पर 15 mm का प्रसार जोड़ (Expansion joint) देना आवश्यक है।

(viii) दीवारों में बिजली तारों व नल-पाइपों के लिये खाँचे काटे जा सकते हैं, परन्तु एक दीवार में ये खाँचे सीध परिच्छेद में अधिक नहीं होंगे। ऊर्ध्व खाँचे 2·0 मी० से कम दूरी पर नहीं काटे जायेंगे। आधी ईंट की भार-वाही दीवार में खाँचे नहीं काटा जायेगा।

प्रश्न 17—ईंटों की दीवार की निर्माण विधि का वर्णन करें।

उत्तर—

ईंटों की दीवार की निर्माण विधि
(Construction Procedure of Brick Wall)

ईंटों की दीवार के निर्माण की प्रक्रिया निम्नलिखित है—

(i) **ईंटों का चयन करना**—दीवार के अग्र भाग (Facing) में साफ सतह तथा सीधे किनारों वाले, पूर्ण पकी हुई ईंटों का प्रयोग करना चाहिये। ईंटों को प्रयोग करने से पहले अच्छी प्रकार से पानी में भिगो लेना चाहिये। मोर्टार-मसाले की उतनी ही मात्रा बनानी चाहिये, जो आधे घण्टे के अन्दर दीवार पर इस्तेमाल हो जावे, क्योंकि इसके पश्चात् सीमेंट मसाला सैट होने लगता है।

(ii) **पहला रद्दा लगाना**—कंक्रीट-आधार के ऊपर ईंट चिनाई शुरू की जाती है। कंक्रीट सतह पर दीवार की मोटाई के ऊपर, करनी से मसाला फैलाया जाता है। मसाले की मोटाई, जोड़ मोटाई से कुछ अधिक रखी जाती है। सर्वप्रथम दीवार के दोनों सिरों पर ईंट लगायी जाती है। ये ईंटें दीवार की सत्य सिधाई और रद्दा-तल का भान कराती है। यह ईंट गेज-रॉड से जाकर लगते हैं। अब दोनों सिरों को मिलाती हुयी एक डोरी तान दी जाती है। इस डोरी की ऊँचाई, रद्दे की मोटाई के बराबर रखी जाती है। सिरों की ईंट जमाने के पश्चात्, इसके पार्श्व पर करनी से मसाला लगाकर अगली ईंट इससे सटाकर रखते हैं। यह ईंट डोरी को ठीक छूती हुई सीधी रेखा पर होनी चाहिये। इसी प्रकार अगली ईंट रखते हैं। ईंट रखने का यह क्रम दोनों सिरों से भीतर की ओर चलता रहता है और मध्य में उपयुक्त लम्बाई की ईंट लगाकर रद्दा बन्द कर दिया जाता है। ईंटों को मसाले की परत के ऊपर रखकर, इसे करनी-मुड़ से हल्का ठोक देते हैं, जिससे यह मसाले पर सटीक बैठ जाये। मसाला उतनी ही सतह पर फैलाया जाता है, जिस पर एक बार में सुगमतापूर्वक ईंटें लगी जा सकें (चित्र 1.22)।

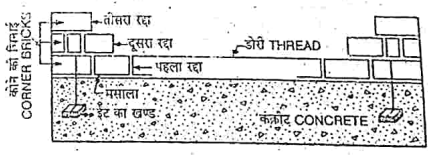

चित्र 1.22–ईंट-रद्दे लगाने की विधि

civilguruji.net

(iii) दूसरा रद्दा लगाना—चिनाई में ईंटों का दिल्ला या डिब्बी (Frog) ऊपर को रखी जाती है और उसमें अच्छी प्रकार से मसाला भर दिया जाता है ताकि दोनों रद्दों में उचित अभिलाग (पकड़) बन जाये। दीवार की मोटाई जब एक ईंट से अधिक हो, तो पहले सामने तथा पीछे की फलकों पर ईंटें लगायी जाती हैं और बाद में भरत (Hearting) में चिनाई की जाती है।

पहले रद्दे के पूर्ण हो जाने पर उसके ऊपर मसाले की परत फैलाकर पहले सिरों पर ईंटें लगायी जाती हैं, फिर पहले रद्दे की भाँति, डोरी तानकर, शेष लम्बाई में ईंटें लगाते हैं। कोनों पर सर्वप्रथम दो-तीन रद्दों की ऊँचाई में निर्माण करके तथा सिधाई चैक करके कार्य में तेजी लायी जा सकती है। इसी प्रकार ऊपर से अन्य रद्दे भी लगाये जाते हैं।

(iv) चाल (Bond) स्थापित करना—चिनाई में ऊर्ध्वाधर जोड़ों को एक सतत रेखा पर नहीं आना चाहिये, क्योंकि इसके कारण उस रेखा पर दीवार के फट जाने की सम्भावना रहती है। अत: सभी ऊर्ध्व जोड़ों को आगे-पीछे किया जाता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये चिनाई में चाल (बाण्ड) अपनाना आवश्यक है।

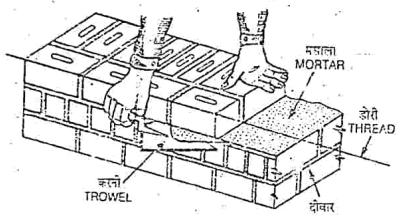

चित्र 1.23–ईंट चिनाई ऊपर उठाना।

(v) पाड़ लगाना—जब दीवार 1·5 मीटर ऊपर उठ जाये तो भूमि पर खड़े होकर दीवार का निर्माण कठिन पड़ता है। अत: बल्लियाँ गाड़कर और उस पर पटरे लगाकर पाड़ (Scaffolding) बाँधी जाती है, जिसके ऊपर चढ़कर निर्माण कार्य ऊपर उठाया जाता है। पाड़ पर्याप्त दृढ़ होनी चाहिये ताकि वह कारीगरों तथा मैटीरियल का भार सम्भाले रखे।

(vi) जोड़ों की सफाई—चिनाई कार्य जैसे-जैसे ऊपर उठता जाये, दीवार की बाहरी व भीतरी फलकों के जोड़ों को 15-20 mm गहराई तक करनी से साफ करते जाना चाहिये, ताकि ढीला-उभरा हुआ मसाला छूट जाये। ऐसा करने पर, दीवार पर बाद में प्लास्तर/टीप करने में आसानी रहती है और इसको पकड़ बन जाती है।

(vii) तराई (Curing) करना—नये चिनाई कार्य पर सात दिन तक पानी छिड़क कर तराई की जाती है। इससे चिनाई की सामर्थ्य में बढ़ोत्तरी होती है।

प्रश्न 18—चिनाई में चाल या बांड का क्या अर्थ है? चाल के क्या उद्देश्य हैं?

उत्तर—

चिनाई में चाल या बांड
(Bond in Masonry)

ईंटों या पत्थरों को दीवार में टिकाने की कला को चाल या बांड कहते हैं। इस कला का ज्ञान रखने वाला ही चिनाईकार (Masnon or Brick Layer) कहा जा सकता है। चाल एक ऐसी व्यवस्था है जिससे दीवार के ऊर्ध्वाधर जोड़ों की सततता (Continuity) स्वयं ही भंग हो जाती है और चिनाई खण्ड एक-दूसरे से सटे रहते हैं। क्योंकि ईंटों का एक मानक साइज होता है; अत: चाल न अपनाने पर दीवार के उदग्र जोड़ एक सीधी सतत रेखा पर आ जाते हैं और दीवार कमजोर पड़ जाती है। अत: ईंट चिनाई में बांड का महत्त्व है। बांड रहित चिनाई शीघ्र धराशायी हो जाती है।

चाल (बांड) के उद्देश्य–चिनाई में बांड (चाल) अपनाने से

(i) क्रमागत रद्दों के ऊर्ध्वाधर जोड़ निरन्तर न होकर आगे-पीछे हो जाते हैं। अगर यह जोड़ एक रेखा पर सतत आ जाये तो दीवार उस रेखा पर दो भागों में फटकर गिर सकती है।

(ii) दीवार पर आने वाला भार (छतों, फर्शों आदि से) एक बिन्दु पर केन्द्रित न होकर दीवार की पूरी लम्बाई पर वितरित हो जाता है।

(iii) नींव पर भार समान रूप से वितरित होता है जिससे नींव का कोई भाग अति-भारित नहीं हो पाता है और नींव सुरक्षित बनी रहती है।

(iv) चाल-युक्त चिनाई की दीवार देखने में सुन्दर लगती है।

(v) चाल (बांड) अपनाने से दिवार पर एक ही समय में कई राज मिस्त्री (Masons) कार्य करते हुए चिनाई को ऊपर उठा सकते हैं। क्रमागत रद्दों के ऊर्ध्वाधर जोड़ों की निरन्तरता स्वयं ही भंग होती रहती है।

प्रश्न 19—चाल के प्रकार या उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—

चाल की प्रकार तथा उपयोगिता
(Types of Bond and Their Use)

ईंट चिनाई में प्रयोग होने वाले बांड निम्नलिखित हैं। यह अत: ध्यान देने की है कि ईंट चिनाई में जोड़ का अधिक महत्त्व है, क्योंकि ईंटें एक ही माप की होती हैं। पत्थर खण्ड क्योंकि छोटे-बड़े माप के होते हैं, अत: पत्थर चिनाई में उदग्र जोड़ों की निरन्तरता बड़ी आसानी से स्वत: ही भंग होती रहती है।

(1) स्ट्रेचर या पट्टी चाल (Stretcher or Stretching Bond)
(2) हैडर या तोड़ा चाल (Header or Heading Bond)
(3) इंगलिश या अंग्रेजी चाल (English Bond)
(4) फ्लेमिश चाल (Flemish Bond)
(5) सिरछी या आड़ी चाल (Raking Bond)
(6) उद्यान दीवार की चाल (Garden Wall Bond)
(7) टेढ़ी-मेढ़ी चाल (Zig-Zag Bond)।

प्रश्न 20—अंग्रेजी चाल व फ्लेमिश चाल की तुलना कीजिए। *(UPSTE 2003)*

उत्तर—

अंग्रेजी चाल व फ्लेमिश चाल में तुलना

दोनों चालों की तुलना निम्नलिखित है—

क्र०सं०	अंग्रेजी चाल (English Bond)	फ्लेमिश चाल (Flemish Bond)
1.	**पहचान**—अंग्रेजी चाल में यदि एक रद्दे में हैडर दिखायी देते हैं तो दूसरे (ऊपर के) रद्दे में आवश्यक रूप से स्ट्रेचर होंगे।	फ्लेमिश चाल में एक ही रद्दे में हैडर तथा स्ट्रेचर बारी-बारी से लगाये जाते हैं।
2.	**सुगमता**—यह एक सरल चाल है। मादा डेली को छोड़कर, सभी ईंटें बगैर तोड़े अपने मूल आकार में प्रयोग की जाती हैं।	यह चाल अंग्रेजी चाल से कठिन पड़ती है। इसमें अद्धों (Bats) का प्रयोग काफी करना पड़ता है, जिसके लिये ईंटों को काटना-तोड़ना पड़ता है।
3.	**निर्माण काल**—अंग्रेजी चाल में दीवार कम समय में बन जाती है। कारीगर का हाथ रुकता नहीं है।	ईंटों को बार-बार तोड़ने के लिये चाल को रोकना पड़ता है, अत: चिनाई में अधिक समय लगता है।

4.	**सामर्थ्य**—यह चाल फ्लेमिश चाल से अधिक मजबूत होती है।	इस चाल की सामर्थ्य कम होती है। $1\frac{1}{2}$ व $2\frac{1}{2}$ ईंट मोटी दीवारें, भीतरी भाग में, अक्षों के प्रयोग के कारण कमजोर रह जाती है।
5.	**जोड़ भंगता**—अंग्रेजी चाल में ऊर्ध्वाधर जोड़ों की एक सतत रेखा पर आने की सम्भावना नहीं होती। सभी लदम जोड़ स्वतः ही आगे-पीछे हो जाते हैं।	फ्लेमिश चाल में ऊर्ध्वाधर जोड़ों की निरन्तरता भंग करने के लिये अधिक ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि एक ही रद्दे में हैडर-स्ट्रेचर लगाने पड़ते हैं।
6.	**चौकसी**—अंग्रेजी चाल में अधिक सतर्कता की आवश्यकता नहीं रहती। अतः एक साधारण कारीगर भी निर्माण कार्य तेजी से कर लेता है।	फ्लेमिश चाल में अधिक चौकसी चाहिये। कुशल कारीगर ही यह चिनाई कर पाते हैं।
7.	**दीवार मोटाई**—इस चाल में दीवार किसी भी मोटाई में बनायी जा सकती है। दीवार की मजबूती समान बनी रहती है।	इकहरी फ्लेमिश चाल, एक ईंट मोटी दीवार या इससे कम के लिये नहीं अपनायी जा सकती।
8.	**सुन्दरता**—यह धारणा है कि अंग्रेजी चाल देखने में इतनी सुन्दर नहीं लगती, जितनी फ्लेमिश चाल।	इस चाल में दीवार की फलकें अधिक आकर्षक बनी पड़ती है, यदि इन पर प्लास्टर न किया गया हो।
9.	**निर्माण व्यय**—इस चाल में मेटीरियल छड़ा देकर का अवसर नहीं है, अतः चिनाई सस्ती पड़ती है।	यह चाल अंग्रेजी चाल से महँगी पड़ती है। ईंटों की अक्षों के रूप में छेड़ने में ईंटों का नुकसान होता है। समय भी अधिक लगता है।
10.	**प्रयोग**—इस देश में सभी सामान्यतः तथा सार्वजनिक निर्माण में अंग्रेजी चाल अपनायी जाती है।	सामान्यतः फ्लेमिश चाल नहीं अपनायी जाती। इसका उपयोग सीमित विशेष की स्थिति पर किसी करती है।

प्रश्न 31—पत्थर चिनाई व ईंट चिनाई की तुलना कीजिये।
उत्तर— पत्थर चिनाई तथा ईंट चिनाई की तुलना (UPSSSC 2006)

(Comparison of Stone and Brick Masonry)

क्रमांक	पत्थर की चिनाई	ईंट की चिनाई
1.	**चिनाई खण्ड**—पत्थर के खण्डों/पाटों की कोई समान माप नहीं होती। यह बेढंगे, कटे-छंटे तथा ढले हुए हो सकते हैं।	ईंट निर्माण की ऐसी विधि है जिसमें समान, समतल तथा कोने तीखे होते हैं।
2.	**उपलब्धता**—पत्थर प्रकृति में सरलता से उपलब्ध है, परन्तु इसको खानों में निकालना तथा पहाड़ काटना कठिन पड़ता है।	ईंट प्रकृति में उपलब्ध नहीं है। इनको पाथना तथा भट्ठों में पकाना पड़ता है, जिसके लिये काफी समय लगता है।
3.	**दीवार की मोटाई**—पत्थर की दीवार 35 cm से कम मोटी नहीं बनायी जाती। अतः यह दीवारें पर्याप्त स्थान घेर लेती हैं।	ईंट की दीवार आधी ईंट (10 cm) मोटी तक बनायी जा सकती है। अतः दीवारें न्यूनतम स्थान घेरती हैं।
4.	**हस्तन**—पत्थर भारी होते हैं। उनको उठाकर दीवार में टिकाने में कठिनाई आती है।	ईंटें अपने मानक माप के कारण पर्याप्त हल्की तथा सुहस्त होती हैं। इनको आसानी से उठाकर दीवार में रखा जा सकता है।

5.	**कारीगरी**—चिनाई के लिये कुशल कारीगरों की आवश्यकता पड़ती है।	एक साधारण मेसन भी सन्तोषजनक चिनाई कर लेता है।
6.	**निर्माण अवधि**—पत्थरों को काटने-छाँटने, गढ़ने तथा दीवार में सटीक बैठाने के लिये काफी समय लगता है।	ईंटों को घड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती। ईंट चिनाई, पत्थर चिनाई की तुलना में शीघ्र बन जाती है।
7.	**चाल**—पत्थर चिनाई में कोई मानक चाल अपनाने में परेशानी होती है, क्योंकि सभी पत्थर अलग-अलग माप के होते हैं। हैडर-स्ट्रेचर में अन्तर कम रह पाता है।	ईंट चिनाई के लिये कोई भी मानक चाल अपनायी जा सकती है। चाल अपनाने से कार्य शीघ्र पूरा होता है और निर्माण चित्र पूर्ण होता है।
8.	**जोड़**—इस चिनाई में सभी जोड़ों की समतल मोटाई प्राप्त करना कठिन पड़ता है।	ईंटों के मानक माप के कारण, चिनाई के जोड़ समान तथा पतले रखे जा सकते हैं।
9.	**मसाले की खपत**—पत्थर की चिनाई में रिक्ति अधिक होने के कारण मसाले की खपत अधिक होती है।	मसाले की खपत कम होती है। चाल के अनुसार भाग में कोई रिक्ति नहीं रहने पाती।
10.	**सामर्थ्य**—पत्थर चिनाई की सामर्थ्य, ईंट चिनाई से अधिक होती है।	ईंट चिनाई की सामर्थ्य कम होती है।
11.	**सतह उपचार**—पत्थरों की आकृतिक पृष्ठरचना तथा विभिन्न रंगों के कारण, दीवार पर प्लास्टर करने की आवश्यकता नहीं है। जोड़ों के टीप ही पर्याप्त है।	ईंटों की दीवार पर एकसार करना पड़ता है ताकि ईंटों व चिनाई के भेद छुप जायें और दीवार पर सजाई-पुताई हो सके।
12.	**फीनिश योग्यता**—पत्थर सीधान को काट प्रकाश करते हैं। यह विशेष रूप में सभी काटे पत्थरों के लिये योग्य है।	ईंटों की दीवारें तथा कार्य फीनिश सौन्दर्य एवं सुन्दर होते हैं। अतः स्थानाभाव, अभिलक्षण उपयोग में यह निम्न श्रेणीकरण नहीं होती।
13.	**अग्नि सह**—यह चिनाई कम अग्नि सह होती है। सीधों आने के कारण से पत्थर विघटन जाता है।	ईंट चिनाई, पत्थर चिनाई की तुलना में अधिक अग्नि सह होती है। उच्च ताप पर भी यह चिनाई उपयोगी बनी रहती है।
14.	**अवशोषण**—यह चिनाई जल्दी अधिक ग्रहण करती है।	ईंट चिनाई जल्दी कम ग्रहण करती है।
15.	**आयु**—पत्थर चिनाई का आयु बहुत अधिक होती है।	ईंट चिनाई की आयु, पत्थर चिनाई से कम होती है।
16.	**लागत**—यह एक महँगी चिनाई है, विशेष तौर पर मैदानी क्षेत्रों जहाँ पत्थर आसानी से उपलब्ध नहीं होता है।	ईंट चिनाई, पत्थर चिनाई से पर्याप्त सस्ती पड़ती है। निर्माण स्थल के निकट ही ईंट पकाने के लिये भट्टा लगाया जा सकता है।
17.	**उपयोगिता**—पत्थर चिनाई भारी तथा बड़ी संरचनाओं जैसे बाँध, सेतु, गोदी निर्माण, प्रकाश स्तम्भ आदि के लिये अधिक उपयुक्त है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसका उपयोग अधिक है।	यह चिनाई सामान्य भवनों, विशेष तौर पर आवासीय भवनों के लिये उत्तम है। मैदानी क्षेत्रों में जहाँ भट्टे लगाकर ईंट तैयार की जा सकती हैं, इसका प्रचलन अधिक है।

निष्कर्ष—उपरोक्त तुलनात्मक चर्चा से यह निष्कर्ष निकलता है कि जहाँ अच्छी क्वालिटी का पत्थर सुगमता से तथा सस्ती दरों पर उपलब्ध है (जैसे पर्वतीय क्षेत्रों में), पत्थर की चिनाई ठीक है। ईंटों की चिनाई ऐसे क्षेत्रों में, जहाँ ईंटें बनाने तथा पकाने के लिये भट्टे लग सकते हैं, अपनायी जा सकती है। आवासीय भवनों के लिये ईंट-चिनाई तथा भारी इन्जीनियरी कार्यों के लिये पत्थर की चिनाई, सामर्थ्य, आयु आदि की दृष्टि से उत्तम रहती है।

civilguru.net

प्रश्न 22—चिनाई में काम आने वाले प्रमुख औजारों के नाम बताइये। *(UPBTE 2005)*

उत्तर— चिनाई के औजार (Masonry Tools)

चिनाई में काम आने वाले मुख्य औजार निम्न हैं—

(1) कुदाल (Pick Axe)—यह खुदाई के काम आती है।

(2) मोटा हथौड़ा—यह पत्थर तुड़ाई तथा मोटी गढ़ाई के काम में आता है।

(3) हथौड़ा (कच्ची गढ़ाई का)—यह प्रारम्भिक गढ़ाई के काम आता है।

(4) गुनिया (Mason Square)—यह समकोण लगाने के काम आती है।

(5) छेनी (Chisel)—यह पत्थर की घड़ाई के काम आती है। ये कई प्रकार की होती हैं।

(6) करनी या कत्नी (Trowel)—यह मसाला उठाने, फैलाने तथा चिनाई के जोड़ बनाने में काम आती है।

(7) साहुल (Plumb Bob) तथा साहुल पट्टी—यह दीवारों के ऊर्ध्वाधर फलक की सिधाई चैक करने के काम आती है।

(8) लाईन और पिन (Line and Pin)—यह क्षैतिज रहों को सिधाई में लगाने के काम आता है।

(9) स्प्रिट लेवल या तलमापी (Sprit Level)—इससे क्षैतिज धरातल की जाँच की जाती है।

(10) बिसौली या बसूली (Brick Hammer)—यह ईंटों को काटने व चिनाई के काम में आती है। इसका एक सिरा चौकोर तथा दूसरा पतला व धारदार होता है।

(11) दो-फुटा (Folding Foot Rule)—यह दीवार नापने के काम आता है।

(12) पाटा (Straight Edge)—यह चिनाई को सीधा करने के काम आता है। यह लगभग एक मीटर लम्बा होता है और लकड़ी की आयताकार पट्टी से बनाया जाता है।

प्रश्न 23—विभाजक दीवार क्या होती है? यह क्यों बनायी जाती है? उत्तर स्पष्ट कीजिये।

उत्तर—विभाजक दीवार—दो कक्षों के बीच की सांझी दीवार, जो इनके अलग-अलग होने का भाग कराती है, विभाजक दीवार कहलाती है। जब यह छत तक न जाकर, मनुष्य की सामान्य शीर्ष-ऊँचाई से कुछ ऊँची बनायी जाती है, तब यह पर्दा दीवार (Curtain Wall) के नाम से जानी जाती है।

बड़े हाल कमरों को अलमारियों व केबिनों में विभाजित करने के लिये इनका निर्माण किया जाता है। इन दीवारों पर छत के भार के अतिरिक्त कोई अध्यारोपित भार नहीं आता, अत: इन दीवारों की सामान्य दीवारों की भाँति कोई नींव नहीं बनायी जाती है और ये सीधी फर्श के ऊपर से उठा ली जाती हैं। इनकी मोटाई, लम्बाई व ऊँचाई की तुलना में बहुत ही कम रखी जाती है। ये दीवारें लेकर अथवा आवश्यक होने पर समेटी भी जा सकती हैं। एक अच्छी विभाजक दीवार पतली, मजबूत, हल्की तथा टिकाऊ होनी चाहिये। यह कम स्थान घेरे तथा शीघ्रता से बनायी जा सके, एकान्तता रख सके तथा शोर रोधक हो।

बैंकों, रेलवे स्टेशनों, कालेजों, कारखानों, दफ्तरों, चिकित्सालयों, होटलों आदि में अधिकारियों के कक्ष व चैम्बर बनाने के लिये, विभाजक दीवारों का बड़े पैमाने पर निर्माण किया जाता है। ये दीवारें ईंट, लकड़ी, प्लाई, ग्लास, एल्युमिनियम, प्लास्टिक, रेशा बोर्ड इत्यादि अनेक आधुनिक पदार्थों से खड़ी की जाती हैं।

विभाजक दीवार की ऊँचाई कमरे की छत तक रखी जा सकती है, परन्तु यह 2 मीटर से कम नहीं होनी चाहिये। जब केबिनों में प्राकृतिक प्रकाश लेना हो तो विभाजक दीवार दो-ढाई मीटर ऊँची पर्याप्त रहती है।

प्रश्न 24—खोखली दीवार किस लिये बनायी जाती हैं? लिखिये तथा चित्र दें और इसमें [illegible] छिद्रित ईंटों (Air Bricks) की स्थिति दर्शाइये।

उत्तर—खोखली दीवारें—ये दीवारें मध्य भाग में खोखली होती हैं, जबकि साधारण दीवारें पूर्णत: ठोस बनायी जाती हैं। खोखली दीवारें दो फलकों में खड़ी की जाती हैं, जिनके मध्य न्यूनतम 50 cm और अधिकतम 115 mm (CPWD के अनुसार) का खाली स्थान छोड़ा जाता है। खोखली दीवार की बाहरी फलक साधारणत: 10 सेमी (आधी ईंट) मोटी रखी जाती है और अन्दर की फलक की मोटाई दीवार पर पड़ने वाले अध्यारोपित भार के अनुसार रखी जाती है, परन्तु यह 10 सेमी से कम नहीं होनी चाहिये। दोनों दीवारों को आपस में बाँधे रखने के लिये, इनकी लम्बाई-ऊँचाई में उचित अन्तराल पर दीवार-टाई (Wall Ties) लगायी जाती हैं।

खोखली दीवार चित्र 1.24 में दिखायी गई है।

खोखली दीवार के लाभ

इस दीवार के मुख्य लाभ निम्न हैं—

(i) क्योंकि दोनों फलकों के मध्य खाली जगह विसंवाही (Insulation) का कार्य करती है, अत: बाहर से ठण्ड, सीलन, ताप, शोर कमरे के भीतर नहीं आने पाते।

(ii) खोखली दीवारों से बने कमरों पर बाहरी ताप परिवर्तन का प्रभाव कम पड़ता है। यह भवन गर्मी में ठण्डे तथा शरद ऋतु में गर्म रहते हैं।

(iii) इन दीवारों के निर्माण से भवन की आयु बढ़ जाती है, क्योंकि भीतरी दीवारें वायुमण्डलीय दुष्प्रभावों से बची रहती हैं।

उपयोग—खोखली दीवारों का निर्माण अधिकतर ठण्डे तथा पर्वतीय क्षेत्रों में, जहाँ पर वर्षा अधिक होती है, किया जाता है। इस निर्माण से वर्षा व सीलन दीवार के बाहरी फलक तक ही सीमित रहती है, यह कूदकर अन्दर की फलक पर नहीं आ सकती। यह रिक्ति बाहरी ठण्ड को भी अन्दर नहीं आने देती। इसी प्रकार ठण्डे स्थानों में जहाँ कक्ष को गर्म रखने की व्यवस्था की जाती है, यह दीवारें ऊष्मा को बाहर संचरित होने से रोकती हैं। वातानुकूलित भवनों के लिये खोखली दीवारें उत्तम रहती हैं।

खोखली दीवार में बंधकों (शिकंजे) का प्रयोग—खोखली दीवार के दोनों फलकों को आपस में जकड़ने के लिये बन्धक (शिकंजे) (Wall Ties) का प्रयोग किया जाता है। इनके प्रयोग से बाहरी फलक को आलम्बन तथा पार्श्व सामर्थ्य मिलती है और यह पलट जाने से सुरक्षित हो जाती है। दीवार बंधक के लिये धातु की पट्टी या टेरा-कोटा के खोखले ब्लॉक प्रयोग किये जाते हैं। दीवार बन्धक दीवार की लम्बाई की दिशा में 90 cm के अन्तराल पर तथा ऊँचाई में 45 सेमी० दूरी पर लगाये जाते हैं। यह विक्षरी स्थिति (Staggered) में लगाये जाते हैं। दीवार-बन्धक से पानी या सीलन भीतर की दीवार पर नहीं आनी चाहियें।

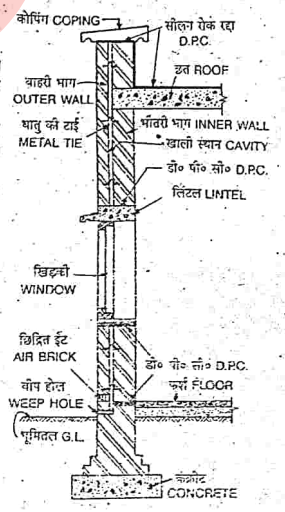

चित्र 1.24—खोखली दीवार (Cavity Wall)

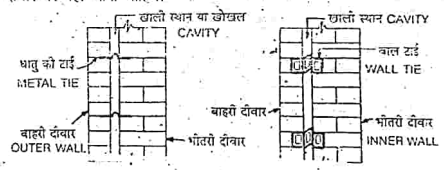

चित्र 1.25 खोखली दीवारों में बन्धकों (Wall Ties) की स्थिति

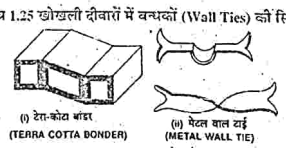

चित्र 1.26-दीवार-बन्धक (Wall Ties)

civilbook.net

प्रश्न 25—विभिन्न प्रकार की विभाजक दीवारों के नाम लिखिये तथा किसी एक का सचित्र वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2006)*

उत्तर—

विभाजक दीवारों की किस्में
(Kinds of Partition Walls)

विभाजक दीवारें निर्माण-पदार्थों के अनुसार निम्न प्रकार की होती हैं—

(i) ईंट अथवा प्रबलित-ईंट की विभाजक दीवार (Brick or Reinforced Brick Partition).

(ii) ईंट-घज्जी की विभाजक दीवार (Brick Nogged Partition).

(iii) कंक्रीट पट्टिया की विभाजक दीवार (Concrete Slab Partition).

(iv) टेराकोटा अथवा कंक्रीट ब्लाकों की विभाजक दीवार (Terra-Cotta or Concrete Blocks Partition).

(v) लकड़ी की विभाजक दीवार (Timber Partition).

(vi) एस्बेस्टस सीमेंट अथवा जस्ती चादरों की विभाजक दीवार (Asbestos or G.I. Sheets Partition).

(vii) फाइबर-बोर्ड की विभाजक दीवार (Fibre Board Partition).

(viii) धातु की लेथ पर प्लास्टर-युक्त विभाजक दीवार (Metal Lath & Plastered Partition).

(ix) कॉच की विभाजक दीवार (Glass Partition).

(x) प्लास्टिक शीट की विभाजक दीवार (Plastic Sheets Partition).

(xi) एल्युमीनियम पैनल की विभाजक दीवार (Aluminium Panels Partition).

विभाजक दीवारों का वर्णन नीचे किया गया है—

ईंट अथवा प्रबलित ईंट चिनाई की विभाजक दीवार

सामान्यतः यह दीवारें आधी ईंट की मोटाई (सभी स्ट्रेचर रहों) में बनायी जाती हैं। चिनाई में प्रथम श्रेणी की ईंटें व सीमेंट मसाला 1 : 3 प्रयोग किया जाता है। पार्श्विक स्थिरता के लिये प्रत्येक चौथे रहे में धातु की पट्टी (Metal Strip) जो 25 mm से 40 mm चौड़ी व 2 मिमी० मोटी होती है, लगाई जाती है अथवा इसके स्थान पर 6 मिमी० व्यास की इस्पात की दो छड़ें चिनाई में दबा दी जाती हैं। मोटी तार की जाली (Wire Mesh) भी प्रबलन के तौर पर लगायी जाती है। प्रवेश व रोशनी के लिये उचित स्थान पर दरवाजे-खिड़कियाँ दी जाती हैं। दीवार को दोनों फलकों पर आवश्यकतानुसार प्लास्टर अथवा टीप की जा सकती है (चित्र 1.27)।

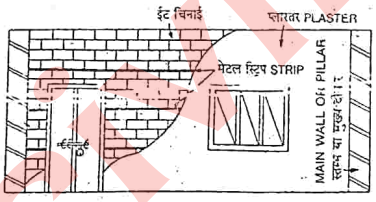

चित्र 1.27–ईंट की विभाजक दीवार

विभाजक दीवार पर कोई ऊपरी भार नहीं आना चाहिये।

प्रश्न 26—इंग्लिश चाल में $1\frac{1}{2}$ ईंट की दीवार के समकोणीय कोने के दो क्रमागत रहों का प्लान में स्वच्छ चित्र कीजिये। *(UPBTE 2007, 13)*

उत्तर—

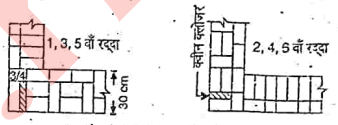

(i) $1\frac{1}{2}$ ईंट मोटी (30 से० मी०) दीवार

चित्र 1.28

प्रश्न 27—भवन निर्माण में प्रयोग होने वाले विभिन्न पत्थरों का वर्णन कीजिये। उनके उपयोगों का वर्णन करें जो उन्हें निर्माण में उपयुक्त बनाते हैं। *(UPSTE 2010)*

उत्तर—भवन निर्माण में प्रयोग होने वाले पत्थर मुख्यतया निम्नलिखित हैं—

(i) ग्रेनाइट—इसका प्रयोग उच्च श्रेणी के भवनों की फेसिंग व रसोई स्लैबों में किया जाता है। यह बहुत कठोर होता है तथा इस पर अच्छी पॉलिश की जाती है।

(ii) लेटराइट—इसके प्रयोग से भवनों में स्लैब बनायी जाती है जिनको छतों व फर्शों में प्रयोग किया जाता है। यह भी ग्रेनाइट पत्थर के जैसा ही होता है। इसकी संरचना परतदार होने के कारण इसकी सजावट अच्छी नहीं होती।

(iii) बलुआ पत्थर—इसका भवन निर्माण में बहुत प्रयोग किया जाता है। एसलर, चिनाई एवं अलंकृत कार्यों में प्रयोग करते हैं। सभी ऐतिहासिक भवनों का निर्माण लगभग इसी पत्थर से किया गया है। ये सफेद, भूरा, लाल, पीला व नीला कई रंगों में पाये जाते हैं।

(iv) संगमरमर—उच्च श्रेणी के भवनों के सजावटी व कलात्मक कार्यों में इसका प्रयोग किया जाता है। दरवाजों, खिड़कियों की स्लैबों में आदि में इसका प्रयोग किया जाता है। मारबल एक कठोर व सुन्दर पत्थर है।

(v) ए-लेट—इसका उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों के भवनों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त फर्श टाइलों में किया जाता है। मुख्य उपयोग इसका सील रोक रद्दे में किया जाता है।

(vi) साबुनाईट—इसका प्रयोग सजावटी कार्यों, फर्शों व सीढ़ियों में किया जाता है। यह पत्थर सघन, कठोर व टिकाऊ होता है। यह ग्रेनाइट से अधिक अग्निसह है।

प्रश्न 28—भवन निर्माण में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के मसालों का वर्णन कीजिये। उनके गुण-दोष का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2010, 13)*

उत्तर—भवन निर्माण में प्रयुक्त होने वाले मसाले मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं—

(i) सीमेन्ट मसाला—इस मसाले का निर्माण सीमेन्ट और बालू को 1 : 4, 1 : 5 व 1 : 6 में मिलाकर तैयार किया जाता है। आजकल इस मसाले का उपयोग काफी बढ़ गया है। यह मसाला अधिक सामर्थ्यवान होता है जिससे इसका प्रयोग अधिक ऊँची अथवा बड़ी संरचनाओं के निर्माण में किया जाता है।

सीमेन्ट मसाले के गुण—

(i) सीमेन्ट मसाला हर जगह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

(ii) सीमेन्ट मसाले के प्रयोग से संरचना की सामर्थ्य अच्छी रहती है।

(iii) सीमेन्ट मसाला अन्य मसालों की अपेक्षा वायु मण्डलीय प्रभावों से जल्दी प्रभावित नहीं होता है।

सीमेन्ट मसाले के दोष—

सीमेन्ट मसाले में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं—

civilguru.net

(i) सीमेन्ट मसाले में उपस्थित सभी पदार्थ तो सस्ते होते हैं किन्तु सीमेन्ट अधिक महँगी होती है।

(ii) सीमेन्ट मसाले की बनी संरचनाओं की मरम्मत में धन का व्यय अधिक आता है।

(iii) सीमेन्ट मसाले को तैयार करने तथा उपयोग करने में अधिक सावधानी बरतनी पड़ती है।

(2) चूना मसाला—सीमेन्ट के आविष्कार से पहले चूने का प्रयोग भवन निर्माण में किया जाता था। आज भी इसका उपयोग कहीं-कहीं होता है। चूना मसाला तैयार करने के लिये चूना व सूर्खी का अनुपात 1 : 2 रखा जाता है।

चूना मसाले के गुण—

चूना मसाले के निम्न गुण हैं—

(i) चूना मसाला आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

(ii) यह सीमेन्ट से सस्ता पड़ता है।

चूना मसाले के दोष—

इसके निम्न दोष हैं—

(i) इसकी सामर्थ्य सीमेन्ट मसाले से कम होती है।

(ii) इसका प्रयोग करने (चूना) से पहले बुझाना पड़ता है जिसमें समय अधिक लगता है।

(iii) इसका अनुपात कम या अधिक होने पर (1 : 2) ब्लाडिंग होने लगती है।

(3) मिट्टी-गारे का मसाला—गाँवों में चिनाई के लिये अधिकतर मिट्टी-गारे के मसाले का उपयोग किया जाता है। इसको बनाने के लिये मिट्टी को बारीक तोड़कर पानी की सहायता से घुला लिया जाता है जिससे मिट्टी के कण पानी से संतृप्त हो जाते हैं जिनसे एक लिसलिसापन उत्पन्न हो जाता है जो कि बन्धक का कार्य करने लगता है। इसी को मिट्टी-गारा मसाला कहते हैं।

मिट्टी-गारा मसाले के गुण—

(i) ये मिट्टी से बनते हैं इस कारण ये सस्ते होते हैं।

(ii) इन्हें आसानी से बनाया जा सकता है।

(iii) इन्हें बनाने में कोई परेशानी नहीं होती क्योंकि अधिक पदार्थों की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

मिट्टी-गारा मसाले के दोष—

इस मसाले के निम्नलिखित दोष हैं—

(i) इसके निर्माण में समय अधिक लगता है।

(ii) वर्षा के दिनों में ये मसाले स्वयं संरचना को छोड़ देते हैं।

(iii) इन मसालों की सामर्थ्य चूना व सीमेन्ट मसाले की अपेक्षा कम होती है।

प्रश्न 29—अंग्रेजी बंध में $1\frac{1}{2}$ ईंट की दीवार का स्केच सहित विधि का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2010)*

उत्तर—जब सामने से देखने पर दीवार के एक रद्दे में सभी हैडर तथा उसके ऊपर वाले रद्दे में सभी स्ट्रेचर दिखाई पड़ें तो यह अंग्रेजी चाल कहलाती है।

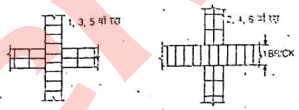

चित्र 1.29

निर्माण विधि—

(i) $1\frac{1}{2}$ तथा $2\frac{1}{2}$ मोटी (ईंट) दीवारों में यदि सामने वाले भाग में किसी रद्दे में स्ट्रेचर दिखते हैं तो उसकी पिछली फलक पर ठीक उसी रद्दे में इसके विपरीत हेडर दिखाई देंगे।

(ii) दीवार की बाहरी व भीतरी फलकों पर सतत ऊर्ध्वाधर जोड़ नहीं होने चाहियें।

(iii) ऊर्ध्वाधर जोड़ों की निरन्तरता भंग करने के लिये Header रद्दे में कोनिया के पश्चात् मादा डेली (Queen Closer) लगायी जाती है।

(iv) अंग्रेजी चाल में किसी भी रद्दे में आधा या पौना खण्डा (Bat) नहीं लगता है।

प्रश्न 30—कुर्सी पद की व्याख्या करें। *(UPBTE 2013)*

उत्तर—कुर्सी या प्लिंथ (Plinth)—भवनों के भीतर वर्षा-जल, बाढ़, धूल मिट्टी व छोटे-मोटे रेंगने वाले कीड़े-मकोड़ों को घुसने से रोकने के लिये भवन का फर्श (Ground Floor) भूमि-तल से कुछ ऊपर बनाया जाता है। फर्श-तल तथा भूमि-तल के बीच दीवारों की ऊँचाई को भवन की कुर्सी (Plinth) कहते हैं। कुर्सी भवन की सुन्दरता बढ़ाती है तथा इसे भव्यता प्रदान करती है। भवन की जल निकासी (Drainage) के लिये भी भूतल फर्श का भूमि से कुछ ऊँचा होना आवश्यक है।

सामान्यतः कुर्सी-तल व फर्श-तल एक ही क्षैतिज तल पर स्थित होते हैं, अन्तर केवल इतना है कि बाहर से उसे कुर्सी-तल (Plinth Level) और भीतर से फर्श-तल (Floor Level) कहते हैं।

civilguru.net

2 नींव (Foundations)

प्रश्न 1—नींव क्या होती है? सचित्र समझाइये। *(UPBTE 2000)*

उत्तर—संरचना के उस भाग को, जो भूमि-तल से नीचे बनाया जाता है और अधिरचना के समस्त भार को नीचे अवमृदा पर स्थानान्तरित करता है, **अध:रचना** (Sub-Structure) अथवा **नींव** (Foundation) कहते हैं। नींव का निचला भाग सदा अवमृदा के सम्पर्क में रहता है।

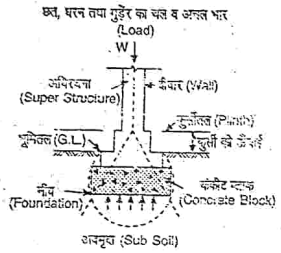

चित्र 2.1—नींव (Foundation)

प्रश्न 2—नींव पर पड़ने वाले भार कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर— **नींव पर पड़ने वाले भार**
(Loads on Foundation)

नींव पर अधिरचना का भार, दीवारों (अथवा स्तम्भों) से होता हुआ नींव तल पहुँचता है। नींव पर पड़ने वाले भार निम्न हैं—

(i) चल भार (Live Load)

(ii) अचल भार (Dead Load)

(iii) वातुभार या पवन दाब (Wind Load)।

इसके अतिरिक्त पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ बर्फ पड़ती है, चल तथा अचल भार के साथ बर्फ का भार (Snow Load) भी गणना में लिया जाता है, परन्तु यदि छत की ढाल 60° से अधिक है तो यह भार छोड़ दिया जाता है। भूकम्प प्रभावित क्षेत्रों में, भूकम्प के कारण पड़ने वाले भार को भी गणनाओं में लिया जाता है।

(i) चल भार (Live Load)—यह संरचना पर आने वाला अस्थायी या चल भार होता है, जिसे अध्यारोपित भार भी कहते हैं। इसमें भवन में रहने वाले व्यक्तियों का भार, फर्श पर अस्थायी रूप से रखे गई वस्तुओं तथा फर्नीचर का भार सम्मिलित रहता है। यह भार भवन के फर्शों, छतों तथा धरनों से होता हुआ दीवारों पर आता है और दीवारों से नींव पर स्थानान्तरित हो जाता है।

भारतीय मानक ब्यूरो (B. I. S.) ने विभिन्न प्रकार के भवनों के लिये अनुमत चल-भार निर्धारित कर दिये हैं। यह भार सारणी 2.1 में दिये गये हैं—

सारणी 2.1–चल भार (Live Load)

	फर्श के प्रकार	न्यूनतम चल भार, kg/m^2 में
(i)	आवास गृह, छात्रावास, अस्पताल के फर्श	200
(ii)	कार्यालयों के फर्श	250–400
(iii)	बैंकों के हाल, कमरे, वाचनालय आदि	300
(iv)	दुकानों, स्कूलों, होटलों के फर्श	400
(v)	वर्कशाप, भण्डार गृहों के फर्श	500 से 1000
(vi)	सामान्य जीनों तथा बालकनी के लिये	300 से 500
(vii)	आवासीय भवनों की चपटी छतें	150

बहुतली भवनों में छत को छोड़कर, उससे नीचे के फर्शों पर ऊपर दिये गये भार का क्रमश: 90%, 80% तथा 70% तक लिया जाता है। ऊपर से चौथी तथा अन्य सभी नीचे की मन्जिलों के फर्शों के लिये छूट की सीमा 30% से अधिक नहीं ली जायेगी।

अचल भार (Dead Load)—यह संरचना का स्थायी भार होता है। फर्श, छत, धरन, मुंडेर तथा दीवारों का स्वयं का भार अचल भार कहलाता है। स्थायी रूप से लगायी गई मशीनों तथा स्थिर फिटिंग के भार को भी इस भार में जोड़ लिया जाता है। यह भार भी दीवारों तथा स्तम्भों से होता हुआ, नींव पर संचारित हो जाता है। इसमें नींव का भार भी सम्मिलित कर लिया जाता है।

मुख्य चिनाइयों का भार सारणी 2.2 में दिया गया है—

सारणी 2.2–अचल भार (Dead Load)

	चिनाई के प्रकार	चिनाई का भार, kg/m^3 में
(i)	एशलर चिनाई	2640
(ii)	रबल चिनाई	2560
(iii)	ईंट चिनाई	1920
(iv)	सादा डलिंट कंक्रीट	2400
(v)	प्रबलित सीमेंट कंक्रीट	2500
(vi)	चूना कंक्रीट	1920

विभिन्न छतों का भार सारणी 2.3 में दिया गया है—

सारणी 2.3–छतों का भार (Weight of Roofs)

	छत के प्रकार	छत का भार, kg/m^2
(i)	कड़ीदार चपटी छतें (टाइल एक परत में), मिट्टी के फुसके सहित	340
(ii)	जैक-डाट छत (Jack Arch)	700
(iii)	इलाहाबाद टाइलों की ढालू छत (एकल टाइल)	85
(iv)	A.C. Sheeting वाली ढालू छत, कैंची सहित	50
(v)	G.I. Sheeting वाली ढालू छत, कैंची सहित	20

engineering.net

भवन f

1. f

2.4 में दिया गया है—

2.4 पदार्थों के भार (Weight of Material)

खोदा दी	पदार्थ का नाम	भार kg/m^3
	ट (Cement)	1440
(ii)	बुझा हुआ चूना (Slaked Lime)	800 से 1020
(iii)	बालू (Sand) (सूखा)	1600
(iv)	मिट्टी (कुटी हुई) (Soil)	1500 से 2200
(v)	सुर्खी (Surkhi)	1100
(vi)	मूरम (कुटी हुई) (Moorum)	1920
(vii)	लकड़ी (Timber)	640 से 960
(viii)	पत्थर की गिट्टी (Stone Ballast)	1440 से 1920
(ix)	ईंटों की रोड़ी (Brick Ballast)	1010 से 1450
(x)	चूना पत्थर (Lime Stone)	2650
(xi)	ग्रेनाइट पत्थर (Granite)	2800
(xii)	बलुआ पत्थर (Sand Stone)	2400
(xiii)	बिटूमन (Bitumen)	1040
(xiv)	काँच (Glass)	2600
(xv)	इस्पात (Steel)	7850

वायु भार या पवन दाब (Wind Load)—जब चलती हवा संरचनाओं से टकराती है तो वह दीवारों की ऊर्ध्वाधर सतहों तथा तिरछी सतहों पर क्षैतिज दाब (Horizontal Pressure) डालती है, इसे वायु भार के नाम से जाना जाता है। वायु की तेज गति तथा संरचना की अधिक ऊँचाई पर यह भार अधिक घातक होता है। भवनों की छतें, फर्श तथा क्रॉस दीवारें, संरचना को स्थिरता प्रदान करती हैं।

जिन भवनों की कुल ऊँचाई, इसकी प्रभावी चौड़ाई के तीन गुने से कम रहती है, वहाँ पर वायु भार छोड़ दिया जाता परन्तु संरचना की मुख्य दीवारें, फर्शों, छतों व क्रॉस दीवारों से उचित प्रकार से आबद्ध होनी चाहिये।

विभिन्न ऊँचाइयों पर वायु की गति के अनुसार दाब सारणी 2.5 में दिये गये हैं—

सारणी 2.5—[illegible] पवन (Wind Load)

ऊँचाई (मीटर में)	वायु की गति किलोमीटर प्रति घण्टा में	वायु दाब kg/m^2
0	80	40
3	96	60
5	110	75
10	120	90
15	125	105
20	130	110

प्रश्न 3—नींव के विभिन्न कार्य क्या हैं व इसके विफल होने के क्या कारण हैं? ***(UPBTE 2002, 05, 06)***

उत्तर—नींव के विभिन्न कार्य निम्न हैं—

(i) नींव तल पर संरचना द्वारा संचारित भार पूरे क्षेत्रफल पर समान रूप से बाँटना, इससे असमान निपंदन नहीं हो पाता।

(ii) संरचना द्वारा संचारित भार अधिक क्षेत्रफल पर बाँटना जिससे नींव तल पर अधिभार (over loading) नहीं होता।

(iii) संरचना के लिये समतल धरातल उपलब्ध कराना।

(iv) संरचना को भूमि के लिये गहराई में ले जाने से उलटने से रक्षा करना।

नींव के विफल होने के कारण—

(i) नींव का धँसना।

(ii) चिनाई का असमान अवस्थापन।

(iii) संरचना से संलग्न मृदा का क्षैतिज दिशा में सरकना।

(iv) नींव के लिये गृत्ती की नमी में कमी होना।

(v) पार्श्विक दबाव के कारण संरचना का उलटना।

(vi) नींव के नीचे की मृदा का पार्श्व पलायन।

(vii) जलवायु का प्रभाव।

प्रश्न 4—चित्र की सहायता से निम्न को समझाइये। ***(UPBTE 2002)***

(i) ग्रिलेज नींव (ii) रैफ्ट नींव

उत्तर—(i) ग्रिलेज नींव—जब कंक्रीट और इस्पात के स्तम्भों द्वारा संचारित भारों को कम धारण क्षमता वाली मृदा पर रूपान्तरित करना होता है, तब यह नींव बनाई जाती है। जो हल्की व सस्ती होती है इसमें गहरा नहीं खोदना पड़ता। यह दो प्रकार की होती है—

(i) इस्पात ग्रिलेज, (ii) काष्ठ ग्रिलेज

(i) इस्पात ग्रिलेज—इसमें लोहे के गर्डर एक, दो या अधिक स्तरों में एक-दूसरे को समकोण दिशा में रखते हैं। गर्डरों के बीच में 25 mm व्यास के पाईप के टुकड़े, बोल्ट द्वारा लगाये जाते हैं। गर्डरों के बीच में कम-से-कम 8 cm स्थान रखा

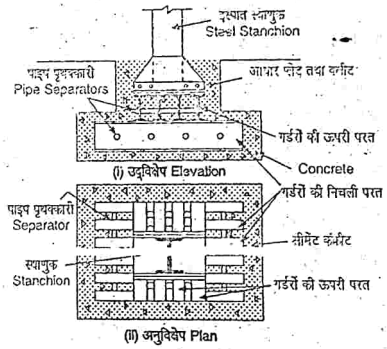

चित्र 2.2—इस्पात ग्रिलेज नींव (Foundation)

civilguru.net

जाता है, जिससे कंक्रीट ठीक प्रकार भरी जा सके। 10 cm का कवर गर्डरों के चारों ओर रखा जाता है। गर्डरों के नीचे 20 cm मोटी कंक्रीट में दाब कर सके ऊपर लोहे, सीमेन्ट कंक्रीट या चिनाई के पाये बनाये जाते हैं। पायों की बीच-बीच परदा वाल बनाकर कमरे बना लिये जाते हैं। देखें चित्र 2.2।

(ii) काष्ठ ग्रिलेज--काष्ठ ग्रिलेज नींव चिनाई की उस दीवार के नीचे दी जाती है जहाँ भार 5·5 टन प्रति वर्ग मीटर अधिक न हो। इसका उपयोग साधारणतया अस्थाई दीवारों के नीचे किया जाता है। देखें चित्र 2.3।

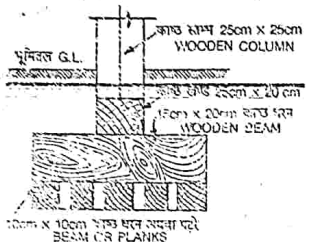

चित्र 2.3–स्तम्भ के लिये काष्ठ की ग्रिलेज नींव

(iii) **रेफ्ट नींव**– ऐसी कहीं, शिथिल तथा जलयुक्त मृदा में यह नींव बनाई जाती है। इस नींव में R.C.C. का स्लैब संरचना के पूरे क्षेत्र में फर्श की तरह दी जाती है। स्लैब में दोनों दिशाओं तथा दोनों तलों (शीर्ष तथा तल) में प्रबलन लगाई जाती है। स्तम्भों पर आ रहे अधिक भार को लेने के लिये प्रतिलोमित (Inverted) मुख्य बीम तथा द्वितीय (Secondary) बीम स्लैब के साथ बनाई जाती है। देखें चित्र 2.4।

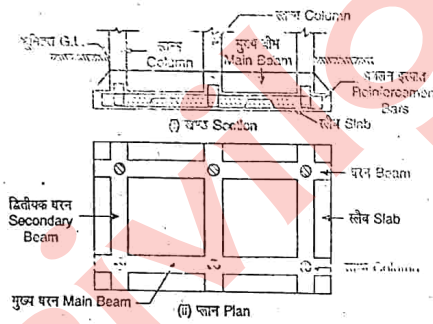

चित्र 2.4–राफ्ट (पटरा) नींव

प्रश्न 5—नींव की क्या आवश्यकता है? भवन व पुल निर्माण में प्रयोग की जाने वाली विभिन्न प्रकार की नींवों व उपयुक्तता के साथ प्रत्येक का पर्णन कीजिये। *(UPBTE 200*

उत्तर—भवन या संरचना का वह भाग जो कुर्सी तल से नीचे होती है, नींव कहलाती है। नींव सदा सख्त व स्थाई मृदा टिकी होनी चाहिये। नींव, संरचना के सम्पूर्ण भार को मृदा पर वितरित करती है तथा संरचना को स्थायित्व प्रदान करती है।

नींव के उद्देश्य—

(i) संरचना के भार को नींव मृदा के विस्तृत क्षेत्र पर वितरित करती है।
(ii) नींव समस्त भार को समान रूप से वितरित करती है।
(iii) अधिरचना को समतल सतह प्रदान करती है।
(iv) अधिरचना को स्थिरता व स्थायित्व प्रदान करना।
(v) भवन संरचना को वायुमण्डलीय प्रभावों व परिवर्तनों के प्रति सुरक्षित रखना।
(vi) मृदा को कटाव से रक्षा करना।

पाद नींव—इस नींव को दीवार से धीरे-धीरे चढ़ाते हुए पुर्जों (Footings) के रूप में विस्तृत क्षेत्र पर फैला दिया जाता है। नीचे वाला पुर्जा का रखा दीवार से दुगना चौड़ा रखा जाता है। अन्तिम रद्दा के नीचे एक कंक्रीट (P.C.C.) की तह लगाई जाती है (चित्र 2.5)।

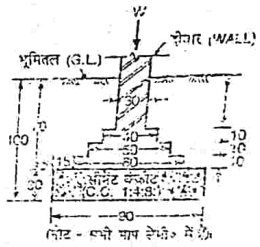

चित्र 2.5

ग्रिलेज नींव—जहाँ भारी संरचना या मशीन का भार संभालना हो तथा मृदा की भार वहन क्षमता अत्यन्त कम हो। इस नींव में लोहे के गर्डरों का उपयोग होता है। गर्डरों की दो तह एक-दूसरे के लम्बवत् लगाई जाती है। अन्त में एक जोड़ी स्थूणा को लगाकर पूरी नींव को कंक्रीट के ब्लाक में रखा जाता है। (चित्र 2.6)।

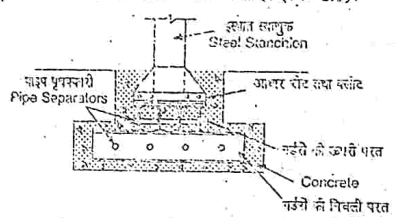

चित्र 2.6

रैफ्ट नींव—यह नींव स्लैब के रूप में सम्पूर्ण संरचना के नीचे पूरे क्षेत्रफल को ढकती है। इस पर उल्टी धरनें 90° पर डाल दी जाती हैं। यह नींव कमजोर व दलदली मृदा पर अत्यन्त उपयोगी होती है। इस नींव से संरचना का बैठाव एक समान होता है। (चित्र 2.7)।

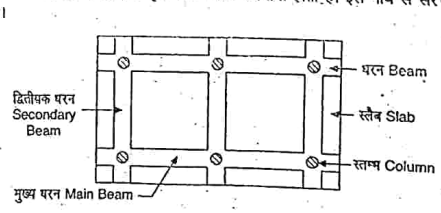

चित्र 2.7

भवन निर्माण में प्रयोग की जाने वाली निम्न नीवों को बनाया जाता है—

1. विस्तृत पाद नींव, 2. ग्रिलेज नींव, 3. परिल नींव, 4. रेफ्ट नींव, 5. उल्टी डाट नींव।

प्रश्न 6—नींव की निशानबन्दी करने की विधि को समझाइये। *(UPBTE 200*

उत्तर—नींव की निशानबन्दी—नींव को खोदने से पहले निशानबन्दी जरूर करनी चाहिये ताकि सही माप में नींव खोदा व बनाया जा सके। इसको करने के लिये सबसे पहले दीवार की मध्य रेखा को भूमि पर बनाया जाता है। फिर बा दीवारों की मध्य रेखा से एक मीटर की दूरी पर नींव को चौड़ाई व दीवार को खसकों की चौड़ाई के बराबर पायों का निश किया जाता है।

अब इन पायों की मदद से सर्वप्रथम नींव की चौड़ाई के बराबर कली डालते हैं और नींव की खुदाई इन कली के निशानों के अन्दर-अन्दर करते हैं। गहराई के लिये ड्राइंग को देखा जाता है। जोकि अलग से ड्राइंग रूप में ड्राफ्टमैन द्वारा या साईट अभियन्ता द्वारा मान्य होती है।

प्रश्न 7—एक अच्छी नींव की क्या विशेषता है? कौन-से कारक नींव के चयन को प्रभावित करते हैं? *(UPBTE 2007,*

उत्तर—अच्छी नींव की विशेषताएँ—ये निम्नलिखित हैं—

1. स्थिरता के लिए नींव तथा अधिरचना के गुरुत्व केन्द्र एक ही ऊर्ध्वाधर रेखा में स्थित होने चाहियें।
2. यह संरचना द्वारा अध्यारोपित चल व अचल भार को अवमृदा पर कुशलता से स्थानान्तरित करे।
3. निर्माण व्यय कम-से-कम आना चाहिये।
4. यह बाढ़, सीलन, कीटाणु तथा वायुमण्डलीय कुप्रभावों से सुरक्षित रहे।
5. नींव की आयु अधिरचना की आयु से कम नहीं होनी चाहिये।

नींव के चयन को प्रभावित करने वाले कारक—ये निम्न हैं—

1. भूमि की प्रकृति,
2. भूमि जल स्तर,
3. मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों की मात्रा,
4. नींव की गहराई,
5. मौसम का प्रभाव,
6. जल भराव या पास में नदी या नहर का होना।

प्रश्न 8—गहरे व उथले नींव का प्रयोग बताने वाले कारणों को समझाइये। खसके द्वार नींव के निर्माण को सरलता से समझाइये। *(UPBTE 2012,*

(1) उत्तर—गहरी नींव—जब नींव की गहराई, इसकी चौड़ाई से अधिक होती है, तो यह गहरी नींव कहलाती है। गहरी के प्रयोग बताने वाले कारण कुछ इस प्रकार हैं—

जब भूमि तल के समीप, वांछित धारण क्षमता वाली मृदा स्थित न हो और नींव पर भारी संकेन्द्रित भार आ रहा नींव को पर्याप्त गहराई तक ले जाया जाता है। जब नींव की, बहत पानी में डूबने की सम्भावना हो (जैसे—नदी, पर बनाये गये पुल आदि) तब भी गहरी नींव अपनायी जाती है।

(2) उथली नींव—जब नींव की गहराई, इसकी चौड़ाई के बराबर या इससे कम हो, तो इसे उथली नींव कहते हैं। नींव के प्रयोग बताने वाले कारण कुछ इस प्रकार हैं—

यह नींव हल्की संरचनाओं के लिये बनायी जाती है अथवा जहाँ अवमृदा की भार धारण क्षमता पर्याप्त है। इस प्रक नींव में अधिरचना के भार को अव:भूमि के बड़े क्षेत्रफल पर फैलाने के लिये, दीवारों को कुर्सी तल से नीचे, दोनों ओर निकालकर अधिक चौड़ा कर दिया जाता है।

खसकेदार नींव का निर्माण—खसकेदार नींव का निर्माण दो रूपों में किया जाता है—

(i) दीवार की खसकेदार नींव (Wall Footing Foundation)। (ii) स्तम्भ की खसकेदार नींव (Column Footing Fundataion)।

(i) दीवार की खसकेदार नींव—**(1) खसके**—पत्थर अथवा ईंट चिनाई की दीवारों की दोनों तरफ तली पर बाहर की ओर खसके लगाकर, नींव की आवश्यक चौड़ाई प्राप्त की जा सकती है। इस व्यवस्था में ईंट या पत्थर के रद्दे को बाहर की ओर बढ़ाकर लगाया जाता है। ईंट चिनाई में प्रत्येक रद्दे को 5-5 सेमी० बाहर को बढ़ाया जाता है; पत्थर की चिनाई में खसका 10 सेमी रखा जाता है।

(2) कंक्रीट ब्लॉक—कंक्रीट ब्लॉक के लिये चूना कंक्रीट (1 : 2 : 6) या सीमेन्ट कंक्रीट (1 : 6 : 12) प्रयोग की जाती है।

(3) कुर्सी—दीवार की कुर्सी भूमि तल से कुछ ऊपर रखी जाती है।

(ii) स्तम्भ की खसकेदार नींव—संरचनाओं में भारी संकेन्द्रित भार को वहन करने के लिये स्तम्भ खड़े किये जाते हैं। यह ईंट चिनाई पत्थर चिनाई अथवा प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट के बनाये जाते हैं। क्योंकि इनकी नींव मुख्य दीवार से अलग रखी जाती है। अत: इसे स्वतन्त्र फुटिंग भी कहते हैं।

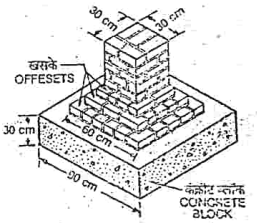

चित्र 2.3

प्रश्न 9—स्थूणा नींव से आप क्या समझते हैं? उन परिस्थितियों को समझाइये जिसमें आप स्थूणा नींव की सिफारिश करेंगे। *(UPBTE 2009, 13)*

उत्तर—पाइल नींव एक महत्त्वपूर्ण नींव है। अत्यधिक भार संरचनाओं और कमजोर अवमृदा के होने पर जहाँ उथली नींव अनुपयुक्त हो जाती है—पाइल नींव ही सन्तोषजनक सिद्ध होती है। बहुतली भवनों तथा भारी इंजीनियरिंग संरचनाओं के लिए पाइल नींव अब बड़े पैमाने पर अपनायी जाती है।

पाइल नींवों की सिफारिश निम्न परिस्थितियों में की जा सकती है—

(1) कमजोर मृदा—जब नींव की मृदा की भार धारण क्षमता अतिक्षीण हो और पर्याप्त गहराई पर जाने पर भी उपयुक्त भार धारण क्षमता वाली अवमृदा स्थित न हो ऐसी दशा में स्थूणा नींव ही उपयुक्त रहती है।

(2) संकेन्द्रित भार—नींव पर अत्यधिक संकेन्द्रित भार आ रहे हों और अन्य प्रकार की नींव जैसे ग्रिलेज व शाफ्ट नींव का प्रयोग व्यवहारिक रूप से कठिन हो तब pile नींव की ही सिफारिश की जायेगी।

(3) जटिल संरचना—जब नींव पर जटिल तथा असमान भार आ रहे हों।

(4) जलग्रस्त भूमि—संरचना के लिए चयन की गई भूमि जल मग्न हो अथवा नदी नाले की ढलान पर या समुन्द्र के किनारे स्थित हों ओर भूमि के निघर्षण की सम्भावना हो।

(5) जलग्रस्त भूमि—जब भूमि के नीचे भू-जलस्तर बड़ी तेजी से घटता-बढ़ता हो

civilguru.net

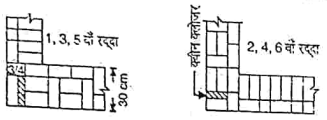

चित्र 2.9—$1\frac{1}{2}$ ईंट मोटी

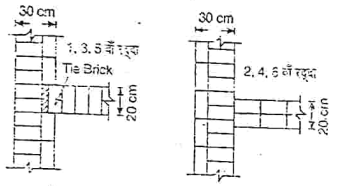

चित्र 2.9—एक ईंट मोटी T-जोड़ (इंग्लिश बांड)

(5) ईंधन महंगा होना—जब प्रस्तावित संरचना के समीप गहरी सीवर लाइन अथवा नहर या नाला बहता हो।

(7) नरम जल भूमि—जब भूमि भराव की मिट्टी से पाटी गयी हो जिसकी भारण क्षमता तथा व्यवहार निश्चित न हो।

प्रश्न 10—अंडरपिनिंग से आप क्या समझते हैं? किन परिस्थितियों में इसका प्रयोग किया जाता है? कोई एक सर्वोत्तम तरीका बताइये। *(UPSETE 2004)*

उत्तर—अन्डरपिनिंग—दीवार की कमजोर नींव को दृढ़ करने, नींव को अधिक गहराई पर ले जाने के लिये तथा दीवार के निचले भाग में आवश्यक फेरबदल करने के लिये अन्डरपिनिंग विधि अपनायी जाती है। इस विधि में दीवार तथा संरचना का भार मिडिल रद्दों को सहारता से पार्श्व की भूमि पर स्थानान्तरित कर दिया जाता है और नींव ब्लॉक संरचना के भार से बिल्कुल मुक्त हो जाता है। अब इसे खोदकर निकाल दिया जाता है तथा वांछित गहराई तक नई नींव डाली जाती है।

अन्डरपिनिंग से संरचना के अन्य भाग प्रभावित नहीं होते हैं और भवन की सुरक्षा बनी रहती है। एक बार में दीवार की नींव का 1 मीटर से $1\frac{1}{2}$ मीटर लम्बाई का भाग खोला जाता है और नींव को वांछित गहराई तक पुनः निर्माण करके इस अंश की लम्बाई ली जाती है।

अन्डरपिनिंग की तीन विधियाँ मुख्य हैं—

(1) केन्टीलीवर विधि (Cantilever Method)।

(2) फुलक्रम विधि (Fulcrum Method)।

(3) ब्लॉक विधि (Block Method)।

ब्लॉक विधि—जलग्रस्त क्षेत्रों में उपरोक्त विधियाँ जो गड्ढा खोदकर पूरी की जाती है, अपनानी कठिन पड़ती हैं, विशेष तौर पर पुलों के पायों के लिये, जहाँ पर बहुत अधिक भार आते हैं। ऐसी स्थिति में पूर्व निर्मित कंक्रीट अथवा इस्पात की पाइलें जमीन में गाड़कर, उनके ऊपर R.C.C. केप लगायी जाती है और दीवार को उन पर आधारित कर दिया जाता है।

अन्डरपिनिंग के स्थान पर, भूमि तल के पास, दीवार में इस्पात की छड़ें प्रबलन के रूप में घुसाकर, दीवार के दोनों ओर पर्याप्त मोटाई में कंक्रीटिंग कर दी जाती है, जिससे दीवार को पार्श्व स्थिरता मिल जाती है और दीवार का भार अधिक बड़े क्षेत्र पर वितरित हो जाता है। यह ब्लॉक विधि अधिक सरल तथा विश्वसनीय है।

प्रश्न 11—मृदाओं की भार धारण क्षमता से आप क्या समझते हैं?

उत्तर—

मृदाओं की भार धारण क्षमता (Bearing Capacity of Soils)

भार धारण क्षमता को निम्न दो प्रकार से व्यक्त किया जाता है—

(1) चरम धारण क्षमता (Ultimate Bearing Capacity)—नींव के नीचे की मृदा पर संरचना का भार आता है। **अवमृदा की चरम भार धारण क्षमता उस अधिकतम भार को कहते हैं जो मृदा बिना विचले, नीचे को धँसे या दरार पड़े, सहन कर सकती है।** यह धारण क्षमता टन प्रति वर्ग मीटर (Tonnes/m^2) में आंकी जाती है। चरम धारण क्षमता से अधिक भार आने पर मृदा नीचे को धँस जायेगी और उस पर खड़ी संरचना धराशायी हो जायेगी।

(2) सुरक्षित धारण क्षमता (Safe Bearing Capacity)—सुरक्षा की दृष्टि से यह अति आवश्यक है कि मृदा को उसकी चरम धारण क्षमता तक कभी भी भारित न किया जाये। अतः चरम धारण क्षमता को सुरक्षा-कारक (Factor of Safety, जिनका मान 2 से 4 लिया जाता है, से भाग देकर मृदा की सुरक्षित धारण-क्षमता निर्धारित कर ली जाती है। नींव के अभिकल्पन के लिये यही सुरक्षित क्षमता ली जाती है।

अतः
$$\text{मृदा की सुरक्षित धारण क्षमता} = \frac{\text{चरम धारण क्षमता}}{\text{सुरक्षा कारक}}$$

मृदा की धारण-क्षमता, मृदा के कणों की सघनता पर बहुत कुछ निर्भर करती है। मृदा का प्रति घन-मीटर जितना अधिक भार होगा, उसकी भार धारण-क्षमता उतनी ही अधिक होगी, अर्थात् मृदा कणों के मध्य जितनी कम रिक्ति होगी, वह उतना ही अधिक चल व अचल भार वहन कर सकेगी।

प्रश्न 12—मृदा की भार धारण क्षमता ज्ञात करने की किसी एक व्यावहारिक विधि का वर्णन कीजिये। *(UPSETE 2005)*

उत्तर—

मृदा की भार धारण क्षमता ज्ञात करना (Testing Bearing Capacity of Soil)

मृदा की भार धारण क्षमता ज्ञात करने की अनेक विधियाँ हैं। इनमें सरल विधि प्लेट-भार परीक्षण (Plate Load Test) है। प्रक्रिया इस प्रकार है—

जिस स्थान पर मृदा की भार धारण क्षमता ज्ञात करनी हो, वहाँ नींव की प्रस्तावित गहराई तक एक उचित माप का गड्ढा खोदा जाता है। गड्ढे की तली को समतल करके, इस पर इस्पात की एक वर्गाकार प्लेट (30 cm × 30 cm से 18 mm मोटी) जिसके ऊपर (30 cm × 30 cm की तथा 1·25 m से 2·5 m ऊँची बल्ली, जो शंकुखात पेंचों (काउण्टरसंक स्क्रूओं) की सहायता से प्लेट से जुड़ी रहती है, रखी जाती है। इस ऊर्ध्वाधर बल्ली के ऊपर एक दृढ़ लोडिंग प्लेटफार्म बनाया जाता है तथा बल्ली को ठीक ऊर्ध्वाधर स्थिति में रखने के लिये चार नत-टेकें लगायी जाती हैं, जो भूमि पर क्षैतिज कड़ियों व पच्चड़ों से जकड़ दी जाती हैं। यह टेकें बल्ली के ऊपर-नीचे सरकने वाले कालर के साथ सम्बन्धित रहती हैं, ताकि बल्ली तथा प्लेट भार पड़ने पर मुक्त रूप से नीचे को धँस सकें।

गड्ढे में, इस्पात-प्लेट से कुछ दूर हट कर लकड़ी की दो खूँटियाँ भी गाड़ दी जाती हैं। लोडिंग प्लेटफार्म के ऊपरी तल से खूँटियों की ऊपरी सतह तक शुद्ध ऊँचाई डेम्पी लेवल की सहायता से ज्ञात कर ली जाती है।

अब लोडिंग प्लेटफॉर्म पर रेत से भरे बोरे, पत्थर, शहतीर अथवा लोहे के गर्डर रखकर भार डाला जाता है और प्लेट की धँसन (अवमृदा में) नोट करते जाते हैं। यह भार 500 kg की दर से बढ़ाया जाता है।

भार पड़ने पर जब मृदा पराभव बिन्दु पर पहुँच जायेगी तो बल्ली सहित सोल प्लेट एकदम अवमृदा में धँस जायेगी। यही चरम भार होगा।

अब इस भार को ज्ञात करके, मृदा की चरम धारण-क्षमता निकाल ली जाती है।

civilguru.net

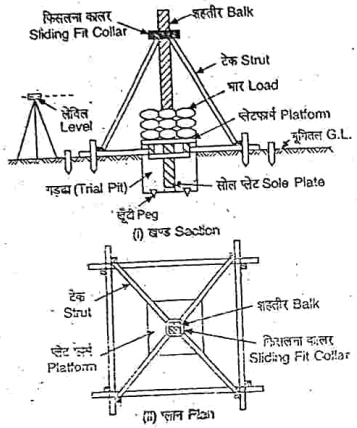

चित्र 2.10–प्लेट-लोड परीक्षण

$$\text{चरण धारण क्षमता} = \frac{\text{कुल भार टन में}}{\text{प्लेट का क्षेत्रफल वर्ग फीट में}}$$

तथा

$$\text{सुरक्षित धारण क्षमता} = \frac{\text{चरम धारण क्षमता}}{\text{सुरक्षा कारक}}$$

प्रश्न 13—कमजोर मृदा की भार धारण क्षमता सुधारने के लिये [illegible] सुझाव देना चाहते हैं? *(UPBTE 200*

उत्तर— **कमजोर भृदा की भार धारण क्षमता सुधारने की विधियाँ**
(Methods of Improving Bearing Capacity of Weak Soils)

मृदा की भार धारण क्षमता उसके विभिन्न कणों की समीपता पर निर्भर करती है। कई बार उथली नींव के लिये मृदा भार धारण क्षमता पर्याप्त नहीं होती है। अधिक गहरायी पर नींव ले जाने की अपेक्षा, मृदा की भार धारण क्षमता सुधारने चेष्टा करनी चाहिये। मृदा की धारण-क्षमता को सुधारने के लिये निम्न विधियाँ अपनायी जाती हैं—

(i) अधिक गहरी नींव डालकर—कुछ गहराई पर नीचे की अवमृदा के कण अधिक संहत (Compact) होते हैं अ नींव को और अधिक गहरी ले जाना चाहिये। परन्तु यह उपाय वहीं अपनाया जा सकता है जहाँ भौम जल स्तर काफी नीचे हो

(ii) कुटाई द्वारा—अवमृदा को कूटकर और अधिक संहत कर देना चाहिये। इससे मृदा के कणों की दूरी कम हो इसकी धारण-क्षमता बढ़ती है।

(iii) क्षेत्रफल बढ़ाकर—नींव का क्षेत्रफल बढ़ाने पर, पड़ने वाले प्रति-वर्ग मीटर भार की तीव्रता कम हो जाती है मृदा अपनी सुरक्षित धारण क्षमता की ओर अग्रसर होती है।

(iv) उत्तम जल निकासी द्वारा—मृदा कणों के मध्य में रुके पानी को निकालने से मृदा की संसंजनता बढ़ जाती है। इसके लिये नींव के चारों ओर बाहर की तरफ खुली जोड़ों वाली नाली बना दी जाती है, जिससे मृदा जल का निकास हो सके।

(v) पाइलों द्वारा—नींव के चारों ओर गहरी खूँटियाँ (Piles) गाड़कर व मृदा को फैलने से रोककर, नींव की मृदा को परिरुद्धित किया जाता है, जिससे मृदा की धारण क्षमता बढ़ जाती है। यह पाइलें कंक्रीट, काष्ठ या इस्पात की होती हैं।

(vi) मृदा का सुधार करके—रेत, ग्रेवल या कंकर इत्यादि, कमजोर मृदा में मिलाकर कूट देने पर मृदा की धारण क्षमता बढ़ जाती है।

(vii) ग्रीउटिंग द्वारा—सीमेन्ट मसाला बलपूर्वक नींव की मृदा के कणों में भेजकर (By grouting), नींव की भार-धारण क्षमता में सुधार लाया जा सकता है।

(viii) रसायनों द्वारा—कुछ रसायन जैसे कैल्सियम-क्लोराइड को मृदा में मिलाकर संहनन करने से मृदा की धारण क्षमता में सुधार हो जाता है।

प्रश्न 14—नींव के धँसने के कारण तथा उसकी रोकथाम के क्या उपाय हैं? बताइये। *(UPBTE 2002)*

उत्तर— **नींव के धँसने के कारण तथा उसकी रोकथाम**
(Causes of Settlement of Foundation and its Remedies)

नींव के नीचे बैठ जाने या अवस्थापन से जहाँ नींव विफल हो जाती है, वहाँ उस पर खड़ी की गई अधिरचना भी ठिक नहीं पाती और गिरकर नष्ट हो जाती है। नींव के विफल हो जाने के मुख्य कारण तथा उसके उपाय नीचे दिये जा रहे हैं—

(i) अव-मृदा की धारण-क्षमता से अधिक भार आना—जब नींव के नीचे की मृदा पर उसकी धारण-क्षमता से अधिक भार आता है, तो मृदा का अवस्थापन (Settlement) होता है। इसकी रोक के लिये मृदा पर उसकी सुरक्षित भार-धारण-क्षमता से अधिक भार नहीं डालना चाहिये। बिना सोचे-विचारे भवन के ऊपर अतिरिक्त तल नहीं बनाने चाहियें।

(ii) नींव के नीचे की भूमि का असम अवस्थापन होना—भार पड़ने पर सभी मृदायें (चट्टान को छोड़कर) कुछ न कुछ मात्रा में नीचे दबती हैं। जब तक मृदा का नीचे दबना या अवस्थापन समान रूप से होता रहता है, मृदा संरचना को सम्भाले रखती है। यदि मृदा का यह अवस्थापन सीमा से अधिक और अचानक हो जाये तो नींव में दरारें पड़ जायेंगी और ऊपर की संरचना की सुरक्षा डोल जायेगी।

असम अवस्थापन को रोकने के लिये नींव के पूरे क्षेत्र पर भार का वितरण समान होना चाहिये तथा भार धीरे-धीरे डालना चाहिये ताकि मृदा अपने को अध्यारोपित भार के अनुकूल बनाती रहे। जहाँ नींव पर भार-तीव्रता समान न हो अथवा भिन्न-भिन्न अव-मृदायें अव-भूमि में स्थित हो, तो दीवारों में ऊर्ध्वाधर जोड़ डाल देने चाहियें ताकि एक भाग का अवस्थापन दूसरे भाग को प्रभावित न करे।

(iii) चिनाई का अवस्थापन होना—जब निर्माण में निम्न क्वालिटी की ईंट-पत्थर प्रयोग किये जाते हैं या जोड़ों में अच्छा मसाला ठीक प्रकार से नहीं भरा जाता और सूखने से पहले ही चिनाई पर भार आ जाता है या जोड़ अधिक सिकुड़ जाते हैं और दीवार असम दबती है, जिसके परिणामस्वरूप दीवार तथा नींव में फटान आ जाता है।

इसे रोकने के लिये उत्तम निर्माण तथा सुधरी कार्य-प्रणाली अपनानी चाहिये। चिनाई का मसाला सख्त होना चाहिये तथा सभी दीवारों का निर्माण कार्य एक साथ ऊपर उठाना चाहिये। एक दिन में 1·5 से 2 मीटर से अधिक ऊँची चिनाई नहीं करनी चाहिये तथा चिनाई-कार्य की उचित तराई करनी चाहिये।

(iv) नींव के नीचे की अवमृदा का नमी ग्रहण करना—ग्रीष्म ऋतु में भौम जल तल बहुत नीचे चला जाता है जिसके फलस्वरूप नींव की अव-मृदा के कणों से नमी निकल जाती है और इनमें रिक्ती आ जाती है तथा भार पड़ने पर अव-मृदा नीचे को दब जाती है और नींव में दरारें आ जाती हैं।

जहाँ अव-मृदा की नमी सूख जाने की सम्भावना हो, नींव को अधिक गहरा ले जाना चाहिये अथवा पाइल नींव (Pile Foundation) अपनानी चाहिये। जहाँ पर भौम जल स्तर के मौसम के साथ बहुत अधिक ऊपर-नीचे गिरने/उठने की सम्भावना हो, वहाँ मृदा को बार-बार फैलने व सिकुड़ने से बचाने का उपाय करना चाहिये।

civilguru.net

(v) पार्श्व दाब से दीवारों का झुकना तथा नींव का विफल होना—अधिक वायु-दाब से तथा बाहर निकले हुए (Over-Hanging) अवयवों, झरोकों, महराबों, तिरछी छतों के कारण दीवारों पर पार्श्व-बल कार्य करता है, जो इन्हें झुकने व पलटने की ओर ले जाता है, जिससे नींव के उखड़ने का भय बन जाता है।

नींव के क्षेत्रफल को बढ़ा देने से इसका प्रभाव कम किया जा सकता है। अधिरचना का गुरुत्व-केन्द्र तथा नींव का गुरुत्व-केन्द्र एक ही ऊर्ध्वाधर रेखा पर स्थित होने चाहियें।

(vi) नींव के नीचे से अव-भूमि का खिसक जाना—जब दीवार किसी नदी, नाले या खाई के किनारे पर स्थित हो तो संरचना के भार से नींव के नीचे की अव-मृदा पार्श्व ढलान की ओर खिसकने लग जाती है। इस प्रकार मृदा के नींव से निकल जाने से दीवार तथा नींव उसी दिशा में पलट जाती है और संरचना नष्ट हो जाती है (चित्र 2.11)।

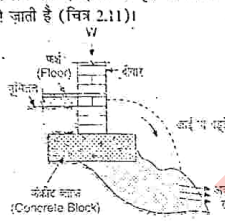

चित्र 2.11–नींव के नीचे से अवभूमि का संरक्षण
(Lateral Escape of Sub-Soil)

ऐसी स्थिति में नदी या खाई की ओर नींव के साथ-साथ शीट-पाइलों की पंक्ति गाड़ देना चाहिये। यह नींव के नीचे की अव-भूमि को परिरुद्ध करके मृदा को ढलान की ओर खिसकने से रोकती है।

(vii) वर्षा के पानी का नींव में घुस जाना—जब भूमि की सामान्य ढाल नींव की ओर हो तो वर्षा का पानी बाहरी दीवारों के पास एकत्रित हो जाता है और रिसता हुआ नींव की अव-भूमि में चला जाता है। पानी के केवल दबाव से ही नींव की ऊपरी मृदा कटकर बह जाती है और नींव ढुल जाती है, जिससे संरचना को हानि पहुँचती है।

अतः भूमि को उचित ढाल देकर अथवा निकास नालियाँ बनाकर वर्षा का पानी दीवारों तथा नींव से दूर ले जाना चाहिये और भवन के चारों ओर प्लिंथ रक्षक (Plinth Apron) बना देना चाहिये।

(viii) पेड़ों-झाड़ियों की जड़ों का नींव में घुस जाना—भवन के अति निकट लगाये गये वृक्षों की जड़ें फैलकर धीरे-धीरे नींव में घुसने लगती हैं और नमी को सोख लेती हैं। इससे नींव के पास गड्ढे पड़ जाते हैं और नींव में दरारें आने लगती हैं। भवन की बाहरी दीवार से वृक्षों की दूरी 8 मी से कम नहीं होनी चाहिये।

प्रश्न 15—संरचनाओं का असमान अवस्थापन कैसे हो जाता है? इसको रोकने के उपाय लिखिये। *(UPSTE 2004)*

उत्तर— संरचनाओं के असम अवस्थापन को रोकने के उपाय
(Methods of Checking Differential Settlement of Structures)

उत्तर—भार पड़ने पर सभी मृदायें (चट्टानों को छोड़कर) कुछ-न-कुछ मात्रा में नीचे अवश्य दबती हैं, जिससे संरचना की विभिन्न दीवारों तथा स्तम्भों का अवस्थापन होता है। जब तक यह अवस्थापन समान रूप से होता है, संरचना की स्थिरता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। कुछ काल के पश्चात् नींव की अव-मृदा को संरचना के भार के अनुकूल बना लेती है और यह अवस्थापन नगण्य मात्र रह जाता है। परन्तु कुछ स्थितियों में संरचना की नींव की मृदा का पूर्णरूप से विश्लेषण नहीं हो पाता अथवा मृदा का व्यवहार अस्पष्ट होता है अथवा विभिन्न प्रकार की मृदायें नींव में प्रकट हो जाती हैं तो संरचना का असम अवस्थापन सम्भव हो जाता है। बिना सोचे-विचारे पूर्व-निर्मित संरचना के किसी भाग पर नया निर्माण करने से भी नींव की मृदा असन्तुलन हो जाता है और उस भाग का अवस्थापन असम हो जाता है।

संरचनाओं के असम अवस्थापन को रोकने के लिये निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहियें—

(i) पूर्व निर्मित संरचना के किसी भाग पर नया निर्माण तब तक नहीं करना चाहिये, जब तक पहले से ही नींव में इनका आवधान न हो।

(ii) भवन की कुल लम्बाई को विभिन्न खण्डों में रखकर निर्माण करना चाहिये तथा 30 से 40 मीटर के अन्तराल पर, पूरे भाग में प्रसार जोड़ (Expansion Joint) डालने चाहियें। यह जोड़ नींव से पैरापिट तक सीधे और साफ छोड़ने चाहियें, ताकि यदि भवन के एक भाग का अवस्थापन होता है, तो शेष भाग प्रभावित न हो।

(iii) संरचना के विभिन्न ब्लॉक (Blocks) एक-दूसरे से अलग, प्रसार जोड़ देकर, स्वतन्त्र रूप से निर्मित करने चाहियें।

(iv) जहाँ असम अवस्थापन की सम्भावना हो, वहाँ दीवारों पर कुर्सी-तल (Plinth Level), लिन्टल-तल (Lintel Level) तथा अन्तश्छद-तल (Ceiling Level) पर प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट की 10 से 15 सेमी मोटी पटिया डालनी चाहिये।

(v) भारी धरनों तथा गर्डरों के सिरों के नीचे प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट अथवा पत्थर की टेम्पलेट (Template) लगानी चाहिये।

(vi) स्लैब का जो भाग दीवारों पर टिका हुआ है उसके नीचे कोलतार का लेप अथवा टार-पेपर (Tar Paper) लगाना चाहिये, ताकि फर्श और छतें स्वतन्त्र रूप से प्रसार या संकुचन ले सकें।

(vii) लम्बे बरामदों की छत-स्लैब में, उचित दूरी पर प्रसार जोड़ डालने चाहियें।

संरचनाओं के असम अवस्थापन पर दीवारों पर ऊर्ध्व अथवा क्षैतिज दरारें (Cracks) प्रकट होने लगती हैं। कुछ दरारें तनी महीने होती हैं, कि उनके प्रसार की दर ज्ञात करने में कठिनाई पड़ती है। ऐसी दरारों पर पतंगी कागज (Rice Paper) चिपका देना चाहिये। यदि दीवार का अवस्थापन जारी रहता है तो कागज उस स्थान पर फट जायेगा।

प्रश्न 16—विभिन्न प्रकार की नींवों के नाम बताइये। *(UPSTE 2002)*

उत्तर— नींवों की किस्में (Types of Foundations)

संरचना के भार तथा अवमृदा की रचना व धारण-क्षमता को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न प्रकार की नींव विकसित की गई जिनका मुख्यतः दो वर्गों के अन्तर्गत अध्ययन किया जाता है—

(a) उथली नींव (Shallow Foundations)

(b) गहरी नींव (Deep Foundations)

(a) उथली नींव (Shallow Foundations)—जब नींव की गहराई, इसकी चौड़ाई के बराबर या इससे कम हो, तो इसे उथली नींव कहते हैं। यह नींव हल्की संरचनाओं के लिये बनायी जाती है अथवा जहाँ अव-मृदा की भार धारण क्षमता पर्याप्त है इस प्रकार की नींव में अधिरचना के भार को अव-भूमि के बड़े क्षेत्रफल पर फैलाने के लिये, दीवारों को कुर्सी तल से नीचे, पैरों और खसकों (Offsets) निकालकर, अधिक चौड़ा कर दिया जाता है। प्रकृति ने भी पतली दीवारों के नीचे पर्याप्त चौड़ा पाँव बनाकर शरीर के भार को अधिक भू-क्षेत्र पर फैला दिया है।

इस वर्ग में निम्नलिखित नींव आती हैं—

(i) खसकेदार या फैलाव-पाद नींव (Spread Footing Foundation)

(ii) ग्रिलेज या जालदार नींव (Grillage Foundation)

(iii) संयुक्त पाद नींव (Combined Footing Foundation)

(iv) सतत पाद नींव (Continuous Footing Foundation)

(v) पटरा या राफ्ट नींव (Raft of Mat Foundation)

(vi) पैड़ीदार या बैंच नींव (Stepped or Benched Foundation)

(vii) प्रास पाद नींव (Cantilever Footing Foundation)

(viii) उल्टी-डाट नींव (Inverted-Arch Foundation)।

(b) गहरी नींव (Deep Foundation)—जब नींव की गहराई, इसकी चौड़ाई से अधिक होती है, तब यह गहरी नींव कहलाती है। जब भूमि तल के समीप, वांछित धारण क्षमता वाली मृदा स्थित न हो और नींव पर भारी संकेन्द्रित भार आ रहे हों, नींव को पर्याप्त गहराई तक ले जाया जाता है। जब नींव की, बहते पानी के कारण, कटने की सम्भावना हो (जैसे नदी-नालों बनाये गये पुल आदि), तब भी गहरी नींव अपनायी जाती है।

गहरी नींव निम्न प्रकार की होती है—

(i) स्थूणा या पाइल नींव (Pile Foundation)

(ii) कूप नींव (Well Foundation)

(iii) कैसून नींव (Caisson Foundation)।

प्रश्न 17—अन्तर स्पष्ट कीजिये— *(UPBTE 2004)*

(i) धारक पाइल (ii) घर्षण पाइल (iii) निर्देशक पाइल।

उत्तर—(i) धारक पाइलें (Bearing Piles)—यह पाइलें अध्यारोपित भार को भूमि से नीचे स्थित कठोर स्तर (Hard Stratum) पर स्थानान्तरित करती हैं। यह एक साधारण स्तम्भ का कार्य निभाती है। यह पाइल काष्ठ, इस्पात अथवा कंक्रीट की बनायी जाती हैं।

धारक पाइलों की भूमि तल से गहराई, नीचे स्थित कठोर मृदा की गहराई पर निर्भर करती है। यह नर्म मृदा के नीचे तक गाड़ी जाती है। धारक पाइलों का परिच्छेद सामान्यत: बड़ा रखा जाता है ताकि भार पड़ने पर इनका व्याकुचन (Buckling) न हो (चित्र 2.12)।

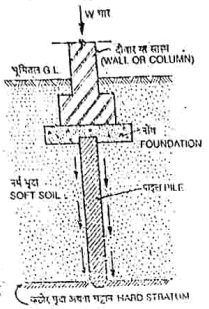

चित्र 2.12–धारक पाइलें

(ii) घर्षण पाइलें (Frictious Piles)—यह पाइलें अध्यारोपित भार को नींव से आस-पास की अवमृदा पर अपनी बाहरी सतह तथा मृदा के मध्य उत्पन्न त्वक घर्षण (Skin Friction) के द्वारा संचारित करती हैं। इस पाइल को लम्बाई कम होती है। परन्तु घेरा बड़ा रखा जाता है, अत: इसको नीचे कठोर स्तर तक ले जाने की आवश्यकता नहीं होती है (चित्र 2.13)।

घर्षण प्रतिरोध को बढ़ाने के लिये (i) पाइल की बाहरी सतह का घेरा बढ़ाया जाता है ताकि इसकी अधिक सतह अवःमृदा के सम्पर्क में आये, (ii) पाइल की बाहरी सतह अत्यन्त ही खुरदरी बनायी जाती है, (iii) पाइल को अधिक गहरा ले जाया जाता है, (iv) पाइलें को पास-पास गाड़ा जाता है।

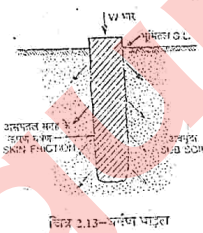

चित्र 2.13–घर्षण पाइल

(iii) निर्देशक पाइलें (Guide Piles)—ये पाइलें कॉफर डैम (coffer Dam), केसून नींव तथा अन्य जलीय संरचनाओं के निर्माण के लिये जमीन या पानी में गाड़ी जाती है। यह निर्माण काल में संरचना की स्थिति का भान कराती है। ये पाइलें कोई ऊर्ध्वाधर भार वहन नहीं करती हैं।

प्रश्न 18—इस्पाती पाइल क्या होती है? वे कितने प्रकार की होती हैं?

उत्तर—

इस्पाती पाइलें (Steel Piles)

ये मुख्यत: भार-वाही (Load Bearing) पाइलें हैं और धारक पाइलों के रूप में इस्तेमाल की जाती हैं। अत्यधिक भारवाहन क्षमता तथा कम गहरी नींव के लिये इस्पाती पाइलें गाड़ी जाती हैं। यह नर्म अथवा कठोर, दोनों प्रकार की भूमि में गाड़ी जा सकती हैं। इस्पाती पाइलों को भूमि में गाड़ना आसान है। इनके टूटने की सम्भावना नहीं होती। यह पाइल काफी महँगी पड़ती हैं।

इस्पाती पाइलें निम्न प्रकार की होती हैं—

1. पाइप की पाइल (Tupe Pile)
2. H-गर्डर की पाइल (H-Type Girder Pile)
3. बक्स पाइल (Box Pile)
4. पेंचदार या स्क्रू पाइल (Screw Pile)
5. चकती या डिस्क पाइल (Disc Pile)

(1) पाइप की पाइल—इस्पात की उचित व्यास की नलिकाओं को पाइलों के रूप में भूमि में धँसा दिया जाता है। पाइप 25 सेमी से 120 सेमी व्यास के तथा 30 मीटर या इससे अधिक लम्बे होते हैं। पाइप के गोलाकार होने के कारण, आसानी से जमीन में धँसाया जा सकता है।

पाइपों का निचला सिरा खुला रखा जाता है अथवा तली पर ढलवाँ लोहे का पादत्र (Shoe) लगाकर बन्द कर दिया जाता है। (चित्र 2.14)।

पाइप के अन्दर की मिट्टी सम्पीडित वायु अथवा पानी के जैट की सहायता से निकाल दी जाती है और इसमें सीमेन्ट कंक्रीट भर दी जाती है।

धारक पाइलों को नीचे कठोर स्तर तक ले जाया जाता है।

(2) H-गर्डर की पाइल—अत्यधिक संकेन्द्रित भारों के लिये आकर के इस्पात के गर्डर भूमि में उतार दिये जाते हैं। यह कठोर भूमि तक ही गाड़े जा सकते हैं। क्योंकि इनका परिच्छेद न्यूनतम होता है अत: इन्हें चलते समय, यह पाइलें आस-पास की अवमृदा व संरचनाओं को कम क्षति पहुँचाती हैं। H-प्रकार की पाइलों को गाड़ना सरल पड़ता है। गर्डरों को संक्षारण से बचाने के लिये, इनके ऊपर कोलतार अथवा अन्य कोई संरक्षण लेप कर दिया जाता है। गर्डरों की तली पर पादत्र लगाने की आवश्यकता नहीं है। पाइलों के शीर्ष पर इस्पात की मोटी प्लेट, साँझी (Cap) के रूप में वैल्ड कर दी जाती है और इसे कंक्रीट में दबा दिया जाता है (चित्र 2.15)।

यह पाइलें अधिकतर धारक-पाइलों के रूप में प्रयोग की जाती हैं। गर्डर की पाइलें 100 मीटर गहराई तक गाड़ी गई हैं।

(3) बॉक्स पाइल—यह पाइल मोटी इस्पातीय प्लेटों को आपसे में वेल्ड में जोड़कर बनायी जाती है और वर्गाकार अथवा बहुभुजाकार आकृति की होती है। इस पाइल को उचित गहराई तक अवभूमि में गाड़कर, इसके भीतर कंक्रीट भर दी जाती है। (चित्र 2.16)।

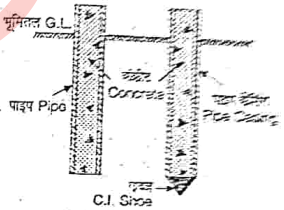

चित्र 2.14–पाइप पाइल

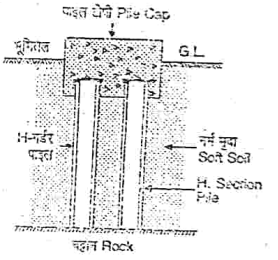

चित्र 2.15–H-गर्डर पाइल

(4) पेंचदार (स्क्रू) पाइल—इस प्रकार की पाइल में ढलवाँ लोहे अथवा इस्पात का बेलन होता (Cylinder) होता है जिसके निचले सिरे पर ढलवाँ लोहे के ब्लेड अथवा स्क्रू बने रहते हैं। घुरे का व्यास 10 सेमी से 30 सेमी तथा ब्लेड का व्यास 50 सेमी से 150 सेमी होता है। घुरे का तली नुकीली अथवा कुंठित (Blunt End) होती है। चित्र 2.17 में विभिन्न प्रकार की स्क्रू पाइलें दिखायी गई हैं।

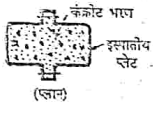

चित्र 2.16–बाक्स पाइल

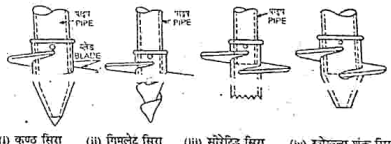

चित्र 2.17–स्क्रू पाइल

civilguru.net

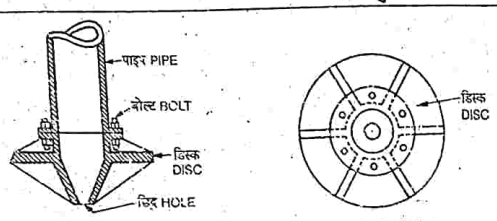

चित्र 2.18–डिस्क पाइल

घुरे का यांत्रिक विधि से घुमाने पर यह पाइल पेंच की भाँति, भूमि में धँसती चली जाती है।

स्क्रू पाइल 6 मीटर गहराई तक ही उपयुक्त है। इस पाइल को गाड़ते समय अवःभूमि में कम्पन आदि उत्पन्न नहीं होते अतः यह पूर्व-निर्मित संरचनाओं के समीप नई नींव डालने में प्रयोग की जा सकती है। यह पाइल नर्म मृदा के लिये अधिक उपयुक्त है।

(3) चक्रती (डिस्क) पाइल—यह पाइल इस्पात के सिलिण्डर की बनी होती है, जिसकी तली के पास इस्पात लोहे की चक्रती (डिस्क) लगी होती है। चक्रती का व्यास 60 cm से 120 cm होता है। चक्रती का बेरा चौड़ा होने के कारण, इस पाइल का धारण क्षेत्रफल अधिक होता है। सिलिण्डर का निचला सिरा टेपर रखा जाता है, ताकि वेधन क्रिया में अरलता बनी रहे (चित्र 2.18)।

डिस्क पाइल को पानी के जैट के द्वारा भूमि में धँसाया जाता है। यह पाइल नर्म मृदा तथा कम गहराई की नींव के लिये उपयुक्त है। इसका उपयोग अधिकतर सामुद्री निर्माण कार्यों में किया जाता है।

प्रश्न 19—इस्पाती पाइलों के गुण दोषों का वर्णन कीजिये।

उत्तर— इस्पाती पाइलों के गुण दोष

(a) गुण—

(i) इस्पाती पाइलों की भार वहन क्षमता अन्य पाइलों से बहुत अधिक होती है। यह 600 से 900 kg/cm² के लगभग अधिकतम तक सुरक्षित है।

(ii) हस्तन तथा गाड़ते समय इनके टूटने/क्षतिग्रस्त होने की सम्भावना कम होती है।

(iii) मौके पर पाइल की लम्बाई बढ़ाना/घटाना सरल है।

(iv) यह पाइल पार्श्व प्रणोद को सहन कर लेती है।

(v) इस पाइल की आयु पर्याप्त होती है। यह पाइलें भूकीटों से नष्ट नहीं होती है।

(b) दोष—

(i) यह पाइल संक्षारण से नष्ट होने लगती है।

(ii) इस्पात की पाइलें अधिक महँगी होती हैं।

(iii) ये पाइलें काफी भारी होती हैं। अतः हस्तन व वहन में कठिनाई आती है।

(iv) गाड़ते समय अवमृदा में कम्पन अधिक उत्पन्न होते हैं।

प्रश्न 20–अच्छे मसाले के संघटकों को समझाइए। अच्छे मसाले का निर्माण करने वाली वस्तुओं के गुण बताइए। *(UPBTE 2*

उत्तर—मसाले के घटक—चिनाई मसाला एक ऐसी लुगदी या सुघट्य पदार्थ है, जो बन्धक पदार्थ में पानी की उचित मात्रा मिलाकर बनाया जाता है। बन्धक पदार्थ जिसे मैट्रिक्स (Matrix) भी कहते हैं, एक सक्रिय पदार्थ है जो मसाले को गुण, शक्ति, सामर्थ्य और आयु प्रदान करता है।

बन्धक पदार्थ में महीन मिलावा जिसे अपमिश्रण (Adultrant) कहते हैं, मिलाकर मसाले के गुणों में सुधार किया जाता है और इसकी लागत को कम किया जाता है। अपमिश्रण, मसाले को सूखने पर सिकुड़ने व फटने से रोकता है।

यह लुगदी जम जाने (Set) पर रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप कठोर हो जाती है और पत्थर या ईंटों का आपस में स्थायी रूप से आबद्ध कर देती है।

(a) बन्धक पदार्थ—मुख्य बन्धक पदार्थ निम्न हैं—

(i) चूना (Lime)—चूने के पत्थर, चक्र या अन्य चूनेदार पदार्थों को भट्ठियों में जलाकर चूना बनाया जाता है। मसाला बनाने के लिये, भारतीय मानक ब्यूरो (I.S.I.) के अनुसार श्रेणी A व B का चूना जिसमें बन्धक गुण उच्च कोटि के होते हैं, प्रयोग करना चाहिये।

(ii) सीमेंट (Cement)—65% चूना पत्थर तथा 35% (लगभग) मृत्तिका के घोल के निस्तापन से सीमेंट बनाया जाता है। सीमेंट में चूने से अधिक बन्धक गुण होते हैं। चिनाई-मसाला में साधारण पोर्टलैण्ड सीमेंट का प्रयोग किया जाता है।

(b) महीन मिलावा या अपमिश्रण—इसके अन्तर्गत निम्न पदार्थ आते हैं—

(i) **बालू** (Sand)—बालू मसाले की सामर्थ्य नहीं बढ़ाता, बल्कि यह मसाले को सिकुड़ने और फटने से रोकता है। यह मसाले का आयतन भी बढ़ाता है, जिससे इसके मूल्य में कमी आती है। बालू के प्रयोग से बन्धक पदार्थ की चकड़ भी कम हो जाती है।

मसाले के लिये साफ, गोल या नोकीले कोनों वाला बालू, जो जैविक अशुद्धियों से मुक्त हो, प्रयोग करना चाहिये। बालू सिल्ट तथा चिकनी मिट्टी नहीं होनी चाहिये। अशुद्ध बालू को प्रयोग से पहले पानी से धो लेना चाहिये।

बालू नदी, समुद्र या स्थानीय खड्डों से निकाला जाता है।

(ii) **सुर्खी** (Surkhi)—अधिक पकी हुई ईंटों के अद्धों को तोड़कर और पीसकर इसका पाउडर बनाया जाता है, जिसे सुर्खी कहते हैं। सुर्खी का, मसाले में महीन मिलावा या अपमिश्रण के रूप में प्रयोग किया जाता है।

सुर्खी, चूने के मसाले के जलीय गुणों तथा सामर्थ्य को बढ़ाने में सहायता करती है। यह चूने के मसाले को जल्द जम जाने में सहायता करती है और सिकुड़ने तथा फटने को रोकती है।

(iii) **राखी या सिंडर** (Ashes or Cinder)—यह भट्ठियों से जले हुये कोयले से प्राप्त होती है। राखी में मिट्टी, जली हुई लकड़ी की राख तथा अन्य कोई पदार्थ मिले हुये नहीं होने चाहियें। यह मसाला भराव बनाने के लिये पानी अवशोषक के रूप में प्रयोग की जाती है।

(c) **जल** (Water)—मसाला बनाने के लिये साफ, अशुद्धियों से रहित पानी का प्रयोग करना चाहिये। जो पानी पीने योग्य है, वह मसाले के लिये भी उपयुक्त है।

सीलरोधन तथा दीमक उपचार

3 (Damp Proofing & Anti-termite treatment in Buildings)

प्रश्न 1—सीलन क्या है? किसी भवन को सीलरोक कैसे किया जाता है? तहखाने में सीलरोक विधि का स्वच्छ चित्र बनाइये। *(UPBTE 2007)*

उत्तर—भवन की छतों, दीवारों तथा फर्श पर जो गीलापन प्रकट होने लगता है, उसे सीलन कहते हैं।

सीलन रोकने के उपाय—

(i) सील रोक परत लगाकर,

(ii) सतह उपचार से,

(iii) समकलित सीलन रोधन से,

(iv) खोखली दीवारें बनाकर।

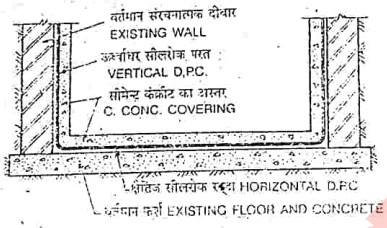

चित्र 3.1–डिस्क पाइल

प्रश्न 2—भवन में सीलन होने के कारणों पर प्रकाश डालिये तथा उनके बचाव के उपाय बताइये। *(UPBTE 2005)*

उत्तर—भवन में सीलन होने के निम्न कारण हैं—

(i) भवन में प्लिंथ लेविल न होने के कारण भवन में सीलन आ जाती है।

(ii) दीवारों के चारों तरफ पानी के भराव से।

(iii) भवनों में पाइप फिटिंग के लीकेज से।

(iv) भवन के छत से पानी आने से।

(v) कमरों की बाहरी दरवाजों पर छज्जे न होने के कारण भवन में सीलन आ जाती है।

भवन में सीलन रोकने के उपाय—

(i) नींव के नीचे की अवमुद्रा से आने वाली सीलन को रोकने के लिये प्लिंथ तल तथा भूमितल के बीच [illegible] पदार्थों का रद्दा लगाया जाना जरूरी है जिसे सील रोक रद्दा कहते हैं।

(ii) भवन की बाहरी दीवारों पर लगातार वर्षा जल पड़ने से अवशोषण द्वारा दीवारों में नमी आ जाती है। इसको दूर करने के लिये बाहरी दीवारों पर उचित ऊँचाई पर जल रोधक पदार्थों का प्लास्टर करें।

(iii) मुंडेरों से नमी रोकने के लिये ऊपर ईंट या पत्थर की कापिंग लगायें कापिंग की ऊपरी सतह भी बाहर की ओर ढलवाँ बनायें।

(iv) छतों से आने वाली सीलन को रोकने के लिये छत में उचित ढाल दें तथा पर्याप्त मात्रा में परनाले लगायें। छत पर टार-बेल्ट विटूमन आदि की परत बिछायें।

(v) जलवायु से होने वाली सीलन को रोकने के लिये भवन का दिक्विन्यास सही होना जरूरी है।

प्रश्न 3—भवन में सीलन से प्रभावित होने के कौन-कौन से चिन्ह दृष्टिगत होते हैं? *(UPBTE 2003)*

उत्तर—सीलन—भवन की दीवारों, फर्शों व छतों पर जो गीलापन प्रकट होने लगता है, उसे सीलन कहते हैं।

सीलन के प्रतिकूल प्रभाव

(1) चिनाई पर—सीलन वाली दीवारों की ईंटों पर सफेद-सफेद निशान हो जाते हैं, जो रासायनिक क्रिया करके चिनाई को नष्ट कर देते हैं।

(2) प्लास्टर पर—सीलन से प्लास्टर नम हो जाता है और छूटकर नीचे गिर जाता है।

(3) सफेदी पुताई पर—सीलन से पुताई व डिस्टेम्पर नष्ट हो जाते हैं और पपड़ी की शक्ल में उखड़ने लगते हैं।

(4) फर्श पर—सीलन से फर्श की ऊपरी सतह खराब हो जाती है तथा फर्श पर रखी वस्तुयें भी सली जाती हैं।

(5) लकड़ी कार्य पर—सीलन के दरवाजे खिड़कियों को चौखटें पतले तथा अन्य फिटिंग टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती है और गलकर गिर जाती है।

(6) धातु की फिटिंग पर—लोहे की फिटिंग पर जंग लग जाता है।

(7) विद्युत फिटिंग पर—बिजली फिटिंग की बैटन, तारें आदि गलकर गिर जाती हैं।

(8) पेन्ट कार्य पर—पेन्ट खराब हो जाता है तथा पपड़ी बनकर गिर जाता है।

(9) प्रबलन छड़ों पर—प्रबलित कंक्रीट के पाये, धरन, स्लेब आदि में नमी पहुँचने से अन्दर वाली छड़ों पर जंग लग जाता है और कंक्रीट से अलग होकर कंक्रीट से सम्बन्ध खत्म हो जाता है।

(10) सीलन से कई बीमारियों के कीटाणु पैदा होते हैं जिससे दमा, तपेदिक जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं वातावरण में भी घुटन प्रतीत होती है।

प्रश्न 4—सील रोधक पदार्थ क्या होते हैं? *(UPBTE 2000)*

उत्तर—सीलन गुरुत्वाकर्षण पदार्थों के रन्ध्रों से केशिकीय क्रिया द्वारा आगे से आगे बढ़ती रहती है। यदि निर्माण पदार्थ में रन्ध्र न्यूनतम हों, तो सीलन का बढ़ना कम हो जाता है अथवा रुक जाता है। अतः भवन निर्माण में न्यूनतम रन्ध्रों वाले पदार्थों को वरीयता देनी चाहिये। एक अच्छा सील रोधक अन्वेषण, टिकाऊ, स्थिर, ऊपरी भार-वहन योग्य, सस्ता तथा आसानी से उपलब्ध होने वाला होना चाहिये। ताप परिवर्तन पर इसमें दरारें नहीं पड़नी चाहिये।

मुख्य सीलन रोधक पदार्थ निम्नलिखित हैं—

(1) धातु की चादर जैसे एल्युमीनियम, ताँबा, सीसा की पतली चादरें,

(2) पोलीथीन झिल्ली (Polythene Sheets),

(3) विटूमन (Bitumen) तथा एस्बेस्टस-युक्त विटूमन की फेल्ट (Felt),

(4) मैस्टिक अस्फाल्ट (Mastic Asphalt) की फेल्ट,

(5) टेराकोटा (Terra Cotta),

(6) पत्थर की पटिया, जैसे ग्रेनाइट, बेसाल्ट, ट्रैप, स्लेट इत्यादि,

(7) सामन्य कंक्रीट (1 : 2 : 4),

(8) सीमेन्ट-बालू मसाला (1 : 2),

(9) सैनिटरी टाइलें (Sanitary Tiles)।

प्रश्न 5—विटूमन का भवन निर्माण में क्या प्रयोग है?

उत्तर—विटूमन—यह एक जलाभेद्य पदार्थ है। इसे गर्म करके छतों, फर्शों, कुरसी तल व तहखानों में डाला जाता है। यह संरचना में आयी दरारों को भरने के काम भी आता है। ताप के कारण प्रभावित होने से रोकने के लिये, इस पर कंक्रीट अथवा चिनाई का आस्तरण दिया जाता है। विटूमन की फेल्ट (Tar Felt) छतों व फर्शों में सीलन रोधन के लिये लगाई जाती हैं।

civilguruji.net

प्रश्न 6—सील-रोक रद्दा क्या है? सीलन रोक रद्दा लगाते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?

(UPBTE 2002

उत्तर—यह जल-रोधक पदार्थों की एक मोटी परत होती है, जो सीलन को आगे बढ़ने से रोकती है। सील-रोक रद्दे (D.P.C.) साधारणतया छत पर, कुरसी तल पर व तहखानों (Basement) के फर्श व दीवारों पर लगाये जाते हैं। सामान्यत: सील-रोक रद्दे के लिये सीमेन्ट कंक्रीट (1:2:4) की 2 सेमी से 4 सेमी मोटी परत डालकर उस पर गम्र बिटूमन के एक अथवा दो लेप किये जाते हैं। बिटूमन के लेप पर मोटा कणदार बालू छिड़का जाता है। आवश्यक होने पर कंक्रीट में जल प्रतिरोधक पदार्थ भी मिलाये जाते हैं। बिटूमन प्रलेपन के लिये 1·2kg से 1·5kg बिटूमन प्रतिवर्ष मी० सतह की दर से लिया जाता है।

सीलन रोक रद्दा लगाते समय ध्यान रखने योग्य बातें निम्न हैं—

(i) सील रोक रद्दा क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर स्थिति में लगाया जा सकता है।

(ii) इसमें कोई जोड़ नहीं होना चाहिये। यह सतत लगाया जाना चाहिये।

(iii) रद्दे दीवार की पूरी चौड़ाई में लगाना चाहिये तथा इसकी मोटाई समान रहनी चाहिये।

(iv) यह चिनाई या कंक्रीट से ढाँप देना चाहिये, ताकि सीधी धूप व गर्मी से बिटूमन बहकर नष्ट न हो जाये।

प्रश्न 7—पुरानी संरचनाओं से सीलन दूर करने के क्या उपाय हैं?

उत्तर—

पुरानी संरचनाओं से सीलन दूर करने के उपाय
(Removal of Dampness from Existing Structures)

पुराने भवनों से सीलन दूर करने के लिये निम्नलिखित उपाय करने चाहियें—

(i) यदि भवन के पास पानी एकत्रित होता है तो पक्की नालियाँ बनाकर पानी को भवन से दूर ले जाना चाहिये। भवन के चारों ओर भूमि तल पर 1 मीटर चौड़ा तथा बाहर को ढालू अंचल (Apron) बना देना चाहिये।

(ii) सीलन ग्रस्त फर्श को निकालकर उसके स्थान पर नया फर्श डाल देना चाहिये। फर्श के नीचे कणदार मोटी परत (न्यूनतम 10 cm मोटाई में) डाल देनी चाहिये। यह सीलन को ऊपर चढ़ने से रोकती है।

(iii) टूटे तथा उखड़े हुये प्लास्तर को निकालकर, चिनाई जोड़ साफ करके, नया प्लास्तर, जिसमें उचित जल-रोधक पदार्थ मिलाये गये हों, कर देना चाहिये।

(iv) पैराडेर के ऊपर कोपिंग (coping) लगा देनी चाहिये।

(v) समतल छतों की ढाल ठीक कर देनी चाहिये। यदि ढाल कम है तो कूटा-कंक्रीट की नई परत बिछाकर, अधिक ढाल दे देनी चाहिये।

(vi) छत से जल निकासी के पाइपों की वर्षा ऋतु से पहले सफाई कर देनी चाहिये।

(vii) टपकती छतों के ऊपर नया सील-रोक रद्दा लगा देना चाहिये।

(viii) ढालू छतों की टूटी चादरों को तुरन्त बदल देना चाहिये तथा घाटी-गटर (valley gutter) की सफाई कर देनी चाहिये।

प्रश्न 8—गोदामों में सीलन रोकने के क्या उपाय हैं? *(UPBTE 200*

उत्तर—

गोदामों में सीलन रोकने के उपाय
(Checking Dampness in Godowns)

उत्तर—गोदामों में प्राय: लम्बे समय तक सामग्री तथा वस्तुयें स्टोर की जाती हैं। कुछ पदार्थ जैसे सीमेन्ट, कार्बाइड, उर्वरक, कपड़ा, पुस्तकें इत्यादि बड़ी सावधानी से स्टोर में रखनी पड़ती हैं, क्योंकि ये सीलन के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। सुरक्षा की दृष्टि से गोदाम प्राय: बन्द रखे जाते हैं, अत: इनमें प्रकाश तथा धूप भी कम पहुँचती है। इस कारण इनमें सीलन पनपने की सम्भावना अधिक रहती है।

गोदामों को सीलन मुक्त रखने के लिये, इनकी छतों तथा बाहरी दीवारों को पूर्णत: लीक प्रूफ बनाना चाहिये। दरवाजे तथा रोशनदानों पर गहरे सन शेड डालने चाहिएं। फर्श के निर्माण के समय इसके नीचे, पूरे क्षेत्र में जोड़ रहित पोलीथीन की झिल्ली बिछानी चाहिए।

अधिक सावधानी के अन्तर्गत, सीलन से शीघ्र प्रभावित होने वाले मैटीरियल को फर्श के ऊपर लकड़ी के पटरे डालकर, उन पर रखना चाहिये और इसे दीवारों से हटाकर स्टोर किया जाना चाहिये।

छतों से वर्षा जल निकासी का उत्तम प्रबन्ध किया जाना चाहिये।

प्रश्न 9—दीवारों पर लोना व शोरा लगने का क्या मतलब है? लोना को दूर करने के क्या उपाय हैं?

उत्तर—

दीवारों पर लोना व शोरा लगना
(Efflorsence on Walls)

दीवारों की चिनाई में जब सीलन घुस जाती है तो ईंट-मृदा में विद्यमान कई प्रकार के लवण घुलकर ऊपर चिनाई पर प्रकट होने लगते हैं और सफेद काई के रूप में ईंटों की सतह या प्लास्तर पर जमने लगते हैं। इसे लोना या शोरा लगना (उत्फुल्लन) (Efflorescence) कहते हैं। इससे दीवार-सतह बदनुमा हो जाती है और प्लास्तर पर दाग पड़ जाते हैं। लोना जब अधिक लग जाता है तब ईंटें गलने लगती हैं। फलस्वरूप चिनाई तथा प्लास्तर के कण झर कर नीचे गिरने लगते हैं और चिनाई व प्लास्तर नष्ट हो जाते हैं।

लोना दूर करने के उपाय—(i) दीवार पर जिंक सल्फेट और पानी के घोल को छिड़ककर, ब्रुश से रगड़कर लोना साफ कर दिया जाता है अथवा 5 भाग पानी में एक भाग हाइड्रोक्लोरिक या सल्फ्यूरिक एसिड मिलाकर घोल तैयार करके, सतह पर छिड़ककर, ब्रुश से रगड़ते हैं।

(ii) साफ पानी से सतह को धोकर सूखने दिया जाता है।

प्रश्न 10—भवनों में कीटों के कुप्रभाव को समझाइये।

उत्तर—

कीटों के कुप्रभाव (Effects of Termites)

दीमक, घुन तथा अन्य कीटों के प्रकोप से भवनों की लकड़ी की चौखटें, सरदल (Lintels), धरने, पर्दा दीवारें, फर्नीचर, प्लास्टिक, चमड़ा, रबड़ की बनी वस्तुयें, पुस्तकें इत्यादि नष्ट हो जाती हैं।

दीमक लकड़ी को भोजन के रूप में ग्रहण करके, इसको चाउडर में बदल देती है। दीमक व घुन के लग जाने पर, इसको पूर्णरूप से नष्ट करना कठिन होता है। यह भवन तथा इसमें रखी अनेक वस्तुओं को खाकर इनको पूर्णत: नष्ट कर देती है अथवा इनकी आयु कम कर देती है। दीमक उष्ण-नम वायु में अधिक तेजी से बढ़ती है। यह सीलन व अंधेरे में पनपती है। इसका प्रभाव गर्म देशों में अधिक होता है। इसको सफेद चींटी (White Ants) भी कहते हैं। दीमक की 2300 से अधिक जातियाँ हैं। भारत में 200 से अधिक प्रकार की दीमक पनपती है। दीमक भवनों को अधिक क्षति पहुँचाती है।

दीमक, घुन आदि कीट असंख्य में कालोनी बनाकर रहते हैं। दीमक भवनों में चढ़ने अथवा एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक जाने के लिये, मिट्टी की सुरंगें या गलियारे बना लेती हैं और कम समय में ही यह भवन के सभी भागों में पहुँच जाती है।

दीमक, घुन आदि कीटों के दुष्प्रभाव से भवन तथा इसमें स्थापित वस्तुओं को बचाने के लिये, भवनों में कीटनाशक उपचार करना आवश्यक है। सामान्यतया यह उपचार निर्माण-कार्य आरम्भ करने से पहले किया जाता है, परन्तु आवश्यक होने पर पूर्व-निर्मित भवनों में भी यह क्रिया अपनाई जाती है।

प्रश्न 11—भवनों में सक्रिय कीटों का वर्णन कीजिये।

उत्तर—

कीटों के प्रकार
(Types of Termites)

भवनों में सक्रिय कीट दो प्रकार के होते हैं—

(i) घुन (Non-Subterranean or Wood-nesting Termites)

(ii) दीमक (Subterranean or Ground-nesting Termites)

(i) घुन—यह उष्ण-नम स्थानों में लकड़ी के अवयवों में उत्पन्न हो जाती है और कालोनी बनाकर पनपती है। इनका **भूमि की मृदा से कोई सम्पर्क नहीं होता है।** यह लकड़ी की चौखटों तथा फर्नीचर के अन्दर अपने ठिकाने स्थापित कर लेती है, और धीरे-धीरे उनको खा जाती है। यह खाद्य पदार्थों में भी उत्पन्न होकर उन्हें खा जाती है। 'गेहूँ में घन लग गयी', यह एक सर्वविदित कथन है।

(ii) दीमक—दीमक की उत्पत्ति तथा बहोतरी नमदार मृदा में ही सम्भव है तथा यह सदा भूमि के सम्पर्क में रहती भोजन की खोज में, जो मुख्यत: काष्ठ या झाड़ियों की सूखी जड़ें होती हैं, यह अन्य मैटीरियल या वस्तुओं के सहारे, मिट्टी सुरंगें या गलियारे बनाकर, ऊपर चढ़ती हैं और भवन के विभिन्न भागों तक पहुँच जाती है। यह लकड़ी को खाकर उसमें भी बना लेती है।

दीमक फर्श के क्षतिग्रस्त जोड़ों से, मिट्टी-चिनाई की दीवारों से, भूमिगत पानी तथा नल पाइपों से अथवा बिजली फिटिंग का सहारा लेकर, भूमि से भवन के अन्दर प्रवेश कर जाती है। संरचना में एक बार घुस जाने पर इनको पूर्णत: करना कठिन होता है।

प्रश्न 12—दीमक ग्रस्त भवन में दीमक का प्रकोप कैसे ज्ञात करते हैं?

उत्तर— दीमक ग्रस्त भवन में दीमक का प्रकोप ज्ञात करना
(Detecting Termite Infestation in Building)

मोटे तौर पर देखने पर भवन में दीमक लगने का पता नहीं चलता है। दीमक लकड़ी को भीतर से पूर्णत: खा जाती है, प सतही पेन्ट की परत ज्यों की त्यों साफ दिखायी पड़ती है। अत: अनुभवी व्यक्ति ही दीमक का पता लगा पाता है। ऊपर चढ़ने लिये दीमक द्वारा बनाये गये गलियारे कुल 3 mm व्यास के ही होते हैं। तेज रोशनी वाले लैम्प अथवा चाकू की नोक से लकड़ी ऊपरी सतह को थोड़ा छीलकर दीमक के विद्यमान होने का पता लग जाता है। भवन का जो भाग नींव-मृदा के सम्पर्क में है, पर जाँच करने पर दीमक के गलियारों का पता चल जाता है। लकड़ी को ऊपर से हल्के से ठोकने/थपथपाने से भी लकड़ी भीतर के खोखलेपन का आभास हो जाता है। यदि ऊपरी तलों पर दीमक विद्यमान है, परन्तु भूमितल या निचले तलों पर दिख नहीं दे रही है, तब भी सभी तलों को अच्छी तरह जाँच कर लें, क्योंकि ऊपरी तलों पर दीमक, नींव-मृदा, कुरसी व भूतल होकर ही ऊपर चढ़ती है। यह आकाश से नहीं टपकती है। जीना (Stairs), दिखावटी अन्तश्छद (False Ceiling) तथा दीवारों टँगे चित्र-फ्रेमों के पीछे ध्यान से देखना चाहिये, जोकि इन के प्रचलन के मुख्य मार्ग होते हैं। मृदा व लकड़ी से बाहर आते-जा पंखी-कीट भवन में दीमक का संकेत है और घुन-मल के बिन्दु-निशान भवन में घुन का भान कराते हैं।

प्रश्न 13—दीमक से भवनों की सुरक्षा के क्या उपाय हैं? *(UPSTE 20*

उत्तर— दीमक से भवनों की सुरक्षा के उपाय (Anti-Termite Methods)

निर्माण कार्य शुरू करने से पहले तथा निर्माण काल में विशेष सावधानियाँ बरतने पर दीमक व घुन से भवन की सु की जा सकती है। भवन पर दीमक का आक्रमण रोकने के लिये, मुख्यत:, नींव की मृदा तथा आस-पास की भूमि कीट-नाशक (Insecticides) घोल द्वारा उपचार किया जाता है। दीमक-नाशक उपचारों का विवरण निम्नलिखित है—

(i) स्थल उपचार—निर्माण-स्थल से पेड़ों के सूखे तने, ठूँठे, जड़ें, झाड़ियाँ, गले-सड़े पदार्थ निकालकर भूमि अच्छी प्रकार से साफ कर देना चाहिये। यदि दीमक तथा अन्य कीटों के ठिकाने नजर आयें, तो उस भाग की मृदा को खोद निकाल देना चाहिये अथवा सब्बल (Crow Bar) से सूराख करके उसमें कीटनाशक घोल डाल देना चाहिये। दीवारों की का स्थान छोड़कर शेष भूमि पर सब्बल से 10 से 20 मिमी० व्यास के 5 से 10 सेमी गहरे तथा 15 से 30 सेमी० की दूरी सूराख करके उनमें, कीट-नाशक घोल 2 लीटर प्रति मीटर गहराई की दर से भर देना चाहिये। यह घोल सम्पीडित वायु-सं द्वारा सूराखों में भेजा जाता है।

(ii) नींव उपचार—नींव गड्ढे की तली तथा पार्श्व में 30 सेमी० की ऊँचाई तक 5 लीटर प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र की द कीटनाशक घोल का छिड़काव करना चाहिये।

(iii) भराव की मिट्टी का उपचार—नींव [illegible] के नीचे भराव की मिट्टी में 15 से 30 सेमी० की दूरी पर सूर करके उसमें 5 लीटर प्रति मीटर गहराई की दर से कीटनाशक घोल भर देना चाहिये।

(iv) फर्श तथा प्लिंथ उपचार—सामान्यत: सीमेन्ट कंक्रीट के फर्श दीमक आदि के आक्रमण से प्रभावित नहीं होते हैं परन्तु इनके जोड़ों का उचित उपचार करना आवश्यक है। प्रसार जोड़ों को भरने से पहले, इसमें कीटनाशक घोल अच्छी तरह भर देना चाहिये। जोड़ों में शीशे अथवा धातु की पट्टी (Strip) का प्रयोग करके भी कीटों को फर्श पर जाने से रोका जा सकता है।

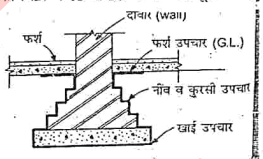

चित्र 3.2–भवनों में निर्माण-पूर्व दीमक रोधक उप

कुरसी तल पर, दीवार की पूरी चौड़ाई पर सीमेन्ट कंक्रीट की मोटी परत लगाने से दीमक का भूमि से दीवार के भीतर से होकर ऊपर चढ़ना रुक जाता है। कंक्रीट की परत के ऊपर तथा नीचे कीटनाशक घोल का छिड़काव कर देना चाहिये अथवा बिटूमन की परत डाल देनी चाहिये।

(v) लकड़ी की चौखटों तथा अन्य फिटिंग का उपचार—लकड़ी की चौखटों का जो भाग चिनाई के सम्पर्क में आता है अथवा चिनाई में दबा दिया जाता है, उस पर दीमक-रोधक घोल या गर्म कोल-तार का लेप कर देना चाहिये। बिजली की फिटिंग तथा स्विच-बोर्डों की पृष्ठ (Back) पर भी कीटनाशक घोल का लेप कर देना चाहिये।

भवनों में निर्माण-पूर्व दीमक रोधक उपचार चित्र 3.2 में दर्शाया गया है।

प्रश्न 14—दीमकग्रस्त भवनों का उपचार कैसे करते हैं? *(UPBTE 2004)*

उत्तर— दीमकग्रस्त भवनों का उपचार
(Treatment of Termite Effected Buildings)

भवन के एक बार दीमकग्रस्त हो जाने पर, इसका निवारण बड़ा कठिन होता है। विशेष सावधानी रखने पर ही इसकी उत्पत्ति को कम किया जा सकता है तथा क्षतिग्रस्त वस्तुओं को पूर्णरूप से नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

भवनों से दीमक को नष्ट करने के लिये निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं—

(i) लकड़ी की चौखटें, सरदल, धरन, पल्ले, फिटिंग तथा जल व मल-पाइपों का विशेष तौर से उन भागों का जो चिनाई में दबाये गये हैं, ध्यान से निरीक्षण करना चाहिये।

(ii) कीटों के ठिकानों तथा ऊपर चढ़ने की गैलरियों का पता लगाकर उन्हें नष्ट कर देना चाहिये।

(iii) लकड़ी की क्षतिग्रस्त चौखटों को तुरन्त बदल देना चाहिये। लकड़ी तथा चिनाई की सम्पर्क सतहों पर बलपूर्वक कीटनाशक घोल छिड़क देना चाहिये। अथवा सम्पर्क रेखा पर, उचित अन्तराल पर 6 mm व्यास के नीचे की तरफ डालू छिद्र करके, उनमें कीटनाशक बलपूर्वक भर दें। उपचारित छिद्रों को बाद में उपयुक्त मसाले से भर दें।

(iv) क्षतिग्रस्त दीवारों के जोड़ों में 10 मिमी० व्यास के सूराख, उचित दूरी पर करके, उसमें कीटनाशक घोल डाल दें।

(v) प्लिंथ के चारों ओर, भूमि में 10 से 20 मिमी० व्यास के 50 सेमी० गहरे तथा 15 सेमी० से 30 सेमी० के अन्तराल पर सूराख करके, उनमें 5-10 लीटर प्रति वर्ग मीटर ऊर्ध्व क्षेत्रफल की दर से कीटनाशक घोल भर दें। इससे सम्पीडनीय भूमि से दीमक भवन में आने से रुक जायेगी।

प्रश्न 15—कीटनाशक घोल क्या होते हैं?

उत्तर— कीटनाशक घोल (Anti-Termite Solution)

दीमक व कीटों के नाश के लिये निम्नलिखित रसायनों का प्रयोग किया जाता है। पानी में उचित मात्रा में यह रसायन मिलाकर घोल (Emulsion) तैयार किये जाते हैं, जिनको स्प्रेयर द्वारा नींव की मृदा तथा भवन के अन्य भागों पर डाला जाता है।

रासायनिक घोल मृदा के कणों में घुस जाते हैं और भूमि तथा संरचना के मध्य एक रासायनिक-आवरण (Chemical Barrier) का कार्य करते हैं। यह क्लोरीनेटिड हाइड्रोकार्बन (Chlorinated Hydro-Carbon) होते हैं और अवःमृदा जल में अघुलनशील हैं।

(i) Dieldrin	= 0·5 Percent
(ii) Aldrin	= 0·5 Percent
(iii) Heptachlor	= 0·5 Percent
(iv) Chlordane	= 1·0 Percent
(v) D.D.T.	= 5·0 Percent
(vi) B.H.C.	= 0·5 Percent

नींव के लिये Aldrex 30 का प्रयोग भी लाभप्रद होता है।

सभी कीटनाशक मूल रूप से विष होते हैं। इनके सम्पर्क में आने (छूने/सूँघने/निगलने से) प्राणी पर घातक प्रभाव पड़ता है। इन्हें बच्चों से दूर, सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिये। इन्हें आग से भी दूर रखना चाहिये। निर्माण स्थल पर प्रयोग के बाद, श्रमिक को साबुन से अपने हाथ-पाँव अच्छी तरह धो लेने चाहियें।

civilurdunet

4 डाटें तथा लिन्टल, पाडू, टेक तथा फरमाबन्दी (Arches and Lintels)

प्रश्न 1—एक डाट के निर्माण को समझाइये। किसी भवन के उन स्थानों को बताइये जहाँ डाट बनाये जाते हैं?
(UPBTE 2012)

उत्तर—डाट का निर्माण—प्राय: डाटों की आकृति किसी एक निश्चित ज्यामितीय वक्र की होती है और उसी के अनुसार डाट के अधस्तल को बनावट रखी जाती है। चिनाई को ऊपर उठाते हुए डाट रिंग का निर्माण उठान तल के दोनों सिरों से एक साथ शुरू करके ऊपर शिखर की ओर ले जाया जाता है और सबसे ऊपर Key Block लगातार डाट पूर्ण कर ली जाती है।

डाट निर्माण के निम्न दो चरण हैं—(i) डाट के लिये दूला बनाना। (ii) डाट रिंग का निर्माण करना।

(i) डाट के लिये दूला बनाना—अन्त: वास्सायरों को अस्थायी तौर पर सहारा देने के लिये इसके नीचे दूला लगाया जाता है। निर्माण पूर्ण हो जाने पर, जब डाट स्वयं का तथा अध्यारोपित भार सहन करने योग्य हो जाती है, तब यह दूला हटा दिया जाता है। बहुत छोटी डाटों के लिये प्राय: गारा चिनाई की कच्ची दीवार जिसकी ऊपरी सतह के अधःस्तल के अनुरूप होती है, बनायी जाती है और उसके शिखर पर प्लास्टर कर दिया जाता है व इस ढाँचे के ऊपर डाट रिंग का निर्माण कर लिया जाता है। जब डाट रिंग सैट हो जाती है, यह अस्थायी चिनाई निकाल दी जाती है।

(ii) डाट रिंग का निर्माण—दूला तैयार हो जाने तथा इसकी दृढ़ता चैक करने के पश्चात् इसके ऊपर डाट का निर्माण किया जाता है। चिनाई कार्य डाट के दोनों सिरों से तिर्यक पीठ के ऊपर से आरम्भ किया जाता है। डाट के प्रकार के अनुसार प्रत्येक वास्सायर को मसाले में लगाया जाता है। सांध को मसाला लगाकर अच्छी तरह स्थिर किया जाता है और सबसे ऊपर चाबी ब्लॉक लगाकर डाट रिंग को पूर्ण किया जाता है। डाटों के पूर्ण हो जाने पर टेकों के शीर्ष पर लगे पच्चड़ों को कुछ ढीला कर दिया जाता है। इसको दूला वर्ष करना कहते हैं। इससे वास्सायर कुछ नीचे धँस जाते हैं। आपस में पूर्णत: सट जाते हैं जिससे इनके मध्य डाट क्रिया स्थापित हो जाती है। डाट की दृढ़ता इसी डाट क्रिया पर निर्भर करती है।

जब डाट पूर्ण रूप से स्थिर हो जाये तभी रिंग के ऊपर चिनाई उठानी चाहिये। डाट के ऊपर चिनाई प्रारंभ करने से पूर्व दूला हटा देना चाहिये।

डाटें भवन में दरवाजे, खिड़कियों, बरामदों के प्रवेशों के ऊपर चिनाई उठाने के लिये इनके ऊपर डाटें बनायी जाती हैं।

प्रश्न 2—आर्च तथा लिन्टल में अन्तर स्पष्ट कीजिये। एक स्केच की सहायता से किसी आर्च के चार प्रमुख भागों को बताइये तथा उसके कार्य इंगित कीजिये। ***(UPBTE 2012)***

उत्तर— **आर्च तथा लिन्टल में अन्तर**

	आर्च (Arch)	लिन्टल (Lintel)
1.	आर्च की आकृति वक्राकार होती है।	लिन्टल प्रिज्माकार शक्ल का होता है।
2.	डाट पर पड़ने वाले भार का विश्लेषण जटिल पड़ता है, क्योंकि डाट क्रिया पार्श्व प्रणोद उत्पन्न करती है।	विश्लेषण भार सरल है। एक धरन की भाँति इसका अभिकल्पन सम्भव है। भार ऊर्ध्वाधर स्थापित होते हैं।
3.	डाट का निर्माण कठिन पड़ता है। इसके लिये विशेष दूलाबन्दी करनी पड़ती है।	लिन्टल का निर्माण अपेक्षाकृत आसान है। साधारण फर्मावन्दी पर्याप्त रहती है।
4.	निर्माण में अधिक समय लगता है। प्रत्येक खण्डक को फन्नीदार शक्ल में गढ़ना पड़ता है। बड़े पाटों पर डाट रिंग डालना कठिन पड़ता है।	निर्माण में कम समय लगता है। छोटे पाटों के लिये तो पूर्ण निर्मित लिन्टल सुविधाजनक और उत्तम रहते हैं।
5.	डाटों का निर्माण व्यय अधिक आता है।	लिन्टल का निर्माण व्यय सामान्य होता है।

6.	डाटों के फन्नीदार वास्सायर एक-दूसरे पर टिके रहते हैं। एक वास्सायर के निकल जाने पर सम्पूर्ण डाट ढह जाती है।	लिन्टल अकस्मात् विफल नहीं होते हैं, क्षतिग्रस्त होने से पूर्व नीचे लटक जाते हैं। गिरते कम हैं।
7.	डाट देखने में आकर्षक लगती है। यह भवन को भव्यता प्रदान करती है।	लिन्टल भवनों के अन्य घटकों की भाँति एक जरूरी अवयव है। इसका वास्तुकला की दृष्टि से अपना कोई आकर्षण नहीं है।
8.	छोटे-बड़े पाटों के लिये अनेक प्रकार की डाटें बनायी जाती हैं, जो उत्तम वास्तुकला दर्शाती है।	इन्जीनियरी दृष्टि से इनको वरीयता दी जाती है। सभी लिन्टल की आकृति एक जैसी होती है।

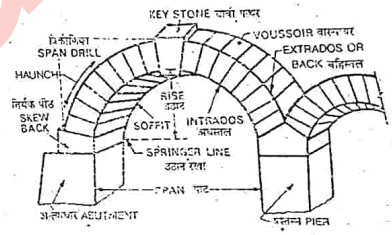

चित्र 4.1-डाट के विभिन्न अंग

(i) चाबी पत्थर या कुँजी खण्डक (Key Stone)—डाट के शीर्ष पर लगाया गया वास्सायर, चाबी पत्थर कहलाता है। डाट के दोनों सिरों को ऊपर उठाते हुये, शिखर पर अन्त का खण्डक रखकर, डाट को पूर्ण कर दिया जाता है। यह खण्डक सुन्दरता की दृष्टि से, अन्य वास्सायरों से कुछ बड़ा रखा जाता है।

खड़ी डाट से, यदि चाबी पत्थर निकाल जाये, तो पूरी डाट ढह जायेगी। ईंटों की डाट में इसे चाबी ईंट (Key Brick) कह सकते हैं।

(ii) तिर्यक पीठ (Skew Back)—डाट के सिरों के नीचे की तिरछी आधार सतह, जिस पर डाट टिकायी जाती है, को तिर्यक पीठ कहते हैं।

(iii) अन्त्याधार (Abutment)—डाट के दोनों सिरों के नीचे बनाये गये आलम्ब अथवा दीवार के भागों (जो डाट को सम्भालते हैं), अन्त्याधार (Abutment) कहलाते हैं। श्रृंखला में निर्मित अनेक डाटों (Arches in Series) के प्रारम्भिक तथा अन्तिम आलम्ब भी अन्त्याधार कहे जाते हैं। अन्त्याधार, अधिक डाट के कारण उत्पन्न पार्श्व प्रणोद को वहन करते हैं, अत: यह विशेष मोटाई में बनाये जाते हैं।

(iv) डाट का पाट (Span of an Arch)—डाट के दोनों पार्श्व आलम्बों के मध्य शुद्ध क्षैतिज दूरी, डाट का पाट या विस्तृति कहलाती है। यह दरवाजे, खिड़कियों की शुद्ध चौड़ाई के बराबर होती है।

प्रश्न 3—डाट व लिन्टलों पर कार्य करने वाले बलों तथा उनके उपयोगों को बताइये। इनका स्केच बनाइये।
(UPBTE 2005)

उत्तर—डॉट व लिन्टर पर कार्य करने वाले बल—डाट व लिन्टल पर स्वयं के भार के साथ-साथ इनके ऊपर की गई चिनाई, ऊपरी फर्श, छत व मुंडेर आदि का भार आता है। इस भार के कारण डाट में तिरछे बल उत्पन्न होते हैं जबकि लिन्टल पर केवल ऊर्ध्वाधर बल ही आता है। तिरछे बल डाट में पार्श्विक प्रणोद उत्पन्न करते हैं जो डाट संरचना के लिये घातक है जबकि लिन्टल में ऐसा कोई प्रणोद उत्पन्न नहीं होता है।

civilguru.net

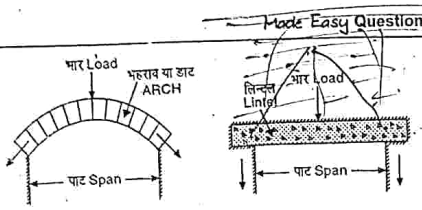

चित्र 4.2

उपयोग—भवनों में दरवाजे, खिड़कियों के प्रवेशों को पाटने तथा दीवारों को ऊपर उठाने के लिये चिनाई में प्रयोग किये जाते हैं।

प्रश्न 4—आकृति के अनुसार डाटों का वर्गीकरण कितने प्रकार से करते हैं? प्रत्येक को हस्तमुक्त चित्र से समझाइये। *(UPBTE 2002)*

उत्तर—

आकृति के अनुसार डाटों का वर्गीकरण
(Classification of Arches According to Shape)

डाटों का यह वर्गीकरण, डाट की ज्यामितीय आकृति पर आधारित है। वक्र की रचना के अनुसार, अनेक आकृति की डाटें बनाई जा सकती हैं। मुख्य आकृति निम्नलिखित हैं—

(i) अर्ध-गोलाकार या अर्ध-वृत्ताकार डाट (Semi-Circular Arch)
(ii) वृत्तखण्ड या कमानीदार डाट (Semi-Circular Arch)
(iii) समबाहु डाट (Equilateral Arch)
(iv) दीर्घ वृत्ताकार डाट (Elliptical Arch)
(v) परवलयिक डाट (Parabolic Arch)
(vi) चपटी डाट (Flat Arch)
(vii) नालनुमा डाट (Horse-Shoe Arch)
(viii) त्रिकेन्द्री डाट (Three Centred Arch)
(ix) चतुष्केन्द्री डाट (Four Centred Arch)
(x) न्यून कोण या लैनसेट डाट (Lancet Arch)
(xi) वेनिसी नोकदार डाट (Venetian Arch)
(xii) न्यूनबाहु डाट (Drop Arch)
(xiii) ओजी डाट (Ogee Arch)

प्रवेशों की विस्तृति (Span) तथा उठान (Rise) को दृष्टि में रखकर ही उपयुक्त डाट का चयन किया जाता है। चयन करते समय, डाट पर पड़ने वाले भार के साथ-साथ स्थापत्यकला (Architecture) का भी ध्यान रखा जाता है। अधस्तल के लिये कोई भी वक्र, जो व्यावहारिक रूप से अपनाया जा सकता है, डाट के लिये चुन लिया जाता है। अत: उपरोक्त डाटों के अतिरिक्त बहुत सी अन्य डाटों का भी निर्माण किया जा सकता है।

ऊपर वर्णित डाटों की रचना तथा चित्र नीचे दिये गये हैं—

अर्धगोलाकार (Semi-Circular), वृत्तखण्ड (Segmental), नालनुमा (Horse-shoe), लैनसेट (Lancet) डाटें, एकल केन्द्र-बिन्दु डाटें (One Centred Arches) कहलाती हैं। समबाहु डाट (Equilateral Arch) के लिये दो केन्द्र बिन्दु लिये जाते हैं। अन्य डाटों के लिये अनेक केन्द्र-बिन्दु चुनकर इनके अधस्तल (Intrados) तथा बहिस्तल (Extrados) के वक्र लगाये जाते

हैं। डाट की रचना करते समय पहले इसकी रेखाओं को पक्के फर्श पर खींच लिया जाता है और प्रत्येक वास्सायर (खण्डक) की सत्य स्थिति तथा माप ज्ञात कर लिये जाते हैं।

अर्ध-वृत्ताकार डाट (Semi-Circular Arch)—क्योंकि इस डाट का उठान, पाट के आधे के बराबर होता है, अत: इसका शिखर (Crown) बहुत ऊँचा उठ जाता है। इसलिये छत की ऊँचाई अधिक रखनी पड़ती है। यह डाट छोटे पाटों के लिये अपनायी जाती है। डाट का केन्द्र बिन्दु, डाट रेखा पर स्थित होता है (चित्र 4.3)।

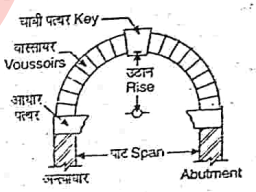

चित्र 4.3-अर्ध-वृत्ताकार डाट (Semi Circular Arch)

वृत्त-खण्ड डाट (Segmental Arch)—इस डाट की आकृति एक वृत्त खण्ड जैसी होती है। यह डाट देखने में सुन्दर लगती है और बड़े पाटों के लिये, विशेष तौर पर बरामदे के प्रवेशों के लिये अपनायी जाती है। डाट का केन्द्र बिन्दु उठान रेखा से नीचे स्थित होता है (चित्र 4.4)। यह डाट कमजोर लिन्टलों के ऊपर भी निवारक डाट के रूप में बनाई जाती है ताकि लिन्टल ऊपरी भार से मुक्त हो जाये।

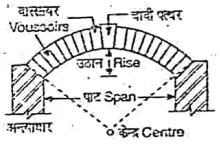

चित्र 4.4-वृत्त-खण्ड डाट (Segmental Arch)

समबाहु डाट (Equilateral Arch)—यह डाट समबाहु त्रिभुज के ढाँचे पर आधारित होती है। डाट के आगे-पीछे के केन्द्र उठान रेखा पर स्थित होते हैं। क्योंकि इस डाट का शिखर काफी ऊँचा चला जाता है, अत: कम पाट होने पर भी इससे अधिक प्रकाश उपलब्ध होता है (चित्र 4.5)।

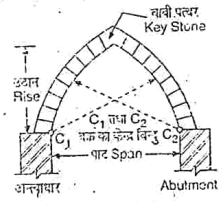

चित्र 4.5-समबाहु डाट (Equilateral Arch)

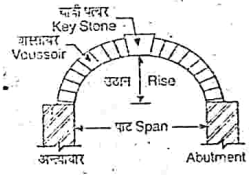

चित्र 4.6-दीर्घ-वृत्ताकार डाट (Elliptical Arch)

दीर्घ-वृत्ताकार डाट (Elliptical Arch)—इस डाट का रिंग दीर्घ-वृत्ताकार होता है। डाट का उठान, पाट से कम होता है। यह डाट बड़े पाटों पर लगाई जाती है (चित्र 4.6)।

परवलयिक डाट (Parabolic Arch)—इस डाट का उठान, पाट से अधिक होता है और डाट केन्द्र उठान रेखा के ऊपर स्थित होता है। यह डाट देखने में आकर्षक लगती है। बरामदे के प्रवेशों के लिये इस डाट का प्रयोग किया जाता है (चित्र 4.7)।

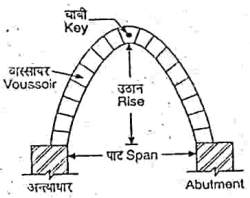

चित्र 4.7-परवलयिक डाट (Parabolic Arch)

चपटी डाट (Flat Arch)—यह डाट तली पर चपटी बनाई जाती है। क्योंकि डाट खण्डकों (Voussoirs) की पार्श्व स्थिरता कम हो जाती है, अत: यह एक कमजोर डाट है। बड़े पाटों के लिये, इसके ऊपर निवारक डाट देनी

civilguru.net

चाहिये। कम पाट के दरवाजे-खिड़कियों के लिये यह डाट अपनायी जा सकती है, यह लिन्टल की तली की भाँति समतल होती है और चौखट के शीर्ष से सट जाती है (चित्र 4.8)।

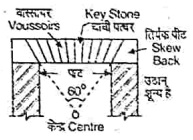

चित्र 4.8-चपटी डाट
(Flat Arch)

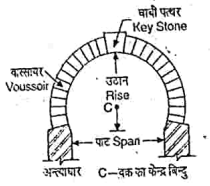

चित्र 4.9-नालनुमा डाट
(Horse-shoe Arch)

नालनुमा डाट (Horse-Shoe Arch)—इस डाट की आकृति घोड़े की नाल से मिलती-जुलती है, अतः इसका यह नाम पड़ा है। इस डाट से बहुत अधिक प्रकाश भीतर आता है, अतः यह भवनों के अग्र भाग (Front) में बनाई जाती है। यह डाट सुरंगों के लिये भी अपनायी जाती है (चित्र 4.9)।

बहुकेन्द्री डाटें (Multi-Centred Arches)—इस प्रकार की डाटों का विकास अनेक केन्द्र बिन्दुओं से किया जाता है। त्रिकेन्द्री व चतुष्केन्द्री डाटें इसी वर्ग की डाटें हैं। इन डाटों के केन्द्र बिन्दु निर्धारित करने में तथा चाप लगाने में काफी दिक्कत आती है। यह डाटें विशेष स्थिति में वास्तुकला की दृष्टि से अपनायी जाती है (चित्र 4.10 व 4.11)। चित्रों में C_1, C_2, C_3 इत्यादि विभिन्न चापों के केन्द्र-बिन्दु दिखाये गये हैं।

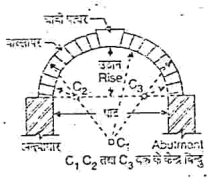

चित्र 4.10-त्रिकेन्द्री डाट
(Three Centred Arch)

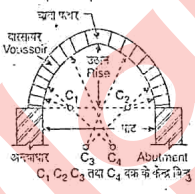

चित्र 4.11-चतुष्केन्द्री डाट
(Four Centered Arch)

लेनसेट डाट (Lancet Arch)—इस डाट का केन्द्र बिन्दु, उठान रेखा से बहुत ऊँचा लिया जाता है, जिससे डाट के भीतर काफी ऊँचाई मिल जाती है। यह एक कलात्मक डाट है और यादगारी व ऐतिहासिक भवनों में अपनायी जाती है (चित्र 4.12)।

वैनिसी नोकदार डाट (Venetian Arch)—इस डाट के केन्द्र बिन्दु उठान रेखा पर स्थित होते हैं, परन्तु इस प्रकार चयनित किये जाते हैं कि डाट का रिंग शीर्ष की तरफ अधिक मोटा होता जाता है, जो देखने में सुन्दर लगता है (चित्र 4.13)।

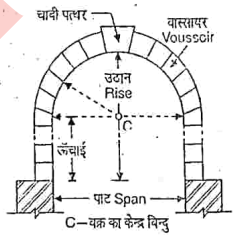

चित्र 4.12-लैनसेट डाट (Lancet Arch)

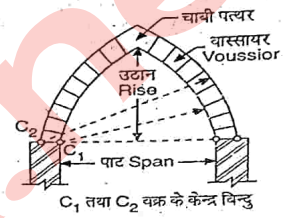

चित्र 4.13-वैनिसी नोकदार डाट (Venitian Arch)

ड्रूपबाहु डाट (Drop Arch)—इस डाट का उठान, पाट से कम होता है और चापों के केन्द्र डाटम्बों से पट/4 की दूरी पर स्थित होते हैं (चित्र 4.14)।

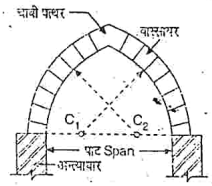

चित्र 4.14-ड्रूपबाहु डाट (Drop Arch)

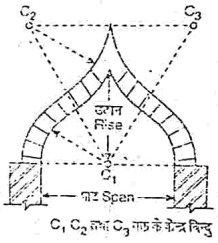

चित्र 4.15-ओजी डाट (Ogee Arch)

ओजी डाट (Ogee Arch)—यह एक कलात्मक डाट है। इसका निर्माण कठिन पड़ता है, परन्तु देखने में डाट आकर्षक लगती है। इस डाट के नीचे के भाग का केन्द्र, उठान रेखा के मध्य में तथा ऊपरी भागों के केन्द्र, शिखर पर त्रिकोणिका क्षेत्र में स्थित होते हैं (चित्र 4.15)।

प्रश्न 5—जैक डाट क्या होती है?

उत्तर—यह एक विशेष वृत्त-खण्ड डाट है, जो भवनों की छतों के लिये बनाई जाती है। कमरे के पूरे क्षेत्रफल पर ऐसी अनेक पास-पास सटी डाटें, इस्पात के गर्डरों पर आलम्बित करके निर्माण की जाती हैं। यह गर्डर, कमरे के छोटे पाट के

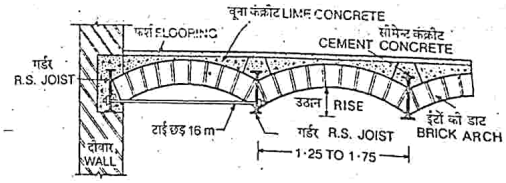

चित्र 4.16-जैक डाट

civilguru.net

समानान्तर 1·2 मीटर से 1·8 मीटर के अन्तराल पर डाले जाते हैं। डाट की रिंग की मोटाई प्रायः आधी ईंट रखी जाती है। किनारों की जैक डाट के बाहरी सिरे पार्श्व दीवारों पर टिकाये जाते हैं। शुरू तथा अन्त के पाटों में इस्पात की तान छड़ें (Tie Rods) उचित दूरी पर, अलग से लगाई जाती हैं, जो डाट-क्रिया से उत्पन्न प्रणोद उदासीन करके, दरारों को पार्श्व धक्के के कारण पलटने से रोके रखती हैं। जैक डाट के लिये दूला, टेकों (Props) पर आधारित न करके गर्डरों के निचले फ्लैंज पर ही टिकाया जाता है (चित्र 4.16)।

प्रचलित सीमेन्ट कंक्रीट की छत-स्लैब के प्रचलन से पहले, सभी सरकारी तथा सार्वजनिक भवनों की छतें जैक-डाट विधि से बनाई जाती थीं।

प्रश्न 6—लिन्टल कितने प्रकार का होता है? *(UPBTE 2000)*

उत्तर—

लिन्टल के प्रकार (Types of Linter)

मैटीरियल के अनुसार मुख्य लिन्टल (पाट-कड़ी) निम्नलिखित हैं—

(1) लकड़ी का लिन्टल (Wooden Lintel)

(2) पत्थर पट्टियों का लिन्टल (Stone Lintel)

(3) ईंटों का लिन्टल (Brick Lintel)

(4) इस्पात का लिन्टल (Steel Girder Lintel)

(5) प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट का लिन्टल (Reinforced Cement Concrete Lintel)

(6) प्रबलित ईंटों का लिन्टल (Reinforced Bricks Lintel)।

प्रश्न 7—ईंटों के लिन्टल को समझाइये।

उत्तर—ईंटों के लिन्टल समांगी न होने के कारण कमजोर होते हैं। चपटी तली होने के कारण इनमें डाट-क्रिया नहीं हो पाती है; अतः ईंटों की डाट लगाकर, दरवाजे, खिड़कियों को पाटना अधिक बेहतर है। फिरभी कम पाट पर यह संतोषजनक काम करते हैं।

ईंटों का लिन्टल सस्ता पड़ता है। निम्न श्रेणी के मकानों में दरवाजे, खिड़कियों की चौखटों के शीर्ष पर ईंटों का लिन्टल दिया जाता है, जो चिनाई मसाला के कारण टिका रहता है। ईंटों का साधारण लिन्टल एक मीटर से अधिक बड़े पाट पर नहीं लगाना चाहिये।

लिन्टल के लिये अच्छी पकी हुई तथा दिल्लेदार (Frog) ईंटों का प्रयोग करना चाहिये। ये ईंटें सीमेंट मसाले 1 : 3 में लगाई जाती हैं। लिन्टल की मोटाई ईंटों के माप के अनुरूप 10 सेमी०, 20 सेमी० आदि रखी जाती है। ईंटों के दिल्ले तथा जोड़ों में अच्छी प्रकार से मसाला भर देना चाहिये ताकि सभी ईंट एक रूप होकर एक धरन की भाँति कार्य कर सकें। जब लिन्टल भली प्रकार से सैट हो जाये, तभी इसके ऊपर चिनाई उठानी चाहिये।

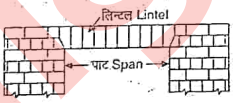

चित्र 4.17–ईंटों का लिन्टल

प्रश्न 8—RCC लिन्टल क्या होता है? इसके गुण-दोषों को बताइये। *(UPBTE 2006)*

उत्तर—

प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट का लिन्टल
(Reinforced Cement Concrete Lintel)

(a) विशेषता—इसको संक्षेप में आर०सी०सी० लिन्टल (R.C.C. Lintel) भी कहते हैं। यह लिन्टल सीमेन्ट-कंक्रीट 1:2:4 में उचित संख्या में इस्पात की छड़ें दबाकर निर्मित किये जाते हैं। आर०सी०सी० लिन्टल की विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(i) यह स्पाट समतल तथा देखने में सुन्दर लगते हैं।

(ii) यह दूसरे लिन्टलों की तुलना में अधिक सामर्थ्यवान व टिकाऊ होते हैं।

(iii) यह अग्निरोधक होते हैं तथा ऊष्मा व ठण्ड से कम प्रभावित होते हैं।

(iv) यह सीलन मुक्त होते हैं।

(v) दीमक व अन्य कीटों से नष्ट नहीं होते हैं।

(vi) इनका निर्माण सरल है। यह किसी भी पाट के लिये निर्मित किये जा सकते हैं।

(vii) यह लोहे अथवा लकड़ी के लिन्टलों से सस्ते पड़ते हैं।

(viii) यह आर०सी०सी० का युग है और आर०सी०सी० भवनों में अन्य मैटीरियल के लिन्टल अटपटे लगते हैं।

आर०सी०सी० लिन्टल के कुछ दोष भी हैं, जैसे–

(i) इसमें इस्पात का प्रबलन देते समय सतर्क रहना पड़ता है। तनन इस्पात यदि गलत स्थिति में पड़ गया, तो लिन्टल विफल हो जाता है। प्रबलन तनन क्षेत्र में डाला जाता है।

(ii) लिन्टल डालने के लिये दूला बाँधना पड़ता है।

(iii) लिन्टल जब तक पर्याप्त सामर्थ्य ग्रहण नहीं कर लेता है, इसके ऊपर चिनाई नहीं उठायी जा सकती है। इससे निर्माण प्रगति प्रभावित होती है।

प्रश्न 9—पाड़ या मचान से आप क्या समझते हैं? इसकी आवश्यक अपेक्षायें क्या हैं? पाड़ के संघटक क्या हैं? *(UPBTE 2007, 13)*

उत्तर—पाड़ (Scaffolding)—एक निश्चित ऊँचाई लगभग 1·5 मी० तक तो चिनाई एवं अन्य निर्माण कार्य आसानी से किया जा सकता है परन्तु इससे अधिक ऊँचाई पर कोई भी कार्य जमीन पर खड़े होकर नहीं किया जा सकता है। अधिक ऊँचाई पर मजदूरों के कार्य करने व निर्माण सामग्री एकत्रित करने के लिए बल्लियों, तख्तों एवं रस्सियों आदि से एक अस्थायी प्लेटफार्म बनाया जाता है, जिस पर बैठकर या खड़े होकर राज तथा मजदूर आसानी से निर्माण कार्य कर सकते हैं, पाड़ कहलाता है। निर्माण कार्य खत्म होने पर पाड़ को हटा लिया जाता है। पाड़ दीवार के एक तरफ या दोनों तरफ लगायी जाती है।

पाड़ से की जाने वाली अपेक्षाएँ—पाड़ से निम्न अपेक्षाएँ की जाती हैं—

1. पाड़ मजबूत, सुदृढ़ होना चाहिए जिससे मजदूर, राज निश्चिन्तता से कार्य कर सकें।
2. पाड़ की लम्बाई तथा चौड़ाई पर्याप्त होनी चाहिए जिससे निर्माण सामग्री रखी जा सके।
3. पाड़ हस्तरणीय (Handy) होना चाहिए जिससे उसे पुनर्व्यवस्थित करने में परेशानी ना आए।
4. पाड़ में अधिक भार नहीं होना चाहिए।
5. पाड़ की उपयोग आने वाली सतह समतल होनी चाहिए जिस पर बैठकर आसानी से कार्य किया जा सके।
6. पाड़ एक अस्थायी व्यवस्था है। सुरक्षा की दृष्टि को ध्यान में रखते हुए पाड़ अधिक खर्चीली नहीं होनी चाहिये।

पाड़ के संघटक—पाड़ साधारणतया बल्लियों, बांसों, तख्तों, रस्सियों आदि की व्यवस्थित करके बनाया जाता है। परन्तु उच्च श्रेणी के कार्यों के लिए बल्लियों के स्थान पर लोहे के पाइप, तख्तों के स्थान पर लोहे की चादरें तथा रस्सी के स्थान पर नट बोल्ट का प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा करने से सुरक्षा बनी रहती है तथा एक अच्छे पाड़ की सारी अपेक्षाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा उत्तम श्रेणी के कार्य को ध्यान में रखते हुए खर्चे की चिन्ता करना व्यर्थ है।

प्रश्न 10—विभिन्न प्रकार के मचान (Scaffold) क्या हैं? मैसन मचान का चित्र सहित वर्णन कीजिये।

उत्तर—मचान निम्न प्रकार के होते हैं— *(UPBTE 2002, 06)*

(1) ईंट चिनाई मचान, (2) पत्थर चिनाई या मैसन मचान, (3) सूचिका या कैन्टीलीवर मचान, (4) नलिका या ट्यूबलर मचान, (5) सीढ़ी मचान, (6) झूला मचान या लटकटी मचान, (7) गैण्ट्री मचान।

civilguru.net

मैसन मचान—इस मचान में धारण बल्ली को दोनों सिरों को खड़ी बल्लियों पर टिकाया जाता है। यह मचान निर्माणाधीन दीवार से स्वतन्त्र रहती है और अपने बल पर सीधी खड़ी रहती है। यह मचान पत्थर चिनाई या अधिक मोटी ईंट दीवार निर्माण के लिये उपयुक्त है। यह मचान बहुत सामर्थ्यवान होती है। मचान के दोनों तरफ के स्टेण्डर्ड को लेजर और तिरछी तीन बल्लियों पर जो लेजर पर टिकी है लकड़ी के पट्टे लगाकर या बांसों की चाली रखकर प्लेटफार्म तैयार कर लिया जाता है। देखें चित्र 5। इस मचान की दोनों पंक्तियों के मध्य 1 मीटर से 1·25 मीटर की दूरी पर खड़ी की जाती है। पहली पंक्ति दीवार की फलक से 15 सेमी की दूरी पर खड़ी की जाती है। भार के अधिक मजबूत बनाने के लिये स्टेण्डर्ड को भूमि में गाड़ दिया जाता है। इस मचान को पार्श्विक दृढ़ता प्रदान करने के लिये तथा फिसलने से बचाने के लिये इनके बाहरी ओर अलग से टेक-बन्दी कर दी जाती है।

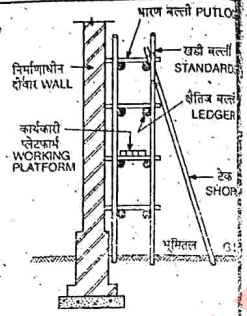

चित्र 5.18

प्रश्न 11—टेकबंदी से आप क्या समझते हैं? टेकबंदी की क्या आवश्यकता है?

उत्तर—संरचना के किसी असुरक्षित भाग को सहारा देने के लिये जो अस्थाई रचना खड़ी की जाती है, उसे टेकबन्दी (Shoring) कहते हैं।

नींव के धँस जाने से अथवा अन्य किसी कारण से, जब भवन की दीवारों में दरारें पड़ जाती हैं अथवा क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और संरचना के ध्वस्त हो जाने का भय उत्पन्न हो जाता है, तब टेक बन्दी करके भवन को गिरने से, अस्थाई तौर पर रोका जा सकता है।

जब भवन में मुख्य संरचनात्मक परिवर्तन करने हों अथवा साथ वाले मकान से सटी हुयी दीवारों में मरम्मत कार्य करने हों, तो भी भवन की सुरक्षा के लिये टेकबन्दी करनी पड़ती है।

टेकबन्दी आवश्यकतानुसार भवन के बाहर अथवा भीतर दोनों ओर से अथवा दोनों तरफ की जा सकती है।

सामान्यत: टेकबन्दी के लिये लकड़ी के बरन तथा कड़ियाँ प्रयोग की जाती हैं, परन्तु अत्यधिक भार व प्रतिक्रियों के लिये लोहे के विभिन्न रूपों का प्रयोग किया जाता है। भवनों के लिये चिनाई अथवा कंक्रीट के टेकें (Shore) भी लगायी जाती हैं।

टेकबन्दी बड़ा नाजुक तथा जोखिम भरा कार्य है। यह उच्च तथा अनुभवी अभियन्ता की देख-रेख में ही सम्पन्न किया जाना चाहिये, जो टेकबन्दी पर पड़ने वाले भार तथा प्रतिक्रियों का भली-भाँति विश्लेषण कर सके। यदि टेकबन्दी कमजोर की जाती है, तो भवन के उस भाग के धराशायी होने पर, टेकबन्दी भी साथ ही नष्ट हो जाती है।

टेकबन्दी की आवश्यकता (Necessity of Shoring)

टेकबन्दी करने की आवश्यकता निम्नलिखित स्थितियों में आवश्यक हो जाती है—

(i) झुकी दीवार को सहारा देने के लिये—जब भवन की किसी दीवार में दरार पड़ जाये अथवा बाहर को और झुक जाये, तो उसे पलटने से बचाने के लिये टेकबन्दी की जाती है।

(ii) क्षतिग्रस्त भाग को निकालने के लिये—जब किसी क्षतिग्रस्त दीवार को निकालकर, उसके स्थान पर नई दीवार बनानी हो, तो उस दीवार पर आलम्बित छत या फर्श को अस्थाई रूप से सहारा देने के लिये, टेकें लगायी जाती हैं।

(iii) नया पाट निकालने के लिये—जब किसी दीवार में दरवाजे, खिड़की आदि के लिये पाट (Opening) निकालना हो, टेकबन्दी आवश्यक हो जाती है।

(iv) कमरों के माप में हेर-बदल करने के लिये—जब दो छोटे कमरों के मध्य की दीवार निकालकर उसके स्थान पर धरन (Beam) डालनी हो, तब दोनों ओर के फर्शों या छतों को सहारा देने के लिये, उनके नीचे टेकें लगाई जाती हैं।

(v) भार सन्तुलन के लिये—जब भवन में अतिरिक्त तल की छत डालनी हो, तब नीचे के फर्शों को अत्यधिक भारित होने से बचाने के लिये, इनके नीचे टेकें दी जाती हैं।

(vi) पड़ोस की संरचनाओं की सुरक्षा के लिये—आपस में सटे हुये भवनों के बीच का क्षतिग्रस्त भवन गिराने के लिये, अगल-बगल के भवनों की सुरक्षा के लिये इनकी टेकबन्दी करनी पड़ती है।

प्रश्न 12—टेकबन्दी कितने प्रकार की होती है? किसी एक को सचित्र बताइये।

उत्तर— टेकबन्दी की प्रकार (Types of Shoring)

क्षतिग्रस्त दीवारों/भवनों के लिये टेकबन्दी निम्न प्रकार से की जाती है—

(i) तिरछी या रेकिंग टेक (Inclined or Raking Shore)

(ii) पड़ी या फ्लाईंग टेक (Horizontal or Flying Shore)

(iii) खड़ी या डैड टेक (Vertical or Dead Shore)

(iv) पुश्ता या स्थाई टेक (Buttress or Permanent Shore)

तिरछी या रेकिंग टेक—सामान्यतया दरार खाती व क्षतिग्रस्त दीवारों के बाहर की ओर झुक जाने तथा पलटने की सम्भावना रहती है, क्योंकि भीतर की ओर इसको फर्शों तथा छत का सहारा बना रहता है। अत: दीवार के बाहर की तरफ लकड़ी की कड़ियाँ तिरछी दिशा में लगाकर दीवार को पलटने से रोका जाता है। इस व्यवस्था को रेकिंग टेक कहते हैं।

तिरछी टेकों की ढाल 60° से 75° रखी जाती है और यह 2 मीटर से 5 मीटर के अन्तराल पर स्थापित की जाती है। लकड़ी की तिरछी टेकबन्दी 5 से 10 मीटर ऊँची दीवारों तक की जाती है।

तिरछी टेक का ऊपरी सिरा दोषपूर्ण दीवार के साथ टिकाया जाता है, तथा निचला सिरा भूमि पर रखा जाता है। ऊपरी सिरे के नीचे एक क्षैतिज दीवार-पट्टी (Wall Plate), 10 cm × 20 cm माप की लगाई जाती है जो दीवार की सतह को सहारा देती है। इस दीवार-पट्टी को 10 cm × 10 cm × 30 cm की खूँटी या निडिल (Needle) गाड़कर, दीवार पर से फिसलने से रोका जाता है। खूँटी 10 cm से 15 cm दीवार के भीतर ठोक दी जाती है। खूँटी को स्थिर करने के लिये इसके ऊपर लकड़ी का गुटका कीलों से ठोक दिया जाता है। तिरछी टेकों का ऊपरी सिरा मोड़ा तराश दिया जाता है, जिससे वह खूँटी तथा दीवार पट्टी पर टिक जाये। इस प्रकार तिरछी टेकों के ऊपरी सिरे को आबद्ध कर दिया जाता है।

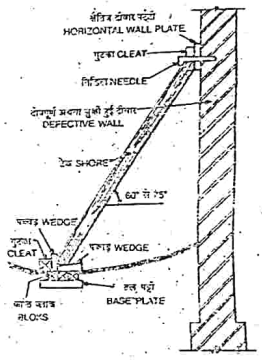

चित्र 4.19—साधारण तिरछी टेक

प्रश्न 13—अध:पुष्टिकरण या अण्डर पिनिंग क्या है? अध:पुष्टिकरण के समय की क्या सावधानियाँ हैं?

उत्तर— अध:पुष्टिकरण या अण्डर पिनिंग (Under Pinning)

परिचय (Introduction)

दीवार की कमजोर नींव को दृढ़ करने, उथली नींव को अधिक गहराई पर ले जाने के लिये, भवन में तहखाना (Basement) बनाने के लिये तथा दीवार के निचले भाग में आवश्यक फेर-बदल करने के लिये अध:पुष्टिकरण (Under Pinning) विधि अपनाई जाती है। इस विधि से दीवार तथा संरचना का भार निडिल धरनों की सहायता से पार्श्व में फर्श या भूमि पर स्थानान्तरित कर दिया जाता है और नींव ब्लॉक संरचना के भार से पूर्णत: मुक्त हो जाती है। अब इसे खोदकर निकाल दिया जाता है तथा वांछित गहराई तक नई नींव डाली जाती है।

अध:पुष्टिकरण विधि से संरचना के अन्य भाग प्रभावित नहीं होते हैं और भवन की सामान्य सुरक्षा बनी रहती है। परन्तु यह कार्य बड़ी सावधानी से तथा धीरे-धीरे उपयुक्त चरणों में पूर्ण किया जाना चाहिये। एक बार में दीवार की नींव का एक मीटर से 1·5 मीटर लम्बाई का भाग खोला जाता है और नींव को वांछित गहराई पर पुन: निर्माण करके तब आगे की लम्बाई ली जाती

है। अधिक लम्बी दीवारों में अध:पुष्टिकरण कार्य मध्य से आरम्भ करके, सिरों की ओर ले जाया जाता है। निडिल-धरनों को तभी निकालना चाहिये, जब नींव पूरी तरह सैट हो जाये और भार वहन करने योग्य बन जाये।

अध:पुष्टिकरण के समय सावधानियाँ (Precautions in Under Pinning Work).

अध:पुष्टिकरण कार्य शुरू करने से पहले, निम्न सावधानियाँ अपनानी आवश्यक हैं—

(i) अध:पुष्टिकरण कार्य शुरू करने से पहले भवन के कमजोर भागों का पता लगाकर उसकी आवश्यक मरम्मत कर दें और दरारों में सीमेण्ट मसाला भर दें।

(ii) भवन में जहाँ आवश्यक है, खड़ी व पड़ी टेकें लगा दें।

(iii) भवन की दीवारों व फर्शों पर तल-चिन्ह लगा दें ताकि अध:पुष्टिकरण के कारण उनके झुकने/नीचे दब जाने का भान होता रहे।

(iv) दीवार-छिद्रों में डाली जाने वाली क्षैतिज निडिल पर्याप्त सामर्थ्यवान होनी चाहिये। इनके टूटने पर सम्पूर्ण संरचना नीचे लटक जाती है।

(v) अध:पुष्टिकरण से सटे भवन/भाग को सभी बाहरी भारों से मुक्त कर दें।

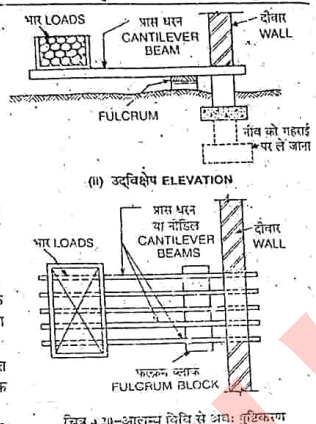

चित्र 4.20—आलम्ब विधि से अध: पुष्टिकरण

प्रश्न 14—अण्डर पिनिंग की मुख्य विधियाँ क्या हैं? किसी एक का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर— **अण्डर पिनिंग की विधियाँ (Methods of Under Pinning)**

अध:पुष्टिकरण की तीन विधियाँ मुख्य हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—

(i) प्रास विधि (Cantilever Method),

(ii) आलम्ब विधि (Fulcrum Method),

(iii) ब्लॉक विधि (Block Method)।

आलम्ब विधि—जब दीवार जिसकी नींव गहरी व सामर्थ्यवान बनानी है, के बाहर की तरफ पर्याप्त स्थान उपलब्ध न हो, तब निडिलों का लटकता सिरा अन्दर की तरफ रखा जाता है। दीवार के पास कंक्रीट का आलम्ब ब्लॉक (Fulcrum) बनाकर उस पर निडिलों को आधारित कर दिया जाता है। निडिलों का एक सिरा दीवार के छिद्रों में दबा रहता है तथा दूसरे सिरे पर, जो प्रास की भाँति हवा में लटकता रहता है, दीवार भार के समतुल्य भार रखा जाता है। यह भार कंक्रीट के पूर्व-निर्मित ब्लॉकों या लोहे के गर्डरों को रख कर डाला जाता है। अब दीवार का भार निडिलों पर सन्तुलित हो गया है। इसके बाद पुरानी नींव को खोदकर निकाल दिया जाता है और इसके स्थान पर नई तथा अधिक गहरी वांछित नींव डाली जाती है, जिसे ऊपर उठाकर मूल दीवार से जोड़ दिया जाता है।

प्रश्न 15—फरमाबन्दी की क्या आवश्यकता है? फरमाबन्दी के वांछित गुणों को बताइये।

उत्तर— **फरमा-बन्दी की आवश्यकता**

कंक्रीट प्रारम्भिक अवस्था में एक सुघट्य पदार्थ होती है, जिसे किसी भी वांछित आकृति में ढाला जा सकता है। परन्तु कंक्रीट ढालने के समय से लेकर जब तक उसमें स्वयं का भार वहन करने की सामर्थ्य उत्पन्न नहीं होती है, उसे सम्भाले रखने

के लिये एक अस्थायी सहारे की आवश्यकता रहती है। इस सहारे को फरमाबन्दी अथवा ढूला एवं तख्ता बन्दी (Centring and Shuttering) कहते हैं। कंक्रीट अवयवों को ढालने के लिये जो साँचा तैयार किया जाता है, उसे तख्ता बन्दी तथा साँचे को आवश्यक स्थिति (कँचाई) पर टिकाने के लिये जो आलम्ब दिये जाते हैं, उसे ढूला कहते हैं। कंक्रीट के सैट हो जाने पर यह फ़रमाबन्दी हटा दी जाती है। यह अवधि कंक्रीट अवयव की प्रकार के अनुसार 3 दिन से 21 दिन तक ली जाती हजै।

फरमाबन्दी इतनी मजबूत और दृढ़ होनी चाहिये, कि यह गीली कंक्रीट का भार, कंक्रीट की कुटाई करते समय उत्पन्न संघट्ट (Impact) तथा ढलाई करने वाले मजदूरों का भार भली प्रकार सहन कर सके। यदि फार्म वर्क, कंक्रीटिंग के समय अथवा कंक्रीट के सैट होते समय नीचे की ओर या पार्श्व में झुक जाता है, तो संरचना की शक्ल विकृत हो जायेगी, जिसको बाद में ठीक करना कठिन होता है। कंक्रीट के अवयव ढलाई करते समय यदि किसी कारण से झुक जाते या टेढ़े हो जाते हैं, तब बाद में अन्य मैटीरियल की भाँति इनकी मरम्मत नहीं हो सकती है। तब दूषित खण्ड को निकाल/तोड़कर, इसकी पुन: ढलाई ही करनी पड़ती है।

फरमाबन्दी के वांछित गुण (Requirements of Form Work)

फरमाबन्दी में निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहियें—

(i) परिमाप—फार्म वर्क कंक्रीट अवयवों के माप के अनुसार शुद्ध तथा सही होना चाहिये। कंक्रीट सूखते समय सिकुड़ती है अत: तख्ता बन्दी के भीतरी माप में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिये।

(ii) समतल सतह—तख्ताबन्दी की भीतरी सतह साफ, समतल तथा जोड़-रहित होनी चाहिये, ताकि कंक्रीट के अवयवों की सतह सफाई व चिकनी प्राप्त हो। कंक्रीट डालने से पहले फरमे की भीतरी सतह की भी जाँच कर लेनी चाहिये।

(iii) दृढ़ता—ढूला तथा तख्ताबन्दी पर्याप्त मजबूत व दृढ़ हो, ताकि यह गीली कंक्रीट का तथा उस पर काम करने वाले मजदूरों का भार वहन कर सके। प्रदलित सीमेन्ट कंक्रीट का भार 2500 किग्रा प्रति घन मीटर लिया है। (I.S. Code 456)।

(iv) हटाने में सरलता—ढूला तथा तख्ताबन्दी ऐसी होनी चाहिये, कि इसे निर्माण के पश्चात् सरलता से हटाया जा सके। यह कंक्रीट सतह से चिपकनी नहीं चाहिये।

(v) जल-रोधी—तख्ताबन्दी जल-रोधी होनी चाहिये ताकि यह गीली कंक्रीट का पानी न सोख सके।

(vi) भार—इसका स्वयं का भार कम होना चाहिये ताकि इसे लगाते/हटाते समय दिक्कत न हो।

(vii) मानक खण्ड—फरमाबन्दी के खण्ड मानक परिमाप के अपनाने चाहियें ताकि इनका बार-बार इस्तेमाल हो सके।

(viii) लागत—तख्ताबन्दी पर कंक्रीट रचना की लागत का लगभग 20 से 35% खर्च आता है, अत: यह मितव्ययी होनी चाहिये।

प्रश्न 16—प्रकाष्ठ तथा इस्पात की फरमाबन्दी की तुलना कीजिये। (2016)

उत्तर— **प्रकाष्ठ तथा इस्पात की फरमाबन्दी की तुलना**

यह तुलना निम्नलिखित है—

क्र. सं.	प्रकाष्ठ की फरमाबन्दी	इस्पात की फरमाबन्दी
1.	लकड़ी प्रारम्भिक लागत कम होती है। लकड़ी के पटरे, बाँस-बल्ली सभी जगहों पर मिल जाते हैं।	इसकी प्रारम्भिक लागत काफी अधिक होती है। यह विशेष तौर पर बाहर (फैक्टरी) से मँगवानी पड़ती है।
2.	मौके पर कंक्रीट अवयवों के माप के अनुसार जोड़ी/काटी जा सकती है।	इस्पात के खण्ड मानक माप के होते हैं। सही फरमाबन्दी खड़ी करने में काफी मज़-वज़ की आवश्यकता पड़ता है।
3.	आयु कम होती है। इसे बार-बार इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है।	आयु काफी होती है। अनेक बार इस्तेमाल की जाती है।
4.	आग/वर्षा/नमी/कीटों से नष्ट होने का भय रहता है।	आग/वर्षा/सीलन से कम प्रभावित होती है।

engineerbix.net

5.	इसकी सामर्थ्य कम होती है।	इसकी सामर्थ्य बहुत अधिक होती है।
6.	लकड़ी की फरमाबन्दी के सिकुड़ने व टेढ़ा होने का भय रहता है।	इस्पात की फरमाबन्दी सिकुड़ती व टेढ़ी नहीं होती है।
7.	इस फरमाबन्दी को हटाने/लगाने में समय बहुत लगता है।	मानक खण्डों में होने के कारण शीघ्र हटाई जा सकती है।
8.	भीतर की सतह पूर्ण साफ नहीं होती है। इस पर अस्तर (Lining) लगाना पड़ सकता है।	भीतरी सतह साफ, समतल व चिकनी होती है, अतः आस्तरण की कतई आवश्यकता नहीं है।
9.	जंगल समाप्त होते जा रहे हैं और लकड़ी दुर्लभ होती जा रही है।	यह फैक्टरी उत्पाद है। मिलने में कोई दिक्कत नहीं है।

प्रश्न 17—डाट से सम्बन्धित निम्न पदों की परिभाषा दीजिये— *(UPBTE 2007)*
(i) एक्टमेंट (ii) स्पेंड्रिल (iii) बासोइर (Viassair) (iv) कीस्टोन

उत्तर—(i) एक्टमेंट—डाट का प्रथम तथा अन्तिम वासाइर जहाँ पर टिका होता है उस आधार को एक्टमेन्ट कहते हैं। इसको कोणदार भी बनाया जाता है।

(ii) स्पेंड्रिल—एक तरफ की वासाइरों की ऊर्ध्वाधर ऊँचाई स्पेंड्रिल कहलाती है। यह एक्टमेन्ट से की-स्टोन तक की ऊँचाई होती है।

(iii) वासोइर—डाट में प्रयुक्त कोणदार पत्थर वासोइर कहलाते हैं।

(iv) की-स्टोन—डाट के मध्य में लगे सबसे बड़े वासोइर पत्थर को की-स्टोन कहते हैं। इसके क्षतिग्रस्त होने से समस्त डाट गिर जाती है।

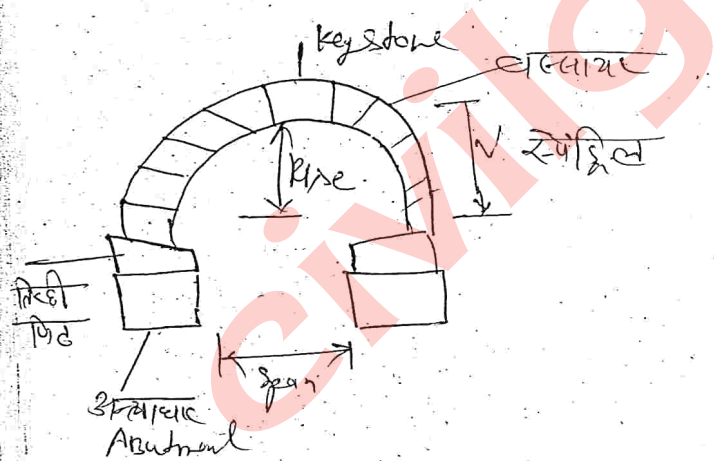

5 दरवाजे, खिड़कियाँ तथा रोशनदान (Doors, Windows & Ventilators)

प्रश्न 1—दरवाजे की क्यों आवश्यकता है? दरवाजे में मुख्य घटक क्या है?

उत्तर—

आवश्यकता (Necessity)

कमरों में प्रवेश के लिये इसकी दीवारों में दरवाजे लगाये जाते हैं। प्रत्येक कमरे में एक दरवाजा होना आवश्यक है। कमरे के आकार व उपयोगिता के अनुसार एक कमरे में एक से अधिक दरवाजे भी लगाये जाते हैं और इसी दृष्टि से इनके माप भी निर्धारित किये जाते हैं। दरवाजा बन्द करने पर जहाँ एकान्तता (Privacy) व सुरक्षा मिलती है, वहाँ खुले होने पर, प्रकाश व वायु का भी संचरण होता है।

दरवाजे के मुख्यतः दो घटक होते हैं—

(i) चौखट (Chaukhat or Frame)

(ii) कपाट या पल्ले (Shutter or Leaf)।

प्रश्न 2—दरवाजे के प्रमुख प्रकार, उनके उपयोग व दरवाजा बनाने में विभिन्न पदार्थों के गुण व दोष बताइये। *(UPBTE 2015)*

उत्तर—(1) पुश्तवानी दरवाजा—यह एक साधारण तथा सस्ता दरवाजा है जो निम्न स्तर के मकानों, स्टोर, पशुबाड़ों, कोठरियों में लगाया जाता है।

(2) पुश्तवानी बन्धनी दरवाजा—इसका प्रयोग कम लागत के मकानों में, रसोईघरों तथा मकान घरों में किया जाता है। यह साधारण पुश्तवानी दरवाजों से मजबूत होता है।

(3) फोल्डर दरवाजा—यह मजबूत दरवाजा है। इसका प्रयोग ग्रामीण क्षेत्रों में कच्चे पक्के घरों के लिये किया जाता है।

(4) पिल्लेदार दरवाजा—यह टिकाऊ मजबूत व सुन्दर दरवाजा है। इसके पूरे भाग में पैनल लगे होते हैं। इसका प्रयोग आवासीय तथा सार्वजनिक भवनों के लिये किया जाता है।

(5) फ्रेंचित दरवाजा—इस दरवाजे के फ्रेम के अन्दर पूरे भाग में काँच लगा होता है। इसका उपयोग शोरूम, काच टाकर तथा होटलों में किया जाता है।

(6) जालीदार दरवाजा—जालीदार दरवाजा विशेष तौर पर खिड़की, भोजन कक्ष, रेस्ट्रा इत्यादि में लगाया जाता है। इसका सरकारी कार्यालयों में भी उपयोग किया जाता है। इसके उपयोग से मक्खी, मच्छर व कीड़े-मकोड़े अन्दर नहीं आते हैं।

दरवाजा बनाने के लिये विभिन्न पदार्थों के गुण व दोष—दरवाजा बनाने के लिये मुख्यतः निम्नलिखित पदार्थों के गुण व दोष—

दरवाजा बनाने में मुख्य रूप से इस्पात, लकड़ी, काँच एवं स्टील का उपयोग होता है। इस्पात के प्रयोग से दरवाजा मजबूत व टिकाऊ होता है, किन्तु यह महँगा पड़ता है। यही गुण स्टील का भी है। लकड़ी के प्रयोग से दरवाजा हल्का होता है और इस्पात से सस्ता भी पड़ता है किन्तु दीमक लगने की सम्भावना बनी रहती है। काँच के प्रयोग से दरवाजे की शोभा बढ़ जाती है किन्तु यह अत्यधिक नाजुक पदार्थ होता है।

प्रश्न 3—फाटक या गेट का क्या उपयोग है? ये कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर—

फाटक या गेट (Gates)

कारखानों, मिलों, बंगलों तथा सार्वजनिक भवनों के प्रवेश-द्वार या परिसर दीवार में फाटक (गेट) लगाये जाते हैं। गेटों का माप, पहुँच मार्ग तथा सड़क की चौड़ाई के अनुसार रखा जाता है, ताकि सभी प्रकार के वाहन (कार, ट्रक आदि) आवश्यकतानुसार अन्दर आ सकें। सामान्यतः यह 2·5 से 4·0 मी चौड़े रखे जाते हैं और एक पल्ले अथवा दोहरे पल्ले वाले होते हैं। पल्लों की चौड़ाई समान अथवा भिन्न हो सकती है। फाटक जहाँ सुरक्षा प्रदान करते हैं, वहाँ भवन की शोभा भी बढ़ाते हैं।

civilguru.net

फाटक (Gate) निम्न प्रकार के होते हैं—

(i) खोखला स्टील गेट (Hollow Steel Gate)

(ii) स्पाट शीट स्टील गेट (Plain Sheet Steel Gate)

(iii) लहरिया शीट स्टील गेट (Corrugated Sheet Steel Gate)

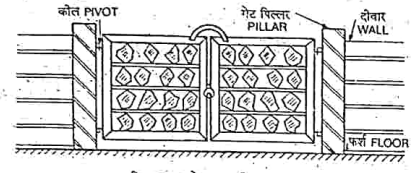

चित्र 5.1–खोखला स्टील फाटक

उपरोक्त गेट साधारण दरवाजे की भाँति अन्दर अथवा बाहर खुलते हैं। यह गेट चित्रों 5.1 से 5.3 में दर्शाये गये हैं।

गेटों के निर्माण के लिये लोहे के एंगिल, चैनल, शीट, पाइप इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। यह विभिन्न डिजाइन में बनाये जाते हैं। यह लोहे की कील (Pivot) पर, जो चिनाई के स्तम्भों में दबा दी जाती है, घूमते हैं। बन्द करने तथा खोलते समय, यह आसानी से घूम सके, इसके लिये इनके बाहरी सिरों के नीचे इस्पात के रोलर लगा दिये जाते हैं।

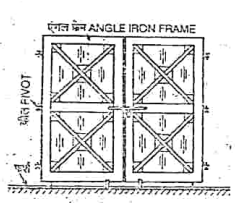

चित्र 5.2–स्पाट शीट स्टील फाटक

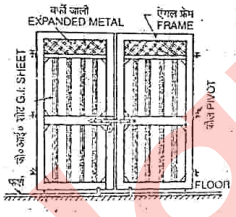

चित्र 5.3–लहरिया शीट स्टील गेट

(A) प्रश्न 4—खिड़की व रोशनदान में अंतर बताइये। खिड़की से सम्बन्धित रोशनदान का स्केच बनाइये। *(UPBTE 2009)*

उत्तर—खिड़की व रोशनदान में अन्तर—कमरे में प्रकाश तथा वायु के प्रवेश के लिए दीवारों तथा खिड़कियाँ लगायी जाती हैं तथा दूषित वायु के बाहर निकास के लिए रोशनदान लगाये जाते हैं। रोशनदान प्राय: छत के थोड़ा नीचे दीवार में लगाये जाते हैं जिससे दूषित वायु ऊपर उठकर रोशनदान से बाहर निकल जाती है। रोशनदान प्राकृति रोशनी को कमरे में आने के लिए भी लगाये जाते हैं।

खिड़की तथा दरवाजों से वायु कमरे में प्रवेश करती है तथा रोशनदानों से बाहर निकल जाती है।

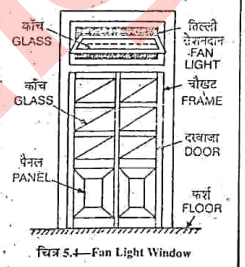

चित्र 5.4—Fan Light Window

(A) प्रश्न 5—रोशनदानों के महत्त्व को समझाइये। एक संयुक्त रोशनदान और दरवाजे का स्केच बनाइये। *(UPBTE 2011)*

उत्तर—कमरे से दूषित वायु बाहर निकालने के लिये रोशनदान लगाये जाते हैं। अत: ऊँचाई पर सीलिंग के पास लगाये जाते हैं। रोशनदान द्वारा आकाश से प्रकाश सीधा भीतर आता है। अत: इनका आजकल उपयोग दरवाजे व खिड़की के ऊपर लगाने में अधिक हो रहा है।

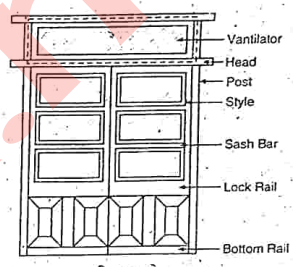

चित्र 5.5–रोशनदान

(A) प्रश्न 6—रोशनदान क्या हैं? विभिन्न प्रकार के रोशनदान जो भवन में उपयोग में आते हैं, का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2006)*

उत्तर—रोशनदान—कमरे की दूषित वायु को बाहर निकालने के लिये लगाये जाते हैं। ये छत के पास स्थित होते हैं। ये निम्न प्रकार के होते हैं—

(1) पल्ली रोशनदान—यह दरवाजे या खिड़की के ठीक प्रकार उसी चौखट में एक Transome लगाकर बनाये जाते हैं। इसको खोलने पर कमरे में वायु का आवागमन बना रहता है। इसको Fanlight भी कहते हैं।

(2) ढालू छत रोशन दान—यह रोशनदान ढालू छतों में ढाल के समान्तर छत का उचित भाग काटकर बनाये जाते हैं।

(3) समतल छत रोशनदान—ऐसी गैलरी या भीतरी कमरे जो चारों तरफ से अन्य कमरों से घिरे होते हैं, उनमें उचित प्रकार की व्यवस्था के लिये चपटे छत में रोशनदान लगाये जाते हैं। ये रोशनदान छत के ऊपर निकले होते हैं। बक्से के आकार के होते हैं, जिसके चारों ओर प्रकाश के लिये काँच लगाया जाता है। कमरे को वर्षा के पानी से बचाने के लिये रोशनदान पर स्लेप या चादरें लगा दी जाती हैं।

प्रश्न 7—'फ्लश दरवाजा' व कसमेन्ट खिड़की को समझाइये। *(UPBTE 2006)*

उत्तर—फ्लश दरवाजे—इन दरवाजों में अन्दर की तरफ निम्नश्रेणी की सस्ती लकड़ी होती है जिसके दोनों तरफ प्लाई लगा दी जाती है। इस दरवाजे की दोनों सतह समतल होती है जिसके कारण इन दरवाजों पर धूल व गंदगी नहीं जमती है जिससे इनको साफ करने की समस्या नहीं रहती है। सार्वजनिक भवनों व कार्यालयों में आजकल इन दरवाजों का काफी प्रचलन है। उच्च श्रेणी के आवासीय भवनों में भी आजकल काफी प्रयोग बढ़ रहा है। ये दरवाजे काफ़ी महंगे पड़ते हैं।

इन दरवाजों को बाहरी तरफ, जहाँ वर्षा का पानी या धूल आती हो, प्रयोग नहीं करना चाहिये। नमी व धूप में दरवाजों पर चढ़ी प्लाई खराब हो

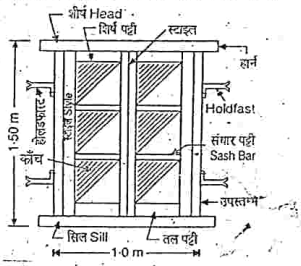

चित्र 5.6–फ्लश दरवाजा

civilguru.net

जाती है। स्नानघरों व अन्य ऐसे स्थानों पर जहाँ दरवाजा पानी के सम्पर्क में आता हो वहाँ इन दरवाजों का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

केसमेन्ट खिड़की—केसमेन्ट खिड़की एक साधारण दरवाजे की भाँति होती है जिसमें चौखट लगाकर कपाट फिट कर दिये जाते हैं। यह कपाट अन्दर या बाहर की ओर खुलते हैं। चौखट की दीवार में स्थिर करने के लिये लोहे के होल्ड-फास्ट लगाये जाते हैं। केसमेन्ट खिड़की के पल्ले पूर्णत: काँचदार या आंशिक रूप से काँचदार तथा पैनल युक्त होते हैं। काँच लगाने के लिये स्टाइलों और क्षैतिज पट्टियाँ जिन्हें साधारण पट्टी कहते हैं, प्रयोग करते हैं। आजकल पूरे पल्ले में एक ही काँच लगाया जाता है जिससे कमरे में अधिक प्रकाश आता है।

जो खिड़कियाँ बाहरी दीवारों पर स्थित हों उनके ऊपर छज्जे या सनशेड लगाने चाहियें ताकि वर्षाजल तथा धूप सीधी कमरे में न आये।

प्रश्न 8—संवातन और प्रकाश करण की मुख्य विशेषताओं को लिखिये।

उत्तर—संवातन की विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(1) संवातन के द्वारा ताजी, शुद्ध वायु पर्याप्त रूप से भीतर प्रवेश करती है।

(2) संवातन द्वारा उचित वायुमण्डलीय दाब व ताप बना रहता है।

(3) संवातन के द्वारा मनुष्य द्वारा आर्द्रता का सही मात्रा में उपयोग किया जाता है अर्थात् आर्द्रता संवातन के द्वारा ही कंट्रोल की जाती है।

प्रकाश करण की मुख्य विशेषतायें—प्रकाश करण की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(1) मनुष्य को अपना कार्य करने के लिये उपयुक्त रोशनी की आवश्यकता पड़ती है जो प्रकाश करण के माध्यम से प्राप्त होती है।

(2) प्रकाश के माध्यम से कमरों के फर्श व भीतरी दीवारों से शीतन की दूर करता है जिसका माध्यम प्रकाश करण होता है।

(3) कमरों में एकत्रित कार्बन-डाइ-ऑक्साइड, दुर्गन्ध, धुआँ, बैक्टीरिया अथवा अन्य दूषित गैसों को बाहर निकालता है।

प्रश्न 9—फ्रेमेदार खिड़की को सचित्र समझाइये। *(UPBTE 2007)*

उत्तर—**फ्रेमेदार खिड़की**—यह खिड़की एक साधारण दरवाजे की भाँति होती है। जिसमें चौखट लगाकर कपाट फिट कर दिये जाते हैं।

कपाट एक अथवा अधिक हो सकते हैं। यह कपाट अन्दर या बाहर दोनों ओर खुलने वाले होते हैं।

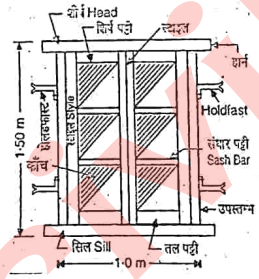

चित्र 5.7–फ्रेमेदार खिड़की

प्रश्न 10—फ्रेम्ड तथा दिल्लेदार दरवाजा को सचित्र समझाइये। *(UPBTE 2009)*

उत्तर—फ्रेम्ड तथा दिल्लेदार दरवाजा—लकड़ी की ऊर्ध्व व क्षैतिज पट्टियों का फ्रेम बनाकर इसे कई भागों में विभाजित कर लिया जाता है। फ्रेम के बीच में जो खाली स्थान रह जाता है, उसे दिल्ला कहते हैं तथा इस प्रकार के दरवाजों को दिल्लेदार दरवाजे कहते हैं।

प्रश्न 11—खिड़कियों व दरवाजों में लगने वाले मुख्य कब्जों का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर—कब्जे (Hinges)—यह पल्लों को चौखट से जड़ने के काम आते हैं। कब्जे लोहे, पीतल, एल्युमिनियम आदि धातुओं के बने होते हैं और 50 mm से 125 mm माप में बनाये जाते हैं। मुख्य कब्जे निम्न हैं। यह चित्र 5.9 में दर्शाये गये हैं।

(i) पार्लियामेंटरी कब्जा (Parliamentary Hinge)

(ii) गार्नेट या टी-कब्जा (Garnet or T-Hinge)

(iii) पट्टी कब्जा (Strap Hinge)

(iv) टक्करी कब्जा (Butt Hinge)

(v) आरोही टक्करी कब्जा (Rising Butt Hinge)।

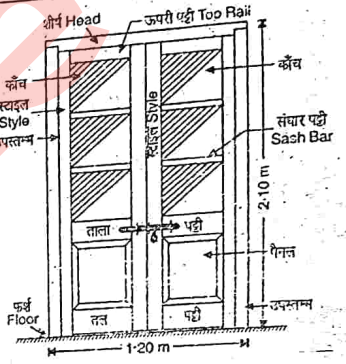

चित्र 5.8–फ्रमेदार खिड़की

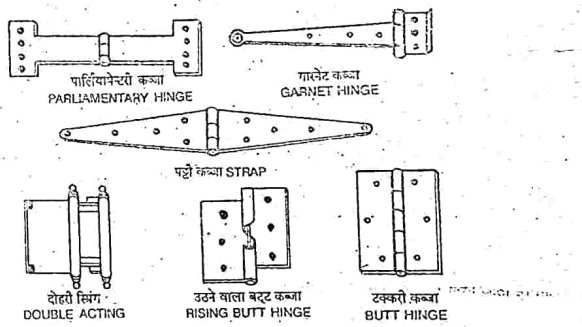

चित्र 5.9–कब्जे (Hinges)

प्रश्न 12—काँच जुड़ाई या ग्लेजिंग क्या है?

उत्तर—

काँच जुड़ाई या ग्लेजिंग (Glazing)

दरवाजे-खिड़कियों के पेनल में काँच लगाने को ग्लेजिंग कहते हैं। बड़े पेनल में संघार पट्टी (Sash Bar) लगाकर उपयुक्त माप में बाँट लिया जाता है और उसी माप का काँच काटकर इसमें फिट कर दिया जाता है। काँच को काटने के लिये ग्लेजियर डायमण्ड (काँच हीरा) प्रयोग किया जाता है।

engineering net

काँच को टिकाने के लिये संधार पट्टी में 10 मिमी० का पताम (Rebate) काटा जाता है। काँच को स्थिर करने के लिये पुटीन (Putty) अथवा लकड़ी की स्ट्रिप (Beading) लगाई जाती है। धातु की चौखटों में काँच जड़ने के लिये बीडिंग नहीं लगाई जाती है, बल्कि फ्रेम में बने छिद्रों में तार के स्प्रिंगदार क्लिप फूँसकर पुटीन भर दी जाती है। काँच की मोटाई 0·1 m^2 के पेनल तक 2 mm और इससे बड़े पेनल के लिये 4 mm से कम नही होनी चाहिये। स्नानगृह व शौचालय की खिड़कियों/रोशनदानों में फ्रोस्टड (अर्ध-पारदर्शक) काँच लगाया जाता है। काँच की फ्रोस्टड (Frosted) फलक भीतर को रखी जाती है।

प्रश्न 13—प्रकाष्ठ में लगने वाले प्रमुख जोड़ कौन-कौन से हैं?

उत्तर—लकड़ी के दरवाजे, खिड़कियाँ तथा कैंचियाँ (Wooden Truss) बनाने के लिये इनके लघु अवयवों को लम्बाई/चौड़ाई में जोड़ना पड़ता है। प्रकाष्ठ के मुख्य जोड़ निम्न प्रकार के होते है—

(i) आयामन जोड़ (Lengthening Joints)
(ii) चौड़ीकरण या पार्श्ववर्ती जोड़ (Widening or Side Joints)
(iii) फ्रेमिंग जोड़ (Framing Joints)
(iv) तिरछे जोड़ (Oplique-Shouldered Joints)
(v) कोना जोड़ (Angle or Corner Joints)
(vi) धारक जोड़ (Bearing Joints)।

प्रश्न 14—झिलमिली खिड़की क्या होती है?

उत्तर— **झिलमिली खिड़की (Louvered Window)**

(a) विशेषता—यह खिड़की झिलमिली दरवाजों की भाँति बनायी जाती है। इस खिड़की की बन्द अवस्था में, हवा का आवागमन बराबर बना रहता है और कमरे की दृश्य गोपनीयता भी बनी रहती है। झिलमिली पत्तियाँ एक डोरी व हिंज की सहायता से किसी भी कोण पर समन्जित की जा सकती हैं अथवा ये स्थिर प्रकार की भी होती हैं।

(b) उपयोग—यह खिड़की फैक्टरी, स्नानघरों, शौचालयों आदि में अधिक लगाई जाती है। यात्री गाड़ी के डिब्बों की खिड़कियों के बाहरी पट झिलमिली होते हैं। बैंकों तथा अधिकारियों के कक्ष की खिड़कियाँ प्राय: झिलमिली रखी जाती हैं।

प्रश्न 15—एक झिलमिली दरवाजे का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर— **झिलमिली दरवाजा (Louvered Door)**

(a) रचना—इस दरवाजे के पल्ले में लकड़ी, काँच, प्लास्टिक, एल्युमिनियम इत्यादि की पतली स्ट्रिपें (strips), तिरछी दशा में, 45° के कोण पर, स्टाइलों के मध्य स्थान में, एक-दूसरी को आंशिक ढाँपती हुई लगायी जाती हैं। इस व्यवस्था से दरवाजे के बन्द होने पर, अन्दर या बाहर दिखाई नहीं देता है, परन्तु वायु का आवागमन बराबर बना रहता है और एकान्तता भी कायम रहती है। रेल के सवारी डिब्बे की खिड़की का बाहरी शटर झिलमिली (louvered) होता है।

झिलमिल पट्टियों को एक अन्य ऊर्ध्वाधर पट्टी से सम्बद्ध करके, इन्हें किसी भी कोण पर अथवा क्षैतिज किया जा सकता है। पट्टियों के क्षैतिज होने पर, अन्दर-बाहर देखा जा सकता है, और प्रकाश व हवा का अधिकतम आवागमन बना रहता है।

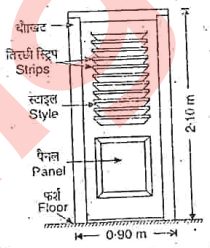

चित्र 5.10–झिलमिली दरवाजा

(b) उपयोग—यह कपाट आवासीय भवनों में तथा सार्वजनिक प्रसाधन स्थलों में लगाये जाते हैं।

प्रश्न 16–इमारतों में नमी को नियंत्रित करने के लिए अपनाए जाने वाले तरीके समझाइए। *(UPBTE 2013)*

उत्तर—भवनों में सीलन रोकने के लिये अनेक उपाय किये जाते हैं, जिनमें मुख्य निम्नलिखित हैं—

(i) सीलन-रोक परत लगाकर (Damp-Proofing Layer)
(ii) सतह-उपचार (Surface Treatment)

(iii) समाकलित सील-रोधन (Integral Damp Proofing)
(iv) गुनाइटिंग या बल-पूर्वक जल-रोधक पदार्थ भरना (Guniting)
(v) खोखली दीवारें बनाकर (Cavity Wall Construction)

वर्णन इस प्रकार है—

(1) सीलन-रोक परत या झिल्ली लगाना—सीलन के स्रोत और दीवार, छत अथवा फर्श के बीच सीलन-रोक या जल-सह पदार्थ की एक या दो परतें लगा दी जाती हैं, जो सीलन को आगे बढ़ने से रोक देती हैं। यह परतें क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर स्थिति में लगाई जाती हैं।

सीलन-रोक परत के लिये अनेक मैटीरियल प्रयोग किये जाते हैं, जिनका वर्णन अनुच्छेद 5.6 में किया गया है।

(2) सतह उपचार—दीवारों तथा छतों की सतहों पर जहाँ वर्षा का पानी पड़ने से लगातार सीलन बनी रहती है, उपचार के लिये उन पर उपयुक्त जल-रोधी पदार्थ का लेप कर दिया जाता है, जिससे सतह के रन्ध्र (voids) भर जाते हैं और सीलन का भीतर घुसना रुक जाता है।

लेप के लिये बिटूमन, कोलतार, मोम, चपड़ा, रेजिन, सोडियम या पोटेशियम सिलिकेट, जिंक या एल्युमिनियम सल्फेट, बेरियम हाइड्रॉक्साइड, चूना, पेन्ट, वार्निश, सीमेन्ट-पेन्ट (ड्यूरोसम, स्नोसम, सुपरसम, एक्यूआसम) इत्यादि का प्रयोग किया जाता है, जिनका घोल तैयार करके ब्रुश से सतह पर एक या दो कोट कर दिये जाते हैं।

बिटूमन तथा कोलतार अच्छे सीलन-रोक पदार्थ हैं, परन्तु काले रंग के कारण इनका प्रयोग बाहरी दीवारों पर नहीं किया जाता है। परन्तु छतों, गोदामों व तहखानों के लिये प्रयोग करने में कोई आपत्ति नहीं है। बिटुमिन या कोलतार को गर्म करके, सतह पर 1·20 कि० ग्रा० प्रति वर्ग मीटर की दर से लेप करके उसके ऊपर मोटी रेत की परत फैला दी जाती है। इसी प्रकार सनलाइट साबुन का घोल लगाकर उसके ऊपर फिटकरी के घोल लगाने से भी सन्तोषजनक परिणाम मिलते हैं।

सतह का उपचार केवल पृष्ठीय सीलन को हटाने के लिये ही अपनाया जाता है।

(3) समाकलित सील-रोधन—इस विधि में चिनाई का मसाला तैयार करते समय अथवा कंक्रीट बनाते समय इनके अन्दर कुछ विशेष यौगिक मिला दिये जाते हैं, जो मसाले या कंक्रीट के रन्ध्रों में भर जाते हैं, और इन्हें जल-रोधक बना देते हैं।

जल प्रतिरोधक पदार्थ बाजार में विभिन्न नामों से मिलते हैं, जैसे इम्पर्मो (Impermo), पडलो (Pudlo), सीको (Ciko), कम्पोसील (Composeal), एक्यूआसील (Aquaseal) इत्यादि। इन पदार्थों की प्रयोग विधि इनके निर्माताओं द्वारा डिब्बों पर अंकित रहती है।

(4) गुनाइटिंग—दीवार तथा फर्श के सीलन-ग्रस्त भागों व जोड़ों के अन्दर सीमेन्ट-बालू, मसाला, 1 : 2 या 1 : 3 के अनुपात में, बलपूर्वक, सम्पीडित हवा की सहायता से घुसाया जाता है। मसाला सैट हो जाने पर पूर्णत: जल-अप्रवेश्य हो जाता है। इस क्रिया के लिये सीमेन्ट गन (gun) का प्रयोग किया जाता है।

जलाशयों तथा शिरोपरि टैंकों की सतह जल-अप्रवेश्य बनाने के लिये भी गुनाइटिंग विधि अपनाई जाती है।

(5) खोखली दीवारों के निर्माण द्वारा—यह दीवारें बीच से खोखली होती हैं और दो फलकों में बनाई जाती हैं, जिनके बीच 5 सेमी० या अधिक खाली स्थान (cavity) छोड़ा जाता है। दीवार में खाली स्थान के कारण, बाहर से सीलन अन्दर की दीवार तक नहीं पहुँच सकती, अत: कमरे भीतर से पूर्णत: सीलन मुक्त हो जाते हैं। खोखली दीवारें ठण्ड, ऊष्मा तथा शोर को भी अन्दर आने से रोकती हैं। खोखली दीवारें अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों के लिये उपयुक्त हैं।

civilpurkar.net

6 फर्श तथा फर्श आवरण (Floors & Floorings)

प्रश्न 1—फर्श क्या होता है? एक अच्छे फर्श की विशेषतायें बताइये। *(UPBTE 2005)*

उत्तर—कुरसी तल (Plinth) से सटा तथा भवन की विभिन्न ऊँचाई पर बनाये गये क्षैतिज सपाट तल (प्लेटफार्म) जो रहने, कार्य करने तथा सामान रखने के काम आते हैं, फर्श कहलाते हैं। फर्श, भवन को अनेक मन्जिलों में विभाजित करते हैं। जो फर्श कुरसी तल के पास डाला जाता है, उसे भूतल या धरातल फर्श (Ground Floor) कहते हैं तथा इसके ऊपर के फर्श क्रमण में पहला फर्श (First Floor), दूसरा फर्श (Second Floor), तीसरा फर्श (Third Floor) इत्यादि कहलाते हैं। भवन में सबसे ऊपरी तल या आवरण को छत (Roof) कहते हैं। एक फर्श तल से दूसरे फर्श तल पर जाने के लिये जीना (Stairs), प्रवेणी (Ramp) अथवा लिफ्ट (Lift) लगायी जाती है।

जो फर्श भूमि तल से नीचे बनाया जाता है, उसे तहखाना-फर्श (Basement Floor) कहते हैं। तहखाना में जाने के लिये भी जीना या प्रवेणी की व्यवस्था की जाती है।

अच्छे फर्श की विशेषतायें (Qualities of a Good Floor)

एक अच्छे फर्श में निम्नलिखित गुण होने चाहियें—

(i) सामर्थ्य—फर्श अपने ऊपर पड़ने वाले भार के प्रति दृढ़ रहे और यह नीचे को न धँसे। भारी चल/अचल भार अथवा सीलन के कारण, प्राय: फर्श नीचे धँस जाते हैं।

(ii) घिसन व टिकाऊ—फर्श मजबूत व टिकाऊ हो। इसकी ऊपरी सतह उच्च घर्षणरोध प्रतिरोधक होनी चाहिये।

(iii) सीलन मुक्त—फर्श पर सीलन नहीं रहनी चाहिये अन्यथा इस पर रखी वस्तुएँ विकृत होने लगती हैं। जहाँ पर वर्षा अधिक होती है, वहाँ सीलन का विशेष ध्यान रखना होता है।

(iv) फिसलन रोधी—चलते-फिरते तथा कार्य करते समय फर्श पर फिसलन कदापि नहीं होनी चाहिये।

(v) शोर रोधक—फर्श पर रहते तथा कार्य करते समय शोर उत्पन्न न हो। अस्पतालों, पुस्तकालयों, अध्ययन कक्षों के फर्श विशेष रूप से शोर प्रतिरोधक होने चाहियें।

(vi) ताप सह—ताप परिवर्तन पर यह अत्यधिक ठण्डे अथवा गर्म न हों, अन्यथा रहने वालों को असुविधा होती है।

(vii) अग्नि-रोधक—फर्श अग्नि-रोधक पदार्थ से बना हो। बहुतली भवनों व कारखानों में यह बात विशेष ध्यान में रखनी चाहिये।

(viii) धूल-रहित—फर्श पर धूल, मिट्टी आदि न जमने पाये। ईंट के फर्शों पर धूल शीघ्र जमती है।

(ix) स्वच्छता—फर्श की सफाई, धुलाई सुगमता से की जा सके। इस पर पानी एकत्रित नहीं होना चाहिये। अत: फर्श को न्यूनतम ढ़ाल देना उत्तम रहता है।

(x) निर्माण लागत—फर्श की निर्माण लागत कम होनी चाहिये। यह स्थानीय उपलब्ध पदार्थों से निर्मित किया जा सके।

(xi) सरल अनुरक्षण—फर्श का अनुरक्षण मितव्ययी होना चाहिये। फर्श की मरम्मत सरल हो।

(xii) आकर्षक सतह—फर्श देखने में सुन्दर लगे। भवन में प्रवेश करने वालों की सबसे पहले दृष्टि फर्श पर पड़ती है।

(xiii) निर्माण अवधि—इसका निर्माण कम समय में पूर्ण हो सके।

(xiv) आयु—फर्श की लाभकारी आयु पर्याप्त होनी चाहिये। भवन के अन्य घटकों की तुलना में फर्श पर अधिक गति विधियाँ होती हैं और टूट-फूट भी अधिक होती है।

किसी एक फर्श में उपरोक्त ढेर सारे गुण होने कठिन होते हैं, परन्तु फर्श की उपयोगिता, टिकाऊपन, सुन्दरता तथा लागत, ये मुख्य बातें हैं जो सामान्यत: फर्श के चयन में, दृष्टि में रखी जाती हैं।

प्रश्न 2—भूतल फर्श कितने प्रकार के होते हैं? किन्हीं तीन फर्शों का संक्षेप में वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2003)*

उत्तर—

भूतल फर्श की प्रकार (Types of Ground Floor)

(1) मूरम का फर्श (Moorum Floor),
(2) ईंटों का फर्श (Brick Flooring),
(3) पत्थर-पटियों का फर्श (Flag-Stone Flooring),
(4) टाइलों का फर्श (Tile Flooring),
(5) सीमेन्ट-कंक्रीट का फर्श (Cement Concrete Flooring),
(6) मोजेक (पच्चीकारी) फर्श (Mosaic Flooring),
(7) टैराजो फर्श (Terrazzo Flooring),
(8) लकड़ी का फर्श (Timber Flooring)।

तीन फर्शों के वर्णन निम्न प्रकार हैं—

(1) ईंटों का फर्श

(i) उपयोग—ईंटों का फर्श सस्ता होता है तथा आसानी से कम समय में बनाया जा सकता है। यह फर्श स्टोर, आंगन, गोदाम, स्कूल-कॉलेज के कमरों, बरामदों के लिये अधिक प्रयोग किये जाते हैं।

ईंटों के फर्श में दरारें नहीं आती हैं तथा इसकी मरम्मत सरल है परन्तु ये फर्श सीलन को ग्रहण करते हैं अत: किचन, स्नानघर, लैट्रीन व अन्य जलग्रस्त जगहों के लिये अनुपयुक्त हैं।

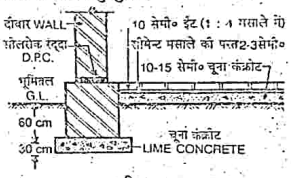

चित्र 6.1

(ii) निर्माण—फर्श की भूमि को साफ करके समतल कर लिया जाता है। कमजोर स्थलों तथा गड्ढों में साफ बालू भरकर, दुरमुटों से कुटाई कर दी जाती है।

समतल करने के पश्चात्, इस पर आधार कोट के लिये 10-15 cm LC डाली जाती है। पानी निकलने तथा सफाई इत्यादि के लिये आधार को 1 : 40 की बाहर की ओर ढाल दिया जाता है।

आधार के सैट हो जाने के बाद इस पर चूना या सीमेंट मसाले की 2 से 3 सेमी० मोटी परत बिछाकर, उस पर उत्तम श्रेणी की ईंटें लगाई जाती हैं। ईंटों को सीमेंट मसाले 1 : 4 में लगाया जाता है।

(2) सीमेंट कंक्रीट का फर्श

(i) उपयोग—सीमेंट कंक्रीट का फर्श दृढ़, ठोस, साफ, सीलन-मुक्त, धूलरहित तथा सामान्य लागत का होने के कारण, निजी और सार्वजनिक भवनों के लिये बड़े पैमाने पर बनाया जाता है।

यह फर्श यदि ध्यानपूर्वक बनाये जायें तो लम्बे समय तक बिना देखभाल व बगैर मरम्मत के बने रहते हैं परन्तु लापरवाही से बनाया गया दोषपूर्ण फर्श सदा के लिये सिरदर्द बन जाता है क्योंकि इसकी मरम्मत कठिन पड़ती है, पूरे पैनल को बदलना पड़ता है।

civilguruji.net

(ii) निर्माण—आधार तैयार करने के बाद, पूरे फर्श-स्थल को लकड़ी के 6 मिमी० के मोटे बत्ते 1·5×1·5 मीटर के वर्ग के हिसाब से लगा दिये जाते हैं। लकड़ी के बैटन की मोटाई फर्श की मोटाई के बराबर रखी जाती है।

उपरोक्त वर्गों में, प्रथम चरण में एकान्तर (Alternately) पर सीमेंट कंक्रीट 1 : 2 : 4 अथवा 1 : $1\frac{1}{2}$: 3 के अनुपात में तैयार करके पट्टी की ऊँचाई तक भर दी जाती है। लकड़ी की थापी से कंक्रीट सतह की धीरे-धीरे कुटाई की जाती है, तथा करनी व सीध पट्टी से समतल की जाती है।

24 घण्टे के बाद, जब पहले पैनलों में डाली गई कंक्रीट सैट हो जाती है, तो लकड़ी के बैटन निकाल दिये जाते हैं तथा शेष पैनलों में कंक्रीट भर दी जाती है और करनी तथा सीध पट्टी से समतल कर दी जाती है।

(3) मोजेक फर्श

(i) उपयोग—यह एक सुन्दर व कलात्मक फर्श है, परन्तु यह एक महंगा फर्श भी है। यह फर्श उच्च श्रेणी के आवासीय भवनों तथा सार्वजनिक इमारतों में बनाया जाता है। यादगारी भवनों के लिये इस फर्श का उपयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है।

(ii) निर्माण—फर्श के लिये पहले 10-15 सेमी० मोटा चूना अथवा सीमेन्ट कंक्रीट का आधार उपरोक्त वर्णित तरीक़े के अनुसार बनाया जाता है।

आधार कंक्रीट पर 4-5 सेमी मोटी चूना-सुर्खी (1 : 2) मसाले की परत बिछाई जाती है। मसाले की यह तह, फर्श के लगने वाले भाग में डाली जाती है, जितना भाग सुगमतापूर्वक, मसाला सूखने से पहले, एक चरण में पूरा किया जा सके।

इस मसाले के ऊपर बुझा हुआ चूना, संगमरमर का पाउडर तथा पूज़ोलाना (puzzalona) (2 : 1 : 1) का गोल 3 मिमी मोटी परत में बिछाया जाता है। इसके ऊपर संगमरमर के अभीष्ट आकार तथा पैटर्न में काटे गये टुकड़े, कांचित टाइलों के टूटे हुए टुकड़े अथवा मार्बल चिप्स हाथों द्वारा रखकर दबा दिये जाते हैं। टुकड़ों को फर्श में सटाने के लिये लकड़ी के हथौड़े से सावधानीपूर्वक हल्के-हल्के ठोका जाता है। तत्पश्चात् हल्के पत्थर के रौलर से रौलिंग की जाती है एवं फर्श के सैट हो जाने पर पानी डालकर ग्रिट्स पत्थर से घिसाई की जाती है।

प्रश्न 3—चित्र सहित टैराज़ों फर्श बनाने का पूर्ण तरीका लिखिये। *(UPUTE 2007)*

उत्तर—टैराज़ों फर्श निर्माण विधि—8 से 10 सेमी मोटी कंक्रीट के ऊपर सीमेन्ट (1 : 2 : 4) 2 से 3 सेमी मोटी डाली जाती है। इस कंक्रीट की फिनिशिंग नहीं की जाती। कंक्रीट की ऊपरी सतह पर सीमेन्ट मसाले (1 : 3) में एल्युमिनियम या काँसे की पट्टियाँ 25 सेमी चौड़ी तथा 1·5 मिमी० मोटी होती हैं, उचित चौकों या पैटर्न में सैट कर दी जाती हैं। ये पट्टियाँ फर्श के प्रसार व संकुचन में सहायक होती हैं और फर्श में दरारें आने से रोकती हैं। चौकों का क्षेत्रफल 2 वर्ग मीटर से ज्यादा नहीं लेना चाहिये।

अब इन चौकों पर सफेद या रंगदार सीमेन्ट में मार्बल पाउडर व उचित रंग के मार्बल चिप्स 3 : 1 : 6 के अनुपात में मिलाकर 10 मिमी की मोटाई में भर दिये जाते हैं। मार्बल चिप्स का साइज 5 मिमी से 7 मिमी होता है। करनी तथा सीध पट्टी से सतह को समतल किया जाता है। कंक्रीट की ऊपर सतह स्ट्रीप्स के ऊपर उठी रहनी चाहिये। तैयार फर्श की लगभग 80% सतह पर संगमरमर के दाने दिखाई देने चाहिये। यदि कम हों तो ऊपर से और चिप्स डालकर करनी से फर्श में दबा देने चाहिये तथा

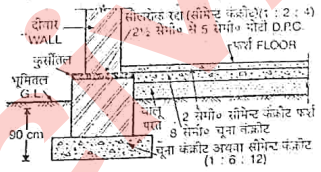

चित्र 6.2

सतह समतल कर लेनी चाहिये। टैराज़ों के सैट हो जाने पर, कारबोरन्डम पत्थरों से घिसाई करनी चाहिये। घिसाई के समय पर्याप्त मात्रा में पानी छिड़कते रहना चाहिये।

सामान्यतः तीन या चार कटाई की जाती है। घिसाई के बाद जब सतह पर एक समान करदार दिखाई देने लगे तो ऑक्जेलिक अम्ल के हल्के घोल से साफ करके फर्श चमकदार व चिकना बनाया है। देखें चित्र।

प्रश्न 4—लकड़ी के फर्श के निर्माण, उपयोग, गुण व दोषों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर— **लकड़ी का फर्श (Timber Flooring)**

(a) उपयोग—लकड़ी के फर्श, पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ जलवायु नम होती है और अच्छी टिम्बर सस्ती व आसानी से मिल जाती है, अथवा सीलन-ग्रस्त क्षेत्रों में अधिक बनाये जाते हैं।

इन फर्शों का नाचघरों, बाल रूम, राग भवन, थियेटर, होटल स्केटिंग हॉल, प्रयोगशाला, व्यायामशाला इत्यादि में भी बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है।

(b) निर्माण—लकड़ी को सीलन से बचाने के लिये, यह फर्श भूमि के सीधे सम्पर्क से दूर रखा जाता है। अतः इसको भूमितल से 1 से 1·5 मीटर ऊपर बनाना चाहिए तथा सील रोक पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

जहाँ फर्श बनाना हो, उस स्थान को भली-भांति साफ कर लेते हैं। घास-फूस व अन्य वनस्पति की उत्पत्ति रोकने के लिये पूरे क्षेत्र पर चूना या सीमेन्ट कंक्रीट (1 : 4 : 8) की 10 से 15 सेमी मोटी परत डाली जाती है। यह सीलन को ऊपर चढ़ने से भी रोकती है।

अब, फर्श पर 2 मीटर केन्द्र की दूरी पर पतली दीवारें (Dwarf Walls) या स्लीपर दीवारें, जो आधी ईंट (10 सेमी) मोटी होती हैं, ग्रड़ों की जाती हैं। इन पतली दीवारों के ऊपर लकड़ी के स्लीपर (फ्लोर-बीम) (Floor Beams) लगा दिये जाते हैं। फर्श-सोखल से दूषित वायु के निकास के लिये, पतली दीवारों में उपयुक्त दूरी पर छिद्र (Air Vent) रखे जाते हैं या चिनाई में छिद्रदार ईंटें (Air Bricks) का प्रयोग किया जाता है।

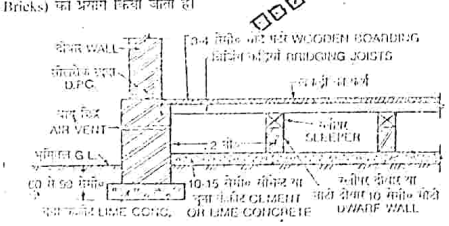

चित्र 6.3–लकड़ी का फर्श

स्लीपर दीवार के ऊपर पाटन-जॉइस्ट्स (Bridging Joists) आड़ी दिशा में रखी जाती हैं। इसके ऊपर अनुलम्ब दिशा में, 2 सेमी से 4 सेमी मोटे पट्टे (Boards) कीलों से जड़कर फर्श तैयार कर लिया जाता है। फर्श को समतल तथा चिकना बनाने के लिये इस पर सैण्ड-पेपर से रगड़ाई की जाती है तथा पॉलिशिंग की जाती है।

(c) गुण—

(i) लकड़ी के फर्श ध्वनि हल्के तथा स्वच्छ होते हैं।

(ii) यह फर्श सीलनमुक्त होते हैं।

(iii) यह कम समय में तैयार हो जाते हैं।

(iv) ताप परिवर्तन का लकड़ी के फर्शों पर कम प्रभाव पड़ता है।

(v) यह देखने में सुन्दर लगते हैं।

(vi) खेल-तमाशे तथा स्केटिंग के लिये उत्तम स्टेज का काम देते है।
(vii) यह फर्श कम्पन तथा भूकम्प ग्रस्त क्षेत्र के लिये उत्तम रहते है।

(d) दोष—

(i) लकड़ी के फर्श की आयु कम होती है।
(ii) अनुरक्षण पर अधिक ध्यान देना पड़ता है।
(iii) यह भारी कार्य के अनुपयुक्त होते है।
(iv) इनको निर्माण लागत अधिक होती है।
(v) यह फर्श अग्नि से नष्ट हो जाते है।
(vi) दीमक व अन्य कीटों से क्षतिग्रस्त हो जाते है।

प्रश्न 5—एस्फाल्ट का फर्श क्या होता है? इसके गुण व उपयोग बताइये।

उत्तर— एस्फाल्ट का फर्श (Asphalt Flooring)

एस्फाल्ट एक प्राकृतिक पदार्थ है, जिसमे ग्रिट व महीन बालू मिलाकर, फर्शों के ऊपरी कोट के रूप मे प्रयोग किया जाता है। एस्फाल्ट, बिटूमिन तथा खनिज रंजकों को मिलाकर एस्फाल्टिक टाइलें बनायी जाती है, जो कंक्रीट या लकड़ी के फर्श के ऊपर मसाले से जोड़कर लगायी जाती है। गर्म एस्फाल्ट में उचित रंजक तथा संगमरमर के चिप्स मिलाकर एस्फाल्ट-टैराजो बनाया जाता है, जो करीब 1·5 सेमी से 2·5 सेमी मोटाई में फर्श के रूप में बिछाया जाता है।

एस्फाल्ट के फर्श टिकाऊ, जल-सह, अम्ल-सह, धूल रहित, शोर-रहित, गन्धरहित तथा लचीले होते है। इस पर चलने पर फिसलन नहीं होती है। यह जोड़रहित होते हैं तथा सुगमतापूर्वक साफ किये जा सकते हैं।

यह फर्श तेल तथा तेल के लगातार सम्पर्क में आने पर अथवा ताप से नरम पड़ जाते हैं। व्यावसायिक भवनों, फैक्टरियों, लेडिंग-प्लेटफार्म, चिकित्सालयों, डेरी इत्यादि के लिये एस्फाल्ट के फर्श बनाये जाते है।

प्रश्न 6—लकड़ी के फर्शों को ध्वनि रोधक कैसे बनाया जाता है?

उत्तर— लकड़ी के फर्शों को ध्वनि-रोधक बनाना (Sound Proofing)

लकड़ी के फर्श को ध्वनि-रोधक बनाने के लिये, फर्श तथा सीलिंग के बीच में, अलग से पटरे लगाकर, उस पर ध्वनि-रोधक मसाला (pugging) अथवा अन्य मैटीरियल भर दिया जाता है। यह पटरे, पाटन कड़ियों के पार्श्व में गुटके लगाकर, उन पर जड़ दिये जाते हैं। ध्वनि-रोधक मैटीरियल के रूप में, सीमेन्ट मसाले में भूसा, लकड़ी का बुरादा आदि मिलाकर प्रयोग किया जाता है, अथवा कार्क, स्लैग वूल, एस्बेस्टस, सिलिकेट काटन या हल्की कंक्रीट डाली जाती है।

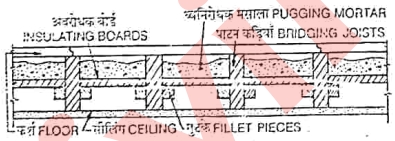

चित्र 6.4–लकड़ी के फर्श को ध्वनि-रोधक बनाना

प्रश्न 7—मूरम का फर्श बनाने की सचित्र विधि बताइये।

उत्तर— मूरम का फर्श (Moorum Floor)

(a) उपयोग— यह एक निम्न स्तर का सस्ता तथा अल्प आयु वाला फर्श है, जो अधिकतर गाँवों में कच्चे मकानों व अस्थाई निर्माण के लिये बनाया जाता है। यह फर्श सर्दी में गर्म तथा गर्मी में ठण्डा रहता है। इसका निर्माण स्थानीय उपलब्ध कंकर-मूरम से किया जाता है।

(b) निर्माण— सबसे पहले कमरे की भूमि पर आवश्यक तल तक मृदा भराई कर ली जाती है। इसके ऊपर 25 सेमी की मोटाई में बोल्डर, पत्थर के भाटे अथवा अधिक पकी हुई ईंटों के टुकड़ों को बिछाकर तथा पानी डालकर खूब कुटाई की जाती है। कुटाई के लिये दुरमुटों का प्रयोग किया जाता है। यह फर्श का आधार होता है (चित्र 6.5)।

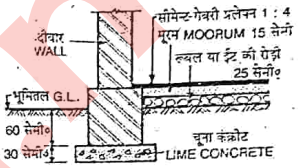

चित्र 6.5–मूरम का फर्श

इस आधार पर 15 सेमी मोटी अच्छी मूरम की परत बिछायी जाती है। परत के ऊपर 2 सेमी से 3 सेमी महीन मूरम डाली जाती है। इस पर पानी छिड़ककर दुरमुटों से पुनः कुटाई की जाती है। कुटाई करते समय पर्याप्त मात्रा में पानी छिड़कते रहना चाहिये। जब ऊपरी सतह पर मूरम की क्रीम आ जावे तो इस फर्श को सूखने के लिये छोड़ दिया जाता है। सूखने के बाद सतह पर, सीमेन्ट-गोबर (1 : 4 के अनुपात में) की लिपाई कर दी जाती है।

इस फर्श पर समय-समय पर उपरोक्त गोबरी लेपन करते रहना चाहिये ताकि मूरम के कण उखड़ने न पायें और फर्श स्वच्छ बना रहे।

(c) गुण—

(i) यह एक सस्ता फर्श है तथा स्थानीय उपलब्ध मैटीरियल से बनाया जा सकता है।
(ii) इसका निर्माण सरल है। यह फर्श साधारण श्रमिक ही बना लेते है।
(iii) यह फर्श गर्मी में ठण्डे तथा सर्दी में गर्म होते है। अतः ग्रामीण आवासों के लिये सुविधाजनक रहते हैं।
(iv) मूरम का फर्श पर्याप्त शोर रोधक होता है।

(d) दोष—

(i) इस फर्श पर समय-समय पर गोबर का लेप करना पड़ता है, जो देखने में अच्छा नहीं लगता है।
(ii) यह फर्श भारी कार्य के लिये उपयुक्त नहीं है।
(iii) इसमें सीलन शीघ्र आ जाती है।
(iv) इसकी आयु बहुत कम होती है।
(v) यह एक घटिया फर्श है।

प्रश्न 8—फर्शों का अनुरक्षण कैसे करते हैं?

उत्तर— फर्शों का अनुरक्षण (Maintenance of Floors)

सीमेन्ट कंक्रीट तथा अन्य फर्शों की लगातार देखभाल अति आवश्यक है, ताकि यह स्वच्छ, धूल रहित और आकर्षक बने रहें। मोजेक तथा टैराजो फर्शों की सफाई और देखभाल विशेष रूप से की जाती है, ताकि इनकी चमक कायम रहे।

फर्शों की सफाई के लिये इनको प्रतिदिन झाड़ू से साफ करके, भीगे कपड़े से रगड़कर साफ किया जाता है। आजकल उत्तम श्रेणी के फर्शों को ढाल नहीं दी जाती है, अतः इनकी पानी डालकर धुलाई नहीं करनी चाहिये। साबुन के पानी से फर्श को नहीं धोना चाहिये, क्योंकि इससे फर्श पर फिसलन हो जाती है। मोजेक तथा टैराजो फर्शों पर समय-समय पर वैक्स पॉलिश (Mansion Wax Polish) को कपड़े पर लगाकर पॉलिश की जाती है, ताकि इनकी चमक बनी रहे।

कंक्रीट के फर्शों से दाग, धब्बे छुड़ाने के लिये आक्जेलिक अम्ल (Oxalic Acid) के हल्के घोल का प्रयोग किया जाता है तथा कपड़े से रगड़कर फर्श साफ कर दिया जाता है।

engurunet

फर्श की ईंटों, टाइलों या पत्थर की पटियों के टूट जाने पर, उसे खोदकर पूरे टुकड़े को निकाल दिया जाता है। आधार-कंक्रीट पर सीमेन्ट-मसाले की परत डालकर, नयी टाइल या पटियाँ लगायी जाती हैं और उसे हल्के से ठोककर शेष फर्श के समतल कर दिया जाता है।

सीमेन्ट कंक्रीट के टूटे भाग की मरम्मत के लिये पूरे पैनल को काटकर निकाल दिया जाता है, यदि ऐसा करना उचित न हो, तो फर्श के क्षति-ग्रस्त भाग को वर्गाकार या आयताकार में छेनी से काटकर निकाल दिया जाता है। आधार को साफ करके तथा पानी छिड़ककर, इसके ऊपर उचित मोटाई की सीमेन्ट कंक्रीट (1 : 2 : 4) की परत डाली जाती है। करनी तथा सीध-पट्टी से इसे समतल कर दिया जाता है और सूखने पर सात दिन तक तराई की जाती है। तत्पश्चात् फर्श को साफ करके, प्रयोग में लाया जाता है।

प्रश्न 9—विभिन्न भवनों के लिये उपयुक्त फर्शों का विवरण प्रस्तुत कीजिये।

उत्तर—विभिन्न भवनों के लिये उपयुक्त फर्श के नाम निम्नलिखित हैं—

(1) कार्यालय—सीमेन्ट कंक्रीट का फर्श, टैराजो फर्श
(2) अधिकारी कक्ष—टैराजो फर्श, संगमरमर का फर्श
(3) सोने के कमरे—मोजेक फर्श, सीमेन्ट कंक्रीट का फर्श, मार्बल पटिया का फर्श
(4) बरामदे—सीमेन्ट कंक्रीट, टैराजो फर्श
(5) रसोईघर—टैराजो अथवा सीमेन्ट कंक्रीट का फर्श
(6) स्नानगृह तथा फ्लश शौचालय—टैराजो फर्श, कंक्रीट का फर्श
(7) स्टोर तथा भण्डारागार—पत्थर अथवा सीमेन्ट कंक्रीट का फर्श
(8) कर्मशाला—सीमेन्ट कंक्रीट अथवा ईंट का फर्श
(9) रेलवे स्टेशन—सीमेन्ट कंक्रीट का मोटा फर्श
(10) नाचघर व बालरूम—टिम्बर का फर्श, कार्क का फर्श
(11) व्याख्यान कक्ष—सीमेन्ट कंक्रीट का फर्श
(12) फैक्टरी शेड—सीमेन्ट कंक्रीट या ईंट का फर्श
(13) लोहार तथा ढलाई शेड—मूरम या ईंटों का फर्श
(14) पुस्तकालय—टाइलों या टैराजो फर्श
(15) रसायन प्रयोगशाला—एस्फाल्ट फर्श
(16) अम्ल-प्लान्ट—अम्ल सह मैस्टिक एस्फाल्ट का फर्श
(17) सार्वजनिक तथा व्यावसायिक बरामदे तथा शोपिंग सेन्टर—टैराजो फर्श या फर्शी टाइल
(18) स्वास्थ्य केन्द्र तथा अस्पताल—सीमेन्ट कंक्रीट तथा टैराजो फर्श।

7 छतें तथा छत-आवरण (Roofs & Roof-Coverings)

प्रश्न 1—एक अच्छी छत की क्या आवश्यकतायें हैं? संक्षेप में व्याख्या कीजिये। चपटी व ढालू छतों के गुण व दोषों की तुलना कीजिये। *(UPBTE 2003)*

उत्तर—अच्छी छत की आवश्यकता—भवन निवासियों और मूल्यवान वस्तुओं को वायुमण्डलीय प्रकोप, जैसे धूप, वर्षा, आँधी, ताप, उण्डा, तेज वायु आदि से बचाने के लिये, कमरों के ऊपर जो स्थायी आवरण डाला जाता है, उसे छत कहते हैं। छत के बगैर भवन, भवन नहीं कहलाता। छत भवन का सबसे ऊपरी भाग होता है। बहुमंजिला भवन में फर्श अनेक हो सकते हैं, परन्तु छत एक ही होती है।

छत व्यवस्था अनेक प्रकार से की जा सकती है। दीवारों की आपसी दूरी, छत निर्माण पदार्थों का भार, वायु दाब, छत पर चल भार (यदि कोई हो) तथा क्षेत्र विशेष की स्थिति व वर्षा की तीव्रता को ध्यान में रखकर छत की प्रकार का निर्णय लिया जाता है।

चपटी व ढालू छतों की तुलना

क्र.सं.	चपटी छतें (Flat Roofs)	ढालू छतें (Slopy Roofs)
1.	**ऊपरी सतह**—इन छतों की ऊपरी सतह समतल अथवा 10° कोण (अधिकतम) पर बनी होती है।	इन छतों को सामान्यतः 25°-60° की ढाल (क्षैतिज से) पर स्थापित किया जाता है।
2.	**निर्माण**—इसके निर्माण में अधिक समय लगता है।	इसके निर्माण में कम समय लगता है।
3.	**वर्षा जल निकासी**—चपटी छतों से वर्षा जल धीरे-धीरे बहता हुआ नीचे आता है।	ढालू छतों से वर्षा-जल तुरन्त तथा तेजी से बहता हुआ नीचे आता है।
4.	**लागत**—यह ढालू छतों से महँगी पड़ती है।	यह चपटी छतों से सस्ती पड़ती है।
5.	**अनुरक्षण**—इनका निर्माण कठिन होता है, परन्तु अनुरक्षण की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती।	इनका निर्माण सरल है परन्तु अनुरक्षण और मरम्मत काफी करनी पड़ती है।
6.	**वर्षा क्षेत्र**—यह छत कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिये उपयुक्त है।	यह छत अधिक वर्षा तथा हिमपात वाले क्षेत्रों के लिये उत्तम रहती है।
7.	**भार**—बड़े पाटों के लिये इस छत का निर्माण कठिन पड़ता है, क्योंकि इनका स्वयं का भार ही बहुत अधिक होता है।	ये छतें पर्याप्त हल्की हैं अतः बड़े पाटों के लिये विशेष तौर से उपयुक्त हैं। नींव पर भार भी कम पड़ता है।
8.	**ताप रोधकता**—यह सर्दी में गर्म तथा गर्मी में ठण्डी रहती है, अतः मैदानी क्षेत्रों के लिये उत्तम है।	ये छतें गर्मी व ठण्ड से अधिक प्रभावित होती हैं। गर्मियों में ये छतें इतनी गर्म हो जाती हैं कि इनके नीचे कार्य करने में परेशानी होती है।

प्रश्न 2—छतों का विस्तृत वर्णन करें। छतों का निर्माण करते समय रखी जाने वाली सावधानियों का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2012, 13)*

उत्तर—छतों का वर्गीकरण—छतों का वर्गीकरण अग्र प्रकार है—

civilguruznet

(1) समतल या चपटी छत—

(a) कड़ीदार चपटी छत।
(b) पत्थर पटियों की छत।
(c) जैक डाट छत।
(d) प्रबलित ईंट स्लैब छत।
(e) प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट स्लैब छत।
(f) T-गरनों की छत।

(2) तिरछी या ढालू छत—

(a) एकल पार्श्व-ढालू छत या बरामदा छत।
(b) द्विपाखी छत।
(c) तानदार द्विपाखी छत।
(d) गल-पट्ट या कालर बीम छत।
(e) मध्य-घूनी या क्वीन पोस्ट कैंची छत।
(f) पार्श्व-घूनी या क्वीन पोस्ट कैंची छत।
(g) उत्तर-प्रकाशी कैंची छत।
(h) विशेष आकृति की कैंची छत।

(3) गुम्बद (Dome)—छतों का निर्माण करते समय निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहियें—

(a) चपटी छतों—

(i) छत का उत्तम तथा जलरोधक मैटीरियल से निर्माण करना चाहिये।
(ii) छत को उचित ढाल (1 in 40 से 1 in 60) देनी चाहिये ताकि वर्षा का जल बहकर बाहर निकल जावे।
(iii) छत से जल निकासी के लिये उचित संख्या में बरसाती नल लगाने चाहियें।
(iv) छत पर बिटुमन लेप या बिटुमन फेल्ट प्रयोग करने चाहियें।
(v) छत तथा पैरापिट के संगम पर सीमेन्ट-कंक्रीट का अर्धगोला फिलेट लगानी चाहिये।
(vi) पैरापिट के ऊपर शीर्षक लगाना चाहिये, जिसके निचले भाग पर कण्ठ कटी होनी चाहिये।

(b) ढालू छतें—सामान्यत: ढालू छतों से टपकने की समस्या कम सामने आती है। ढालू छतों से उत्तम जल निकासी के [illegible]

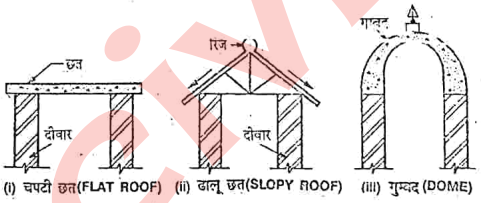

चित्र 7.1–छत की आकृतियाँ

छत व्यवस्था अनेक प्रकार से की जा सकती है। दीवारों की आपसी दूरी, छत-निर्माण पदार्थों का भार, वायु दाब, छत पर चल भार (यदि कोई हो) तथा क्षेत्र विशेष की स्थिति व वर्षा की तीव्रता को ध्यान में रखकर छत की प्रकार का निर्णय लिया जाता है। छत भवन का एक स्थायी, महत्त्वपूर्ण तथा अनिवार्य घटक है, अत: इसका निर्माण नींव की भाँति ध्यानपूर्वक करना चाहिये। छत के क्षतिग्रस्त होने पर इसके नीचे डेरा डाले प्राणियों का जीवन संकट में पड़ जाता है।

प्रश्न 3—एक जैक डाट छत का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर— जैक डाट छत (Jack Arch Roof)

(a) **उपयोग**—प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट की छत-स्लैब के चलन से पहले, सभी सरकारी तथा सार्वजनिक भवनों की छतें जैक-डाट विधि से बनायी जाती थीं। हाल-कमरों के लिये यह एक सन्तोषजनक चपटी छत रही है। बहुतली भवनों में यह ऊपरी फर्शों के आधार के रूप में भी डाली जाती है। यह छत 8 मी पाट तक अपनायी जा सकती है। यह छत सीलन से कम प्रभावित होती है। इसका अनुरक्षण न्यूनतम है, परन्तु निर्माण लागत अधिक आती है। इन छतों की अन्तरछद (Ceiling) वक्राकार होने के कारण देखने में अटपटी लगती है।

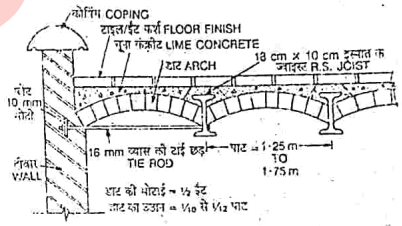

चित्र 7.2–जैक-डाट छत

(b) **रचना**—कमरे के छोटे पाट के समानान्तर इस्पात के बेल्लित गर्डर (R.S. Joist, 18 सेमी × 10 सेमी @ 24 किलोग्राम प्रति मीटर), 1·25 मीटर से 1·75 मीटर के अन्तराल पर पार्श्व दीवारों पर टिकाये जाते हैं। इन गर्डरों के ऊपर आगी ईंट मोटी डाट, (जिसे जैक-डाट कहते हैं), लगायी जाती है, जो गर्डर के निचले फ्लैंज (flange) पर आधारित रहती है। जैक-डाट का मध्य में उत्थान (Rise), दोनों सीमावर्ती गर्डरों की दूरी (पाट) का 1/10 से 1/12 रखा जाता है। छत की मध्य [illegible] के कारण प्रति-सन्तुलित हो जाते हैं, परन्तु प्रथम व अन्तिम डाटों के कारण दीवारों पर डाट क्रिया का प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण इन दीवारों की पार्श्व में पलटने की सम्भावना बनी रहती है। इसको रोकने के लिये, प्रथम तथा अन्तिम डाटों के पाट में इस्पात की 16 मिमी व्यास की छड़ें 2 से 2·5 मी की दूरी पर, अलग से लगायी जाती हैं। इन छड़ों को तान-छड़ (Tie-Rods) कहते हैं (चित्र 7.2) गर्डरों के ऊपर निकले भाग को सीमेन्ट कंक्रीट से ढक दिया जाता है। जिससे ये जंग लगने से बचे रहते हैं।

डाट की ऊपरी वक्राकार सतह पर चूना कंक्रीट डालकर समतल किया जाता है ताकि छत का उपयोग उठने-बैठने तथा सोने के लिये किया जा सके। जैक-डाट छत के निर्माण के लिये कुशल कारीगरों की आवश्यकता रहती है, क्योंकि ऊँचाई पर डाट-निर्माण कार्य कठिन होता है। जैक-डाट लगाने के लिये, दूला फर्श पर खड़ा न करके, छत-गर्डरों के निचले फ्लैंज पर टिकाया जाता है और एक चरण पूर्ण होने पर इसे आगे सरका लिया जाता है।

प्रश्न 4—प्रबलित सीमेंट कंक्रीट स्लैब छत (R.C.C. Slab Roof) का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर— प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट स्लैब छत (R.C.C. Slab Roof)

(a) **उपयोग**—आवासीय तथा सार्वजनिक भवनों के लिये, पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों में, अधिक तथा न्यूनतम वर्षा वाले स्थानों पर अब आर० सी० सी० स्लैब की छतें बड़े पैमाने पर बनायी जाने लगी हैं। प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट संरचनायें किसी भी अध्यारोपित भार के लिये अभिकल्पित की जा सकती हैं। यह सीलन मुक्त, समतल, अग्निरोधक तथा दीर्घ आयु वाली छत है। जब पाट अधिक हो, तो स्लैब के नीचे उचित दूरी पर प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट अथवा इस्पात के धरन दिये जाते हैं।

civilguru.net

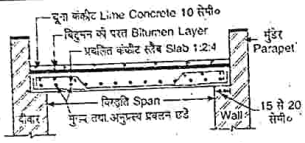

चित्र 7.3–प्रबलित सीमेंट कंक्रीट स्लैब छत

(b) रचना—स्लैब की मोटाई तथा इस्पात की छड़ों का व्यास व अन्तराल अभिकल्पन के अनुसार रखा जाता है। सीमेन्ट कंक्रीट का अनुपात सामान्यत: 1 : 2 : 4 (M-15) अथवा 1 : 5 : 3 (M–20) लिया जाता है। छत डालने के लिये, स्लैब के नीचे ढूला बन्दी की जाती है। कंक्रीट डालने के बाद, स्लैब की 14 से 21 दिन तक पानी छिड़क कर तराई की जाती है। तराई कंक्रीट अधिक सामर्थ्यवान बन जाती है। सीलन निवारण के लिये स्लैब के ऊपर बिटूमिन, गर्म करके डाला जाता है या टार-फेल्ट (Tar-Felt) बिछाई जाती है। फेल्ट के ऊपर 10 सेमी मोटी चूना कंक्रीट अथवा चपटी टाइलों की एक परत लगायी जाती है। छत से वर्षा जल-निकास के लिये चूना कंक्रीट में आवश्यक ढाल दी जाती है और वर्षा जल-पाइप लगाये जाते हैं।

प्रश्न 5—चपटी छतों की परिरूपित से आप क्या समझते हैं? वर्णन कीजिये।

उत्तर—चपटी छतों पर सीधी धूप और वर्षा पड़ती है, अत: ये ग्रीष्म काल में अत्यधिक गर्म हो जाती हैं और वर्षा काल में सीलन ग्रस्त रहती हैं। इन दुष्प्रभावों से बचने के लिये चपटी छतों का निम्न प्रकार से सतह-उपचार किया जाता है—

(i) छत स्लैब पर गर्म-बिटूमन प्रलेपन,
(ii) गारा-फुसका परत पर टाइलें जड़ना अथवा चूना कंक्रीट टैरिसिंग,
(iii) खुर्रा निर्माण तथा छत से वर्षा-जल निकासी।

विस्तृत चर्चा निम्न है—

छत-स्लैब पर गर्म बिटूमन प्रलेपन (Painting Roof-slab with Hot Bitumen)

छत-स्लैब को सीलन-मुक्त रखने के लिये, इस पर बिटूमन का प्रलेपन किया जाता है। छत-स्लैब पर गर्म-बिटूमन का प्रलेप करने से पहले, छत-सतह को तार-ब्रश व टाट-पट्टी से अच्छी तरह साफ कर लें और इसे सुखा लें। अब 80/100 अन्तर्वेशन (Penetration) का बिटूमन 180°C तक गर्म करके, छत-सतह पर ब्रुश से अच्छी तरह पोत दें ताकि कोई जगह छूट न जाये। मुंडेर की भीतरी खड़ी फलकों पर भी 15 cm की ऊँचाई तक गर्म बिटूमन का प्रलेपन कर दें। प्रलेपन के लिये बिटूमन की मात्रा सामान्यत: 1·7 kg प्रति वर्ग मी सतह की दर से ली जाती है।

बिटूमन प्रलेपन के तुरन्त बाद छत सतह पर साफ-सूखी कणदार बालू 0·006 घन मी प्रति वर्ग मी० छत-सतह समान मोटाई से फैला दें।

जब चपटी छत का इस्तेमाल उठने-बैठने के लिये करना हो, बिटूमन प्रलेपन के ऊपर मृत्तिका टाइलों की एकल परत लगा दी जाती है।

गारा-फुसका पर टाइलें जड़ना (Tile Paving over Mud Phusha)

चपटी छत (स्लैब छत) के ऊपर ढाल रोधक बनाने के लिये, इस पर गारा-फुसका डालकर, इस पर टाइलों की एकल परत जड़ दी जाती है। गारा-फुसका के लिये अच्छी मृदा जो कंकर, पत्थरी, जैविक पदार्थ, दीमक रहित हो, ली जाती है और इसमें उपयुक्त मात्रा में पानी मिलाकर सुबद्ध्य गारा बनाया जाता है। गारे को 12 घण्टे तक गीला रखा जाता है।

अब तैयार गारे को छत-स्लैब पर यांछित मोटाई (75–100 mm) में करनी से समतल फैलाया जाता है। इसे गारा-फुसका कहते हैं। गारा-फुसका डालने के बाद, इस पर 25 mm मोटा गारा-प्लास्तर किया जाता है। प्लास्तर के लिये गारा

बनाने के लिये, फुसका वाली मृदा उपयुक्त रहती है। गारा में 35 kg प्रति घन मी० मृदा की दर से, भूसा (Chopped Straw) मिलाकर सात दिन तक फावड़ा व पाँवों से अच्छी तरह गूँथा/मिलाया जाता है।

गारा-प्लास्तर सूखने पर, छत-सतह पर गोबरी का एक कोट किया जाता है ताकि प्लास्तर में उत्पन्न सभी दरारें भर जायें। गोबर-पुताई के बाद छत पर टाइलों की एकल परत गारे में लगायी जाती है। टाइलों के जोड़ 6 mm–12 mm तक होने चाहियें।

टाइलों के सैट हो जाने पर इसके जोड़ों में सीमेन्ट-बालू (1 : 3) मसाले की ग्राउटिंग की जाती है। ग्राउटिंग मसाले में 2% जल-सह यौगिक मिला देना उत्तम रहता है। ऊपरी टाइल-सतह को वर्षा जल निकासी के लिये 1 in 48 से 1 in 60 की ढाल देनी चाहिये।

चूना-कंक्रीट टैरिसिंग (Lime Concrete Terracing)

चपटी छत को जल-रोधक बनाने के लिये, इस पर चूना-कंक्रीट की 10 cm (4") मोटी परत डाली जाती है। चूना-कंक्रीट बनाने के लिये ईंटों की रोड़ी (माप 20 mm–25 mm) और चूना मसाला 1 : 2 (चूना सुर्खी : सुर्खी) लिया जाता है।

चूना कंक्रीट को वांछित मोटाई की एकल परत में करनी से बिछाकर, 2 kg भार वाले लकड़ी के हथौड़े से कुटाई की जाती है। कंक्रीट बिछाते तथा कुटाई करते समय, छत को वांछित ढाल (वर्षा-जल निकासी के लिये) बनायी रखनी चाहिये। (यह ढाल 1 in 60 से कम नहीं होनी चाहिये)।

अब गीली कंक्रीट की मजदूरों द्वारा लकड़ी की थापी (भार 1-2 kg) से, एक पंक्ति में बैठकर, छत लम्बाई दिशा में आगे बढ़ते हुये, अच्छी तरह से कुटाई की जाती है। यह सतह-कुटाई तब तक जारी रखी जाती है (लगभग 7 दिन तक), जब तक थापी की चोट पर, थापी का प्रतिक्षेप (Rebound) न होने लगे।

कंक्रीट की कुटाई करते समय, इस पर गुड़ व तेल-फल के मिश्रण का उबला हुआ घोल छिड़का जाता है (गुड़ =1·75 kg, तेलफल = 1 kg, तथा पानी 60 लीटर) और छत-सतह करनी व गुरमाला की रगड़ से सपाट, समतल व चिकनी कर ली जाती है।

तैयार सतह को 10 दिन तक पानी छिड़ककर तराई (Curing) की जाती है। छत के चारों तरफ, मुंडेर के साथ-साथ सीमेन्ट कंक्रीट (1 : 3 : 6) का गोला (75 mm × 75 mm) लगाया जाता है ताकि इस संगम-रेखा से वर्षाजल छत के भीतर न घुसने पाये।

खुर्रा निर्माण (Khurra on Flat Roof) तथा वर्षा जल निकासी

चपटी टाइल-पूदा छतों से वर्षा जल सरलता से डाऊन-पाइप/परनाले में चला जाये, इसके शीर्ष पर सीमेन्ट कंक्रीट (1:2:4) का खुर्रा (प्लेटफार्म) बनाया जाता है। खुर्रा भूमितल पर, डाऊन-पाइप की तली पर भी बनाया जाता है।

खुर्रा का माप 45 cm × 45 cm रखा जाता है और ऊपरी सतह को उत्तम सम्पूर्ति दी जाती है। खुर्रा की कंक्रीट बिछाते समय, इसके नीचे 1 m × 1 m × 400 माइक्रान की [illegible] बिछा दी जाती है। उत्तम जल-प्रवाह के लिये खुर्रा का शीर्ष सामान्य छत-सतह से कुछ नीचा (20 से 50 mm तक) रखा जाता है और खुर्रा की ढाल परनाले के मुँह की तरफ रखी जाती है। वर्षा-जल में छत से बहता हुआ कचरा (घास-फूस, सूखे पत्ते आदि) जाने से रोकने के लिये, इसके प्रवेश (मुँह) पर हल्का लोहे की मोटी जाली (Grill) लगा देनी चाहिये।

प्रति 20-30 वर्ग मी चपटी छत-सतह के लिये एक खुर्रा व वर्षा-नल (Down Pipe) (व्यास 150 mm) लगाना चाहिये।

प्रश्न 6—एक द्विपाखी छत का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर— द्विपाखी छत (Coupled Roof)

इस छत की ढाल मध्य से दोनों तरफ (बाहर को) होती है। यह छत दो विपरीत ढालों को उल्टा वी (V) के आकार में जोड़कर बनायी जाती है। इसको युगल या डबल-बरामदा छत भी कहते हैं। यह छत 3·5 मीटर तक के पाट के लिये बनायी जाती है।

civilguru.net

दोनों तरफ के नत-राफ्टरों के ऊपरी सिरे एक-दूसरे के सम्मुख रखकर और उनके मध्य रिज-पट्टी (Ridge Board) फँसाकर कीलें ठोक दी जाती हैं। नीचे के सिरे पार्श्व दीवारों या पायों पर टिकाये जाते हैं। नत-राफ्टरों की आपसी दूरी, कमरे के पाट तथा छत-आवरण की प्रकार के अनुसार रखी जाती है।

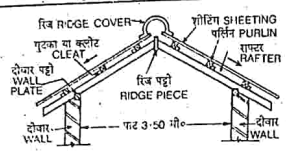

चित्र 7.4–द्विपाखी छत

अब नत-राफ्टरों पर इनकी आड़ी दिशा में पर्लिन लगाकर उसके ऊपर लहरिया चादरें लगा दी जाती हैं। शीटों के ऊपरी सिरों पर, छत के शीर्ष पर, रिज लगा दिया जाता है ताकि शिखर से वर्षा-जल भीतर न आने पावे। रिज सामान्य चादर को अर्द्ध-गोलाकार शक्ल में मोड़कर बनाया जाता है (चित्र 7.4)।

द्विपाखी छत पार्श्व दीवारों (अथवा पायों) को जिन पर यह टिकायी जाती है, बाहर की ओर धक्का देती है, जिसके फलस्वरूप इन दीवारों के पलट (Over Turning) जाने की सम्भावना बनी रहती है, अत: बड़े पाटों के लिये यह छत कमजोर रहती है।

प्रश्न 7—एक मध्य-थूनी या किंग पोस्ट कैंची छत का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तर— मध्य-थूनी या किंग-पोस्ट कैंची छत (King Post Truss Roof)

अधिक पाट पर एक साधारण तानदार द्विपाखी छत के नत-राफ्टर व तान-कड़ी स्वयं के भार के कारण नीचे को झुकने की प्रवृत्ति रखते हैं, अत: इनको मध्य में सहारा देने के लिये उपरोक्त ढाँचे में अतिरिक्त राफ्टर जोड़ दिये जाते हैं इस आकृति को किंग-पोस्ट कैंची कहते हैं। किंग-पोस्ट कैंची एक पूर्ण ट्रस है, जिसके सभी भाग त्रिभुजाकार (Triangular) आकृति के होते हैं। त्रिभुजाकार ढाँचा संरचनात्मक दृष्टि से सबसे दृढ़ होता है। अत: इस कैंची की दृढ़ता उत्तम होती है। यह एक अति प्रचलित कैंची है, जो 9 मी पाट तक प्रयोग की जा सकती है।

रचना—इस कैंची के मध्य में एक ऊर्ध्वाधर उप-स्तम्भ लगाया जाता है, जिसे मध्य थूनी (किंग-पोस्ट) (King-Post) कहते हैं। इसी कारण, इस छत को किंग-पोस्ट कैंची छत का नाम दिया गया है। इस कैंची में कुल मिलाकर दो मुख्य राफ्टर (Principal Rafters), दो सम्पीडांग (Struts), एक तान-धरन (Tie Beam) तथा एक मध्य-थूनी (King Post) अर्थात् 6 आवश्यक अवयव होते हैं (चित्र 7.5)।

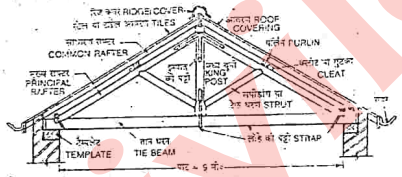

चित्र 7.5–किंग-पोस्ट कैंची छत

कैंचियों की आपसी दूरी 3 मी रखी जाती है। मुख्य राफ्टरों पर इनकी आड़ी दिशा में पर्लिन लगाये जाते हैं, जो कैंचियों को आपस में आबद्ध करते हैं तथा आवरण-चादरों को सहारा देते हैं। पर्लिन को नीचे की ओर फिसलने से रोकने के लिये गुटके (Cleats) लगाये जाते हैं। छत के शीर्ष पर रिज लगाया जाता है। लकड़ी की किंग-पोस्ट कैंची के सभी जोड़ों को लोहे की पत्ती लगाकर बोल्टों से कस दिया जाता है। इस्पात कैंची में जोड़ वेल्ड कर दिये जाते हैं। जब छत पर स्लेट अथवा टाइलें जड़नी हों तो पर्लिनों के ऊपर, आड़ी दिशा में साधारण राफ्टर (Common Rafter) लगाये जाते हैं, ताकि रिक्ति (Gap) कम हो जाये।

कैंची के दोनों सिरों को अगल-बगल की दीवारों (स्तम्भों) पर टिका कर रैग बोल्टों से स्थिर कर दिया जाता है। कैंची के सिरों के नीचे पत्थर अथवा सीमेन्ट कंक्रीट की आधार पट्टिका (Template) रखी जाती है, ताकि कैंची का भार समस्त दीवार पर समुचित रूप से संचारित हो सके।

प्रश्न 8—पार्श्व-थूनी या क्वीन-पोस्ट छत का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2006)*

उत्तर— पार्श्व-थूनी या क्वीन-पोस्ट कैंची छत (Queen Post Truss Roof)

जब कमरे (Shed) का पाट 9 मी से बढ़ जाये तो क्वीन पोस्ट कैंची प्रयोग की जाती है। उपरोक्त वर्णित किंग-पोस्ट का तान-धरन पर्याप्त लम्बा होने के कारण, अपने ही भार से नीचे झुकने लगता है। इसे रोकने के लिये कैंची के तान-धरन के मध्य भाग में दो ऊर्ध्वाधर उपस्तम्भ (Queen Posts) लगाये जाते हैं, जिनके ऊपरी तथा निचले सिरे तक एक-एक क्षैतिज तान-धरन लगाकर जकड़ दिये जाते हैं। शीर्ष वाले क्षैतिज धरन को अपतानक धरन (Straining Beam) तथा निचले धरन को अपतानक सिल (Straining Sill) कहते हैं और यह समस्त व्यवस्था क्वीन-पोस्ट कैंची कहलाती है। मुख्य राफ्टरों पर पर्लिन लगाकर उसके ऊपर चादरें लगा दी जाती हैं और छत पूर्ण कर ली जाती है (चित्र 7.6)।

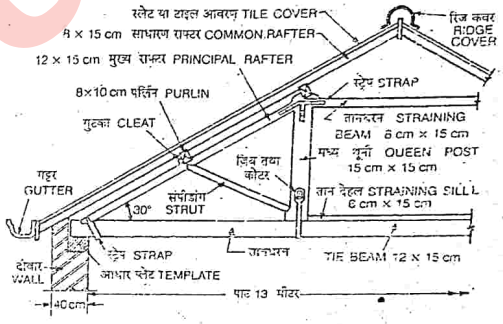

चित्र 7.6–क्वीन-पोस्ट छत कैंची (आधा काट)

जब छत पर टाइलें अथवा स्लेटें लगानी हों, तो आवरण-रिक्ति (Gaps) कैंचियों में दूरी कम करने के लिये, पर्लिनों के ऊपर, उचित अन्तराल पर तथा इनके लम्बवत् साधारण राफ्टर अलग से लगाये जाते हैं।

यह कैंची 13 मी पाट तक प्रयोग की जाती है। कैंचियों की आपसी दूरी तथा आवरण व्यवस्था किंग-पोस्ट कैंची छत की भाँति ही रखी जाती है।

प्रश्न 9—एक ढालू छत के लिए विभिन्न प्रकार के छत आवरण क्या हैं? *(UPBTE 2007)*

उत्तर—एक ढालू छत के लिये विभिन्न आवरण वे होते हैं जो इसे ढकने का कार्य करते हैं—

(1) एकल पार्श्व ढालू छत या बरामदा छत

(2) द्विपाखी छत

(3) तानदार द्विपाखी छत

(4) गल पट्ट या कालर बीम छत

(5) मध्य थूनी या किंग पोस्ट कैंची छत

(6) उत्तर प्रकाशी कैंची छत

(7) विशेष आकृति की कैंची छत।

www.gurupet

प्रश्न 10—छत आवरण क्या होते हैं? विभिन्न प्रकार के छत आवरण के नाम बताइये।

उत्तर— छत आवरण (Roof Coverings)

वर्षा, धूल, धूप, ठण्ड आदि से बचने के लिये छत-कैचियों के ऊपर से ढाँप दिया जाता है। छत आवरण (ढाँपक) का चयन करते समय, आवरण की लागत, आयु, अनुरक्षण व्यय, साइज, अग्निरोधकता, सतही फिनिशिंग, जल रोधकता तथा दृढ़ता पर विचार किया जाता है। इसके साथ-साथ, भवन की उपयोगिता तथा कैचियों की बनावट पर भी ध्यान दिया जाता है। ढालू छतों को ऊपर से ढाँपने के लिये सामान्यतः निम्नलिखित मैटीरियल का प्रयोग किया जाता है—

(i) फूँस के छप्पर (Thatch)
(ii) खपरैल व टाइले (Tiles)
(iii) स्लेट (Slates)
(iv) लहरिया जस्ती चादरें (G.I. Sheets)
(v) लहरिया एस्बेस्टस सीमेन्ट चादरें (Fibre Glass Sheets)
(vi) लहरिया फाइबर ग्लास चादरें (Fibre Glass Sheets)।

प्रश्न 11—छत निर्माण में प्रयुक्त एस्बेस्टास सीमेन्ट की चादरें व जस्तीकृत लोहे की चादरों की तुलना कीजिये। *(UPBTE 2002)*

उत्तर—छत निर्माण में प्रयुक्त एस्बेस्टास की चादरें व जस्तीकृत लोहे की चादरों की तुलना—

क्र. सं.	जस्तीकृत लोहे की चादरें	एस्बेस्टास सीमेन्ट की चादरें
1.	ये चादरें खिंचाँ लोहे को कोल्लित करके बनाई जाती हैं और जंग से बचाव हेतु इन पर जस्ते का लेप किया जाता है।	ये चादरें सामान्य सीमेन्ट से 15% एस्बेस्टास के रेशे मिलाकर बनाई जाती हैं।
2.	ये चादरें सपाट और लहरियादार दोनों प्रकार की होती हैं।	ये भी दोनों प्रकार की होती हैं परन्तु छत आवरण के लिये लहरियादार चादरें ही उचित हैं।
3.	ये चादरें वजन में हल्की होती हैं।	ये चादरें वजन में लोहा चादरों से अधिक भारी होती हैं।
4.	ये चादरें आघात सहन कर लेती हैं। सीधी चोट पर टूटती नहीं।	चोट पड़ते ही टूट जाती हैं तथा बेकार हो जाती हैं।
5.	इन चादरों पर जल्दी जंग लगता है।	इन चादरों पर जंग नहीं लगता।
6.	ये चादरें तेज हवा में उखड़ जाती हैं।	ये चादरें भारी होने के कारण तेज हवा में नहीं उखड़तीं।
7.	ये चादरें धूप में गर्म हो जाती हैं।	ये चादरें अपेक्षाकृत कम गर्म होती हैं।
8.	जस्तीकरण नष्ट होने पर इनको सतह पर पेन्ट करना जरूरी है।	इन चादरों पर पेन्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं।
9.	इन चादरों में छिद्र करना, काटना, जोड़ना तथा लगाना आसान है।	इनमें ड्रिल से छेद करना पड़ता है। काटने तथा लगाने में बहुत सावधानी रखनी पड़ती है।
10.	ये चादरें कम ध्वनि एवं ऊष्मा प्रतिरोधक होती हैं।	ये चादरें पर्याप्त ध्वनि एवं ऊष्मा रोधक होती हैं।

11.	जरूरत पड़ने पर इनका दोबारा प्रयोग किया जा सकता है।	इनका दोबारा प्रयोग करना कठिन है क्योंकि एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर लगाने में टूटने का भय रहता है।
12.	हल्की होने के कारण इन चादरों का परिवहन सरल है।	परिवहन में सावधानी रखनी बहुत आवश्यक है।
13.	ये चादरें महंगी होती हैं।	ये चादरें अपेक्षाकृत सस्ती होती हैं।

प्रश्न 12—ढालू छतों को वायु दाब के कारण उखड़ने से रोकने का क्या तरीका है?

उत्तर— ढालू छतों को वायु दाब के कारण उखड़ने से रोकना (Securing Pitched Roofs Against Up-Lift)

अत्यधिक ऊर्ध्व वायु दाब के कारण, भवनों की छतें ऊपर को उठने और उखड़ जाने की प्रवृत्ति रखती हैं। चपटी छतें पर्याप्त भारी होती हैं और इनका पाट भी अधिक नहीं होता, अतः ये वायु दाब से क्षतिग्रस्त नहीं होती हैं, परन्तु ढालू छतें जो बहुत हल्की होती हैं और बड़े-बड़े पाट रखती हैं, इनके भीतर ऊर्ध्व वायु दाब अधिक तीव्र हो जाता है। आँधी-तूफान के समय ढालू छतों की टाइलें व लहरिया चादरें वायु दाब के कारण उखड़कर, तिनकों की भाँति उड़ती हुयी और आस-पास के घरों व प्राणियों पर गिरती हुयी देखी गई हैं। अतः ढालू छतों को ऊर्ध्व वायु दाब के प्रति अधिक सुरक्षित बनाया जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में कुछ उपाय निम्न हैं—

(i) छत कैंची के सिरों को दीवारों/स्तम्भों पर टिकाकर मजबूती से जकड़ देना चाहिये। इसके लिये एंकर-बोल्ट पर्याप्त दृढ़ होने चाहियें।

(ii) उनकी सिरों (Gable Ends) पर बिनाई को छत-तल से 30 से 50 सेमी ऊपर तक ले जाना चाहिये। दीवार के भार से चादरें दबी रहती हैं और उखड़ने नहीं पाती हैं।

(iii) छत चादरों के ऊपर विण्ड-टाई (Wind-Tie) लगानी चाहिये। प्रत्येक चादर विण्ड-टाई की तीन पंक्तियों (एक-एक सिरों पर तथा तीसरी मध्य में) द्वारा अच्छी तरह जकड़ी जानी चाहिये। यदि पूरी छत पर विण्ड-टाई लगानी सम्भव न हो तो चादरों के लटकते किनारे पर यह आवश्यक रूप से लगानी चाहिये। विण्ड-टाई 40 मिमी ×6 मिमी० माप की इस्पात की मोटी पत्ती (Flat) होती है और यह छत की लम्बाई की दिशा में रिज-रेखा के समान्तर लगायी जाती है। पत्ती में उचित दूरी पर छिद्र करके, इसे चादरों से ऊपर निकले हुक बोल्टों से कस दिया जाता है।

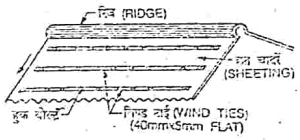

चित्र 7.7—ढालू छत पर विण्ड-टाई लगाना

प्रश्न 13—छतों से वर्षा जल निकासी का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2003)*

उत्तर— छतों से वर्षा जल निकासी (Drainage of Roofs)

वर्षा का पानी छतों से शीघ्र नीचे लाने की व्यवस्था करना चाहिए। यदि यह पानी छत पर एकत्रित हो जाता है तो यह सीलन उत्पन्न करेगा। छतों से वर्षा-जल निकालने की व्यवस्था निम्नलिखित है—

चपटी छतों से जल निकासी—

(i) छत की ऊपरी सतह को कम-से-कम 1 in 40 की बाहर की ओर ढाल देनी चाहिये। यह ढाल कड़ियों अथवा स्लैब में ही दे दी जाती है।

(ii) प्रत्येक 20-30 वर्ग मीटर छत सतह के लिये एक बरसाती नल (डाऊन पाइप), 15 सेमी व्यास का लगाना चाहिये। पाइप के ऊपरी सिरे पर लोहे की मोटी जाली (Grating) लगा देनी चाहिये, ताकि कचरा आदि पाइप में घुसकर इसे चोक न कर दें।

civilguru.net

(iii) बरसाती नलों को बाहरी दीवार के साथ क्लैम्पों द्वारा जो दो-दो मीटर की ऊँचाई पर लगाये जाते हैं, कसा जाता है।

(iv) बरसाती नल ढलवाँ लोहे या एस्बेस्टस सीमेन्ट के होते हैं, जिनके एक सिरे पर सॉक्ट बना रहता है। अब प्लास्टिक के पाइप भी इस कार्य के लिये सन्तोषजनक पाये गये हैं।

(v) बरसाती नल से पानी दूर ले जाने के लिये भूमि पर खुली नाली बनायी जाती है। बरसाती नल किसी मल-नल या सीवर में सीधा नहीं जोड़ना चाहिये, क्योंकि दूषित गैसें, भवन में प्रवेश करने लगती हैं।

ढालू छतों से जल निकासी

ढालू छतों से पानी स्वयं ही ढाल के कारण नीचे आ जाता है। इस पानी को दीवारों तथा फर्श पर बिखरने से रोकने के लिये ईव्ज के साथ गटर लगाये जाते हैं, जहाँ से यह पानी डाऊन-पाइप द्वारा नीचे भूमि पर आ जाता है। गटर के लिये जो० आई० चादर की अर्द्धगोलाकार नलिका (Trough) बनायी जाती है। गटर का व्यास सामान्यतः 30 सेमी रखा जाता है। गटर को लगाने के लिये ईव्ज बोर्ड पर इस्पात के ब्रैकेट, लगभग 1.5 मीटर के क्षैतिज अन्तराल पर लगाये जाते हैं। गटर में जल प्रवाह के लिये, इसे 1 in 20 की अनुलम्ब ढाल देनी चाहिये।

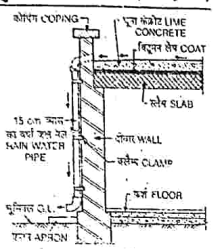

चित्र 7.8–ढालू छत से जल निकासी

प्रश्न 14—छतों को च्यवन रहित (Leakage Proof) क्यों उपाये किये जाते हैं? *(UPBTE 2004)*

उत्तर—

छतों को च्यवन-रहित बनाना
(Treatment of Roofs Against Leakage)

चपटी छतें (Flat Roofs)—चपटी छतों को च्यवन-रहित बनाने के लिये अधिक सावधानी बरतनी पड़ती है। जब दोषपूर्ण पदार्थों का छत-निर्माण में प्रयोग किया जाता है अथवा छत की ढाल आवश्यकता से कम है तो वर्षा का पानी छत पर एकत्रित होने लगता है और धीरे-धीरे छत के भीतर प्रवेश कर जाता है परिणामस्वरूप छत रीसने-टपकने लगती है और टपकने लगती है।

चपटी छतों को च्यवन-रहित बनाने के लिये निम्न उपाय करने चाहियें—

(i) छत का उत्तम तथा जल रोधक मैटीरियल से निर्माण करना चाहिये।

(ii) छत को उचित ढाल (1 in 40 से 1 in 60) देनी चाहिये ताकि वर्षा जल शीघ्र बहकर छत से नीचे चला जाये। यह ढाल, छत स्लैब अथवा चूना कंक्रीट परत (Lime Concrete Terracing) को दी जाती है।

(iii) छत से जल निकासी के लिये उचित संख्या में बरसाती नल लगाने चाहियें। प्रत्येक 10 मी² छत क्षेत्रफल के लिये कम से कम एक पाइप लगाना आवश्यक है।

(iv) छत पर बिटुमिन कोल या बिटुमिन फेल्ट (Felt) अथवा दोनों का प्रयोग करना चाहिये। बिटुमिन गर्म करके 1.70 किग्रा/मी² की दर से छिड़कना चाहिये और बिटुमन फेल्ट के सिरों पर चढ़ाव 8 सेमी से कम नहीं होना चाहिये (देखें अनुच्छेद 5.8, 22.3.7)।

(v) छत तथा पैरापिट के संगम पर सीमेन्ट-कंक्रीट का अर्धगोला फिलेट (Fillet) लगानी चाहिये। (चित्र 10.2 देखें)।

(vi) बिटुमिन फेल्ट को पैरापिट की दीवार के साथ, ऊर्ध्वाधर 15 सेमी की ऊँचाई तक लगाकर, इसका ऊपरी सिरा दीवार के जोड़ में 8 सेमी तक धँसा देना चाहिये।

(vii) पैरापिट के ऊपर शीर्षक (Coping) लगाना चाहिये, जिसके निचले भाग पर कण्ठ (नली) कटी होनी चाहिये।

ढालू छतें (Sloppy Roofs)—सामान्यतः ढालू छतों में टपकने की समस्या कम सामने आती है। यदि छत को उचित ढाल दी जाये, छत-चादरों के पार्श्व पर पर्याप्त चढ़ाव दिया गया हो और वर्षा जल निकास पाइप तथा गटर साफ रखे गये हों, तो ढालू छतों से पानी नहीं टपकता है। छत-चादरों को J-बोल्टों से कसते समय नटों के नीचे बिटूमन व कप वाशर अवश्य लगाने चाहियें ताकि छिद्रों से टपकन न हो।

ढालू छत से उत्तम जल निकासी के लिये चादरों की लहरिया सीधी रेखा में होनी चाहिये। गटर को 1 in 20 की अनुलम्ब ढाल देनी चाहिये ताकि उनमें पानी बहता हुआ वर्षा-जल पाईप में चला जाये। गटर लीक-प्रूफ होना चाहिये। जब ढालू छतों के चारों ओर मुंडेर बनायी जाये, तो गटर तथा मुंडेर के साथ-साथ लेड-फ्लेशिंग (Lead-Flashing) लगानी चाहिये।

प्रश्न 15—सीलिंग (Ceiling) क्या होती है? *(UPBTE 2000)*

उत्तर—अंतश्छद (सीलिंग) (Ceiling)—लहरियादार चादरों की ढालू छतें ग्रीष्म ऋतु में शीघ्र गर्म हो जाती हैं, अतः इनके नीचे टेबल-वर्क करना कठिन हो जाता है। देखने पर भी, ढालू छतें भीतर से अटपटी लगती हैं। जहाँ पर वातानुकूलन कक्ष ऐसी छतों के नीचे स्थापित किये गये हैं, वहाँ ये और भी अधिक आपत्तिजनक होती हैं। अतः ढालू छतों के नीचे तान-चद्दरों पर आलम्बित एक क्षैतिज आवरण लगाया जाता है, जिसे अन्तश्छद या आभासी अन्तश्छद (False Ceiling) कहते हैं। जिन कक्षों में वातानुकूलन, छत-प्रकाश, ध्वनि व ऊष्मा रोधन करना हो अथवा छत में अग्निशमन के पाइप बिछाने हों, वहाँ पर भी आभासी अन्तश्छद लगानी पड़ती है। इन प्रावधानों के लिये आवश्यक वाहिनी (Ducts) मूल छत और आभासी अन्तश्छद की रिक्ति (Gap) में डाले जाते हैं।

आभासी अन्तश्छद खड़ी करने के लिए तान-चद्दरों के नीचे उचित दूरी पर सीलिंग कड़ियाँ लगाकर, नीचे से सीलिंग बोर्ड जड़ दिये जाते हैं।

सीलिंग बोर्ड के लिये लकड़ी के पटरे, प्लाई-शीट, हार्ड-बुड, स्ट्रा-बोर्ड, सफाल एस्बेस्टस-सीमेन्ट चादरें कलात्मक ढंग से लगायी जाती हैं तथा इन पर विभिन्न पेन्ट कर दिये जाते हैं। आजकल बाजार में रेडीमेड सीलिंग बोर्ड उपलब्ध हैं जो

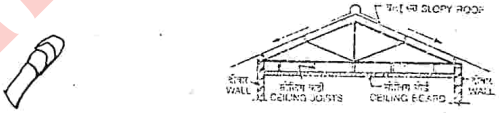

चित्र 7.9–ढालू छत के लिये अन्तश्छद (सीलिंग)

आकर्षक होने के साथ-साथ ऊष्मा रोधक व ध्वनिरोधक भी होते हैं। सीलिंग के लिये पैरिस-प्लास्टर, फैरूसाइड तथा एस्बेस्टस का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की सीलिंग सिनेमाघरों में लगी रहती है।

iMgur.net

8 सोपान व जीना कक्ष
(Stairs & Stair-Case)

प्रश्न 1—एक अच्छे सोपान की क्या आवश्यकतायें हैं? *(UPBTE 2004)*

उत्तर—एक अच्छी सीढ़ी होने के लिये निम्न विशेषतायें होनी चाहियें—

(1) **स्थिति** (Location)—जीने की स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि उस तक बिना रोक-टोक तथा दूसरे कमरों की एकान्तता भंग किये बगैर पहुँचा जा सके।

(2) **प्रकाश तथा वायु** (Light and Ventilation)—जीने का उपयोग बच्चे-बड़े, सभी आयु के लोग दिन-रात करते हैं अतः इसमें प्रकाश की उत्तम व्यवस्था रहनी चाहिये। इसमें यदि दिन में सूर्य का प्रकाश आता है, जो जीना उत्तम माना जाता है। जीने में ताजी वायु के संचरण की भी व्यवस्था रहनी चाहिये।

(3) **जीने की चौड़ाई** (Width of the Stairs)—जीने की चौड़ाई इतनी अवश्य रखनी चाहिये ताकि एक ही समय में जीने से ऊपर तथा ऊपर से नीचे आने वाले व्यक्ति बिना टकराये एक-दूसरे को पास कर सकें। यह 1 से 1·5 मीटर होनी चाहिये।

(4) **उठान-पट अनुपात** (Rise-Tread Ratio)—यह अनुपात ऐसा होना चाहिये कि जीना चढ़ते समय थकान महसूस न हो। पट की चौड़ाई इतनी अवश्य होनी चाहिये कि इस पर पूरा पाँव पड़ सके। चौड़ाई 25 cm से कम व उठाव 20 cm से अधिक न हो।

(5) **कदमचा मान** (Steps Setting)—एक जीना पंक्ति में सभी उठान समान ऊँचाई के होने चाहियें। असमान ऊँचाई वाले कदमचों पर चढ़ते समय सहसा झटका लगता है और चढ़ने वाला व्यक्ति संतुलन खो देता है, जिसके फलस्वरूप दुर्घटना हो सकती है।

(6) **जीने की ढाल** (Pitch of the Stairs)—जीने की ढाल व्यावहारिक होनी चाहिये। अधिक ढाल पर जीना चढ़ने में थकान आती है तथा फिसलने का भय रहता है, जबकि कम ढाल देने पर जीना आवश्यकता से अधिक स्थान घेरता है। जीने की ढाल 25° से 40° के मध्य उत्तम रहती है।

(7) **चौकी** (Landing)—चौकी की चौड़ाई, जीने की चौड़ाई से किसी भी दशा में कम नहीं होनी चाहिये। चौकी पर प्रकाश की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिये और गिरने से रोकने के लिये जंगला लगाना चाहिये तथा पार्श्व में दीवार होनी चाहिये।

(8) **फिसलन रहित सतह** (Non-slippery)—कदमचों की ऊपरी सतह का मैटीरियल ऐसा होना चाहिये, जिससे फिसलन न हो, अन्यथा गंभीर घटना हो सकती है। जीने में वर्षा या अन्य पानी का प्रवाह बिल्कुल नहीं होना चाहिये।

प्रश्न 2—स्वच्छ चित्र के साथ Dog Legged Stair को समझाइये। *(UPBTE 2004)*

उत्तर—यह जीना दो समान्तर पंक्तियों में बनाया जाता है, जो एक दूसरी के विपरीत परन्तु आपस में सटी हुई (अर्थात् आस-पास) होती हैं। लम्बाई की दिशा से देखने पर इस जीने का काट (section) कुत्ते की टांग की भाँति बनता है अतः यह जीना इस नाम से जाना जाता है। क्योंकि इस जीने में दोनों पंक्तियाँ एक-दूसरे से सटी रहती हैं, अतः जीने, कमरे की चौड़ाई, जीने की चौड़ाई के लगभग दुगने के बराबर होती हैं।

दोनों पंक्तियों के संगम पर जो 180° का मोड़ स्थल उपलब्ध रहता है, उसमें निम्नलिखित कोई एक व्यवस्था की जाती है—

(1) एक पूरी चौकी, जो दोनों पंक्तियों की चौड़ाई के योग के बराबर होती है।

(2) एक आधी चौकी तथा दूसरी आधी चौकी में घुमावदार कदमचों की शृंखला।

(3) पूरी चौकी में घुमावदार कदमचे।

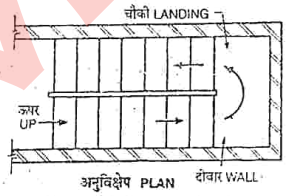

चित्र 8.1–प्रतिवर्ती या कुत्ता-टांग जीना

सहूलियत की दृष्टि से दोनों पंक्तियों की संगम चौकी में घुमावदार कदमचे नहीं लगाने चाहियें।

प्रतिवर्ती (कुत्ते-टांग) जीना बहुतलीय भवनों में अधिक निर्मित किया जाता है, क्योंकि यह कम स्थान घेरता है और ऊपरी मंजिलों की सीढ़ियाँ एक-दूसरे के ऊपर सम्पाती होती हैं। इसे लहरियादार जीना भी कहते हैं।

प्रश्न 3—सोपानों के विस्तृत वर्गीकरण को प्रस्तुत करें। *(UPBTE 2006)*

उत्तर—आकार के अनुसार जीने निम्न प्रकार के होते हैं—

(i) सीधा जीना (Straight flight stair)
(ii) समकोण जीना (Quarter turn stair)
(iii) कुत्ता टाँग जीना (Dog-legged stair)
(iv) खुला कूपक जीना (Open-well stair)
(v) द्वि-शाखी जीना (Bifurcated stair)
(vi) गोल जीना (Circular stair)
(vii) ज्यामितीय जीना (Geometrical stair)
(viii) सर्पिल जीना (Spiral stair)
(ix) सीढ़ी (Ladder)।

प्रश्न 4—सोपानों के लिये प्रयुक्त निम्न पदों को समझाइये। *(UPBTE 2007)*

उत्तर—(1) **Winders**—यह घुमावदार कदमचे होते हैं इनका प्रयोग आदर्श जीने में नहीं करना चाहिये।

(2) **सोपान की चौड़ाई**—सोपान की चौड़ाई इतनी होनी चाहिये कि ऊपर व नीचे से आने-जाने वाले लोग आसानी से आ-जा सकें।

(3) **Nosing**—ट्रेड के कुछ बाहर निकले हुए सिरे को नोजिंग कहते हैं।

(4) **Baluster**—यह लकड़ी, धातु, कंक्रीट आदि के कम ऊँचाई के ऊर्ध्वाधर दण्ड होते हैं, जिस पर हस्त धरनी टिक जाती है।

(5) **Trend**—जीने पर हम जिस सतह पर पैर रखकर चढ़ते हैं उसे ट्रेड कहते हैं। यह पैर रखने की जगह के बराबर होता है।

प्रश्न 5—किसी सोपान के पश्चात् और उत्थान की गणना करने की विधि समझाइये। *(UPBTE 2005, 12)*

उत्तर—सीने का पट व उठाने का अनुपात ऐसे रखना चाहिये कि चढ़ाव व उतराव में परेशानी का अनुभव न हो। पट तथा उठान के माप निर्धारण करने के लिये निम्नलिखित अनुपात अपनाये जा सकते हैं—

(i) पट + उठान = 15 cm
(ii) पट × उठान = 375 ...
(iii) पट + 2 × उठान = 55-65 cm
(iv) मानक माप पाट = 30 सेमी
उठान = 15 सेमी।

प्रश्न 6—खुला-कूपक सोपान को सचित्र समझाइये। (2016)

उत्तर—**खुला-कूपक सोपान (Open Well Stair)**—यह एक खुला प्रतिवर्ती सोपान होता है परन्तु दोनों विपरीत पंक्तियों के मध्य पर्याप्त खाली स्थान छोड़ा जाता है। ऊपर से देखने पर, यह खाली स्थान एक सूखे गहरे कुएँ की भाँति दिखता है, जिसके चारों ओर शृंखला बन्द कदमचे चक्कर लगाते नजर पड़ते हैं। कुएँ की तरफ, सोपान की फ्लाइट के साथ-साथ कम ऊँचाई के उपस्तम्भ लगाकर, सीढ़ी का जंगला लगाया जाता है, ताकि कुएँ में गिर पड़ने का भय न रहे (चित्र 8.2)।

कुएँ में, ऊपर डाली गई छत से उचित प्रकाश की व्यवस्था की जाती है, जिससे सोपान के कदमचों पर सीधी रोशनी पड़ती रहे। खुले कुएँ का प्रयोग लिफ्ट लगाने के लिये भी किया जाता है।

civilguruji.in

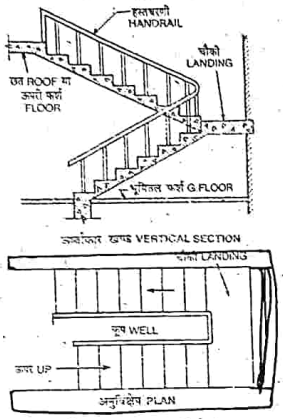

चित्र 8.2–खुला-कृपण जीना

सोपान अश्व की चौड़ाई दोनों पंक्तियों की चौड़ाई और कुएँ की चौड़ाई का योगफल होती है। दोनों पंक्तियों के संगम पर एक पूरी चौकी (Half Space Landing) अथवा दो आधी चौकियाँ तथा कुएँ की चौड़ाई के सामने, कुछ कदमचों की व्यवस्था की जाती है। अधोलम्बवत इस सोपान में घूमते कदमचे नहीं लगाने चाहिये। यह सोपान सार्वजनिक भवनों के लिये उत्तम रहता है।

प्रश्न 7—प्रतिबल ईंट चिनाई का सोपान का रेखाचित्र के साथ उल्लेख कीजिये।

उत्तर—

प्रतिबल ईंट चिनाई का सोपान
(Reinforced Brick Stairs)

ईंट-चिनाई की स्लैब में, उचित दूरी पर इस्पात की छड़ें दबाकर, यह सोपान बनाया जाता है। स्लैब डालने के लिये ढूला बाँधा जाता है। प्रबलित ईंट चिनाई के जोड़ों की मोटाई छड़ों के व्यास के अनुरूप रखी जाती है। चिनाई सीमेन्ट मसाले 1 : 3 में का जाता है। प्रबलित ईंट चिनाई को 10 दिन तक पानी [illegible] दी जाती है। स्लैब के सैट होने पर ईंट चिनाई के कदमचे बनाये जाते हैं।

छोटे पाट तक के भवनों के लिये प्रबलित ईंट चिनाई का सोपान सस्ता पड़ता है। चिनाई पर प्लास्टर करके जीने को साफ व समतल बनाया जाता है।

प्रबलित ईंट चिनाई का सोपान आवासीय भवनों के लिये उत्तम है।

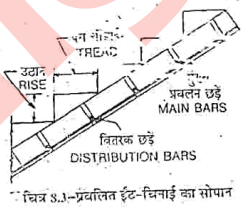

चित्र 8.3–प्रबलित ईंट-चिनाई का सोपान

प्रश्न 8—प्रवेणी या रैम्प क्या है?

उत्तर—

प्रवेणी या रैम्प (Ramp)

जब भारी सामान, फर्नीचर, मशीनरी, साइकिल, स्कूटर इत्यादि एक तल से दूसरे तल पर ले जाने होते हैं, तब सामान्य सोपान से ले जाने में काफी दिक्कत आती है। ऐसे स्थानों पर प्रवेणी (रैम्प) बनायी जाती है। यह ढालू फर्श की भाँति होती है और सामान को लुढ़काकर अथवा ट्राली से वांछित तल पर पहुँचाया जाता है।

प्रवेणी की ढाल सामान्यतः 1 in 10 रखी जाती है। इसके फर्श पर आड़े, कम गहरे, खाँचे (chequered) बना दिये जाते हैं ताकि ढाल से फिसलने का भय न रहे। प्रवेणी रेलवे प्लेटफार्म, बहुतली कार्यालयों, गोदामों, अस्पतालों के लिये विशेष तौर पर बनायी जाती है।

प्रश्न 9—चल सोपान या एस्केलेटर क्या होता है?

उत्तर—

चल सोपान या एस्केलेटर (Escalator)

यह एक प्रकार का सचल-सोपान होता है जिसके कदमचे एक ढालू, सिरा-रहित (Endless) बेल्ट पर टिके रहते हैं। बेल्ट के घूमने पर कदमचे ऊपर उठते अथवा नीचे उतरते जाते हैं। एस्केलेटर पर व्यक्ति को कदम उठाकर ऊपर चढ़ना अथवा उतरना नहीं पड़ता, बल्कि कदमचे हरकत करते हैं और व्यक्ति एक ही कदमचे पर खड़ा हुआ, बिना परिश्रम किये वांछित तल पर पहुँचा जाता है।

एस्केलेटर युगल (सैट) में स्थापित किये जाते हैं। एक ऊपर जाने के लिये, दूसरा नीचे उतरने के लिये। सहारे के लिये तथा गिरने से बचने के लिये इनके पार्श्व में हस्त धरनी (Hand Rail) लगायी जाती है।

जब जीने पर बहुत अधिक (3000 व्यक्ति प्रतिघण्टा) यातायात होता है, एस्केलेटर लगाये जाते हैं। यह मुख्यतः बैंक, व्यापारिक केन्द्र, होटल, सिनेमाघर, विमान पत्तन, रेलवे प्लेटफार्म इत्यादि पर लगाये जाते हैं।

प्रश्न 10—दिल्लेदार दरवाज क्या होता है? *(UPBTE 2013)*

उत्तर—

दिल्लेदार दरवाजा (Panelled Door)

(a) **रचना**—लकड़ी की ऊर्ध्व व क्षैतिज पट्टियों का फ्रेम बनाकर, इसे कई भागों में विभाजित कर लिया जाता है। फ्रेम के बीच जो खाली जगहें रह जाती हैं, उसे दिल्ला कहते हैं, जिसके अन्दर लकड़ी के पैनल (Panel) लगा दिये जाते हैं। दिल्लों में लोहे की चादर या प्लाई शीट भी लगाई जाती है। फ्रेम की खड़ी पट्टियों को स्टाइल (styles) तथा क्षैतिज पट्टियों को रेलें (Rails) कहते हैं। ऊपरी तथा तली की क्षैतिज पट्टियों (Rails) के अतिरिक्त, फर्श से 70–85 सेमी० की ऊँचाई पर एक और क्षैतिज पट्टी लगाई जाती है, जिसे ताला पट्टी (Lock Rail) कहते हैं। ताला-पट्टी पर बेलन बोल्ट लगाकर कपाट को बन्द करने की व्यवस्था की जाती है।

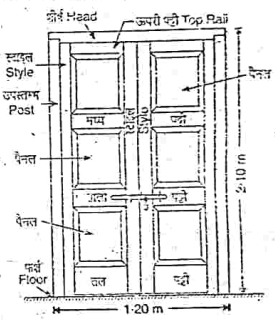

चित्र 8.7–दिल्लेदार दरवाजा

दिल्लों (पैनल) की संख्या के आधार पर ही इस दरवाजे को 6 पैनल अथवा 8 पैनल वाला दरवाजा कहते हैं। यह दरवाजा सामान्यतः दो [illegible] 6 या 8 पैनल वाला दरवाजा लिखा गया है। दरवाजे की सामान्य फिटिंग (बन्धक) अनुच्छेद 8.16 में दी गई है।

(b) **उपयोग**—यह एक सुन्दर, मजबूत तथा सुन्दर दिखने वाला दरवाजा है। इस दरवाजे का प्रयोग आवासीय तथा सार्वजनिक भवनों के मुख्य कमरों के लिये किया जाता है। एकान्तता की दृष्टि से यह दरवाजा उत्तम है, क्योंकि इसके पूरे भाग पर ठोस पैनल लगे रहते हैं।

प्रश्न 11—अभ्यन्तर के निर्माण में काँच के गुण तथा प्रयोग की विवेचना कीजिए। *(UPBTE 2013)*

उत्तर—काँच जुड़ाई या ग्लेजिंग (Glazing)—दरवाजे-खिड़कियों के पेनल में काँच लगाने को ग्लेजिंग कहते हैं। बड़े पेनल में संधार पट्टी (Sash Bar) लगाकर उपयुक्त माप में काँट लिया जाता है और उसी माप का काँच काटकर इसमें फिट कर दिया जाता है। काँच को काटने के लिये ग्लेजियर डायमण्ड (काँच हीरा) प्रयोग किया जाता है।

काँच को टिकाने के लिये संधार पट्टी में 10 मिमी० का पताम (Rebate) काटा जाता है। काँच को स्थिर करने के लिये पुटीन (Putty) अथवा लकड़ी की स्ट्रिप (Beading) लगाई जाती है। धातु की चौखटों में काँच जड़ने के लिये बीडिंग नहीं लगाई जाती है, बल्कि फ्रेम में बने छिद्रों में तार के स्प्रिंगदार क्लिप घुँस कर पुटीन भर दी जाती है। काँच की मोटाई 0·1 m^2 के पेनल तक 2 mm और इससे बड़े पेनल के लिये 4 mm से कम नहीं होनी चाहिये। स्नानगृह व शौचालय की खिड़कियों/रोशनदानों में फ्रोस्टड (अर्ध-पारदर्शक) काँच लगाया जाता है। काँच की फ्रोस्टड (Frosted) फलक भीतर को रखी जाती है।

civilguru.net

9 सतह परिष्कृति (Surface Finishings)

प्रश्न 1—सतह परिष्कृति से आप क्या समझते हैं? परिष्कृति के लिये क्या उपाय है?

उत्तर—साधारण चिनाई की दीवारे देखने में साफ, समतल व सुन्दर दिखायी नहीं देती हैं। इनकी ऊपरी सतह असम होती है और चिनाई जोड़ भी अटपटे व भद्दे लगते हैं। इन जोड़ों में धूली एकत्रित हो जाती है, कीट अपने ठिकाने बना लेते हैं और वर्षा का पानी भी घुसने लगता है। इससे दीवारों में सीलन पनपती है और इनकी सामर्थ्य प्रभावित होती है। अत: दीवारों को वायुमण्डलीय कुप्रभावों से बचाने के लिए तथा इनकी सुन्दरता बढ़ाने के लिए, इनकी बाहरी व भीतरी सतहों पर प्रलेपन तथा उपचार किया जाता है। इसे दीवारों की परिष्कृति (Finishings) कहते हैं।

दीवारों की परिष्कृति के लिए इन पर टीप (Pointing), प्लास्तर (Plastering) तथा सफेदी व रंगदार पुताई की जाती है।

प्रश्न 2—टीप (Pointing) से आप क्या समझते हैं? इसकी आवश्यकता व उद्देश्य को स्पष्ट कीजिये। *(UPBTE)*

उत्तर—चिनाई में सबसे कमजोर भाग, इसके क्षैतिज व ऊर्ध्वाधर जोड़ होते हैं, जिनसे वर्षा-जल दीवार के भीतर घुस जाता है और दीवार में सीलन आने लगती है। चिनाई के जोड़, धूप व वायु से भी प्रभावित होते हैं। अत: जोड़ों की सुरक्षा के लिए, इनके बाहरी फलकों को अधिक बलशाली मसाले से भर दिया जाता है। इस कार्य को टीप करना (प्वाइन्टिंग) (Pointing) कहते हैं। टीप में केवल जोड़ों का उपचार (Retouch) किया जाता है, जबकि प्लास्तर में पूरी दीवार पर लेप चढ़ा दिया जाता है। टीप ऐसी सतहों पर की जाती है, जिस पर सफेदी या रंगीन पुताई करनी आवश्यक न हो और इन्हें अपने प्राकृतिक रंग-रूप में बनाये रखना हो।

टीप के उद्देश्य (Objects of Pointing)

यह निम्न है—

(i) जोड़ों की सामर्थ्य बढ़ाना—टीप जोड़ों को जो चिनाई का कमजोर भाग होते हैं, दृढ़ता प्रदान करती है और वर्षा, धूली व वायु के प्रकोप से बचाती है।

(ii) नमी को दूर करना—अच्छी टीप चिनाई के जोड़ों में बाहरी जल व सीलन को घुसने से रोकती है।

(iii) दीवार की सुन्दरता बढ़ाना—प्लास्तर करने से जहाँ दीवार के पत्थरों व ईंटों की प्राकृतिक सुन्दरता व रंग-रूप ढक जाता है, वहाँ जोड़ों में टीप करने से यह सुन्दरता व रंग-रूप और अधिक निखर आता है।

(iv) हीन चिनाई को प्रबल बनाना—मिट्टी-गारे की चिनाई में जोड़ बहुत कमजोर होते हैं, टीप करने से वह जल-रोधक तथा मजबूत हो जाते हैं।

(v) फलकों को आकर्षक बनाना—विभिन्न डिजाइनों की टीप करके दीवार की बाहरी सतह को और अधिक आकर्षक बनाया जा सकता है।

(vi) सफेदी-पुताई से छुटकारा—टीप की गई सतहों पर सफेदी या रंगीन पुताई करने की आवश्यकता नहीं रहती।

(vii) अधिक आयु—बहते जल के सम्पर्क में आने वाले क्षेत्रों, स्तम्भों तथा फर्शों पर प्लास्तर अधिक समय तक टिक नहीं पाता और उखड़ने लगता है। अत: ऐसे स्थानों पर टीप उपयुक्त रहती है। टीप कार्य की आयु प्लास्तर से अधिक होती है।

(viii) न्यूनतम मसाला—प्लास्तर की तुलना में टीप करने में कम मसाला लगता है।

प्रश्न 3—प्लास्तर के क्या उद्देश्य हैं? *(UPBTE 2010)*

उत्तर—

प्लास्तर के उद्देश्य (Object of Plastering)

प्लास्तर करने के उद्देश्य अग्रलिखित हैं—

(i) चिनाई के दोष ढाँपने के लिए—चिनाई की दीवार में पत्थरों या ईंट के उभारों (Projections) को ढाँपने के लिए तथा चिनाई के दोषों को छुपाने के लिए, प्लास्तर किया जाता है।

(ii) समतल फलकें—दीवार की सतह को समतल, साफ तथा चिकना बनाने के लिए, जिससे भवन की सुन्दरता बढ़ जाये, प्लास्तर किया जाता है।

(iii) वायुमण्डलीय कुप्रभाव से रक्षा—दीवारों की बाहरी सतह को वायुमण्डल के दूषित प्रभाव (जैसे—वर्षा, सीलन, ताप) से बचाने के लिए।

(iv) स्वच्छता—प्लास्तर करने पर, सतह स्वच्छ दिखती है। दीवारों पर धूली नहीं जमने पाती।

(v) चिनाई की वर्षा से रक्षा—जब चिनाई मिट्टी-गारे से की गई हो, तो वर्षा से दीवारों की रक्षा करने के लिए प्लास्तर किया जाता है।

(vi) सफेदी-पुताई के लिए—दीवार की सतह पर सफेदी, रंगदार पुताई, डिस्टेम्पर आदि करने से पहले, उपयुक्त आधार प्रदान करने के लिए, दीवार पर प्लास्तर करने की आवश्यकता पड़ती है।

(vii) दीवारों पर कलात्मक चित्रण के लिए—दीवारों की सतह पर नक्शा-निगारी (Ornamental Work) करने के लिए प्लास्तर का आधार आवश्यक है।

यह भ्रम है कि दीवारों पर प्लास्तर करने से दीवारों की भार-वहन क्षमता अथवा सामर्थ्य बढ़ जाती है। यदि दीवार की, उत्तम श्रेणी की ईंटों या पत्थरों की सीमेन्ट मसालें में चिनाई की जाये तो दीवारों पर प्लास्तर करने की आवश्यकता नहीं रहती, फिर पत्थरों का प्राकृतिक शेड (Shad) या ईंटों का आकर्षक लाल ब्रिक-कलर स्वयं ही सुन्दरता का द्योतक है जो प्लास्तर करने से दब जाता है।

प्लास्तर की आयु, टीप से कम होती है। प्लास्तर कुछ वर्ष के बाद उखड़ने लगता है। तब पुराने प्लास्तर को निकालकर, नया प्लास्तर कर देना चाहिए। प्लास्तर से ईंटों/पत्थरों को सुरक्षा मिलती है, जिससे वह अपनी सामर्थ्य बनाये रखते हैं।

प्रश्न 4—एक अच्छे प्लास्तर के गुण बताइये।

उत्तर—

अच्छे प्लास्तर के गुण (Qualities of a Good Plaster)

अच्छे प्लास्टर के निम्नलिखित गुण होने चाहियें—

(i) प्लास्तर की हुई सतह वायुमण्डलीय प्रभाव जैसे—धूप, पानी, कोहरा, सीलन, ताप आदि से प्रभावित न हो।

(ii) प्लास्तर सतह साफ, चिकनी व समतल नजर आनी चाहिए।

(iii) प्लास्तर टिकाऊ व स्थाई होना चाहिए। सूखने पर इसमें दरारें, फटान, फफोले (ब्लिस्टरिंग) नहीं आने चाहियें।

(iv) प्लास्तर में उत्तम बन्धक गुण होना चाहिए ताकि यह चिनाई व अन्य सतहों को दृढ़ता से पकड़ ले।

(v) प्लास्तर ध्वनिशोषक व अग्नि-प्रतिरोधी होना चाहिये।

(vi) प्लास्तर की लागत कम होनी चाहिये।

(vii) प्लास्तर पर्याप्त सामर्थ्यवान होना चाहिए। टकराने अथवा थोड़ी चोट पड़ने के कारण यह उखड़ना नहीं चाहिये।

प्रश्न 5—प्लास्तर में दोष तथा उनको दूर करने के उपाय बताइये। *(UPBTE 2010)*

उत्तर—

प्लास्तर में दोष तथा उनको दूर करने के उपाय (Defects in Plastering and their Remedies)

प्लास्तर-मसाला दूषित होने तथा प्रलेपन-कार्य ठीक से न करने पर प्लास्तर में निम्न दोष प्रकट हो जाते हैं—

(i) फफोले पड़ना, (ii) दरारें पड़ना, (iii) टूट कर गिरना, (iv) लोना लगना।

इन दोषों की विस्तृत चर्चा तथा दोष-निवारण के उपाय निम्न हैं—

(i) फफोले पड़ना (Blistering)—यह दोष चूना प्लास्तर में पाया जाता है। जब प्लास्तर में बिना बुझा (Unslakled) अथवा आंशिक रूप से बुझा चूना प्रयोग किया जाता है, तो इसके कण, प्लास्तर होने के बाद, वातावरण से नमी पाकर बुझते और फूलने लगते हैं। इससे चूना प्लास्तर की सतह पर फफोले पड़ जाते हैं और प्लास्तर उखड़ने लगता है।

evidyarthi.net

उपाय—चूने को प्रयोग से पहले अच्छी तरह बुझा लेना चाहिये।

(2) दरारें पड़ना (Cracking)—प्लास्तर में दरार पड़ने के कारण निम्नलिखित हो सकते हैं—

(i) प्लास्तर करने से पहले सतह को अच्छी तरह तैयार न करना।

(ii) प्लास्तर की अत्यधिक मोटी परत लगाना।

(iii) क्षेत्र के तापमान में बार-बार परिवर्तन होने से।

(iv) प्लास्तर मैटीरियल के सिकुड़ने पर।

उपाय—प्लास्तर कार्य में सुधार करके दरारों को रोका जा सकता है। प्लास्तर की साधारण मोटाई 15-20 mm से अधिक नहीं होनी चाहिये।

(3) टूटकर गिरना (Falling of Plaster)—निम्नलिखित कारणों से प्लास्तर टूटकर नीचे गिरने लगता है—

(i) जब प्लास्तर की दीवार-सतह से पकड़ ठीक नहीं होती।

(ii) प्लास्तर की विभिन्न परतों (Coats) का आपस में अभिलाग अच्छा नहीं होता है।

(iii) प्लास्तर सतह पर सीलन का बने रहना।

(iv) तापक्रम के अधिक परिवर्तन के कारण।

(v) मसाले में संघटक पदार्थ, जैसे—सीमेन्ट, चूने का अनुपात में कम होना।

उपाय—प्लास्तर करने से पहले दीवार-सतह को अच्छी प्रकार तैयार करना चाहिए तथा मसाले में उपयुक्त अनुपात में संघटक मिलाने चाहिएँ।

(4) लोना या शोरा लग जाना (Efflorescence)—जब चिनाई में इस्तेमाल की गई ईंटों अथवा पानी में क्षारीय अधिक मात्रा में विद्यमान होते हैं, यह नमी पाकर प्लास्तर सतह पर सफेद भुर-भुरी परत के रूप में प्रकट होने लगते हैं। इससे प्लास्तर सतह फूली लगती है और उखड़ने लगती है।

उपाय—दीवार में अच्छी किस्म की ईंटें प्रयोग करनी चाहिएँ तथा दीवार में सीलन के प्रवेश को रोकना चाहिए। नीचे से सीलन को दीवार में जाने से रोकने के लिए, इनमें कार्बन-टेट्राक्लोराइड या फिनाइल का पानी (5 भाग पानी) में मिलाकर, दीवार पर छिड़का जाता है और ऊपर चूने से सफेदकर सतह को साफ किया जाता है जिससे साफ जल से दीवार को भी दिया जाता है।

प्रश्न 6—प्लास्तर के लिए विभिन्न प्रकार के मसालों के नाम बताइये। *(UPRTS 2007)*

उत्तर—प्लास्तर के मसाले में प्रयुक्त बंधक पदार्थ के अनुसार प्लास्तर को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है—

(1) सीमेन्ट प्लास्तर—इस प्लास्तर में सीमेन्ट के साथ मिलाने के रूप में बालू या राख का प्रयोग किया जाता है। प्लास्तर के मसाले में सीमेन्ट बालू का अनुपात 1 : 2 से 1 : 6 तक हो सकता है। बालू का अनुपात जितना कम होगा प्लास्तर की सामर्थ्य उतनी ही अधिक होगी लेकिन उसकी लागत भी उतनी ही अधिक आयेगी। प्लास्तर कार्य की स्थिति के अनुसार उपयुक्त अनुपात का मसाला तैयार किया जाता है।

इस प्लास्तर के गुण कंक्रीट [illegible] के लिए उपयुक्त है परन्तु इसके परिणाम सदा [illegible] अच्छे होते हैं।

(2) चूना प्लास्तर—इस प्लास्तर में चूने के साथ मिलाने के रूप में सुर्खी या सुर्खी रेत संयुक्त रूप से प्रयोग किए जाते हैं। प्लास्तर के मसाले में चूना सुर्खी का अनुपात 1 : 1 से 1 : 4 तक होता है।

इस प्लास्तर के मौसम सह गुण अच्छे नहीं होते हैं। इसलिए यह प्लास्तर बाह्य सतहों के लिए उपयुक्त नहीं है। आंतरिक सतहों के लिए यह प्लास्तर सीमेन्ट प्लास्तर से भी अच्छा रहता है, क्योंकि इस पर सफेदी की पकड़ अच्छी आती है।

(3) गारे का प्लास्तर—साफ व महीन मिट्टी को एक गड्ढा खोदकर उसमें भर देते हैं तथा मिट्टी में पानी डालकर फावड़े से अच्छी प्रकार गोड़ी करते हैं। इस प्रकार गारा तैयार करते हैं।

प्रश्न 7—निम्न की विवेचना कीजिये—

(i) ध्वनि अवशोषक प्लास्तर (ii) पैरिस प्लास्तर

उत्तर—**(i) ध्वनि अवशोषक प्लास्तर**—यह जिप्सम के मिश्रण से बनाया जाता है और ध्वनि अवशोषण के लिए दीवारों और सिलिंग पर किया जाता है। प्लास्तर की सतह पर बहुत महीन छिद्र बन जाते हैं, जो ध्वनि का अवशोषण करते हैं। यह प्लास्तर साधारणतः दो कोट में किया जाता है और प्रत्येक कोट की मोटाई 6 मिमी० रखी जाती है।

(ii) पैरिस प्लास्तर—यह प्लास्तर जिप्सम से बनाया जाता है। इसे **कैल्शियम सल्फेट प्लास्तर** भी कहते हैं। यह पानी में घुलनशील है। इसलिए बाहरी सतहों पर इसका प्रयोग नहीं किया जाता है। यह बहुत शीघ्र सैट हो जाता है। अतः साधारण चूने में मिलाकर यह प्लास्तर सतह के दोष दूर करने के काम भी आता है।

प्रश्न 8—खाँचा या ग्रूविंग क्या है?

उत्तर—खाँचा या ग्रूविंग (Grooving)—प्लास्तर सतह पर खाँचे-नलियाँ (ग्रूविंग) डालने के लिये, लकड़ी की टेपर फट्टी (माप 15 mm × 15 mm), दीवार की सतह पर, प्राइमिंग कोट (प्लास्तर) करने के बाद, इस पर कीलों से जड़ दी जाती है। इसके बाद, सतह पर प्लास्तर का दूसरा (अंतिम) कोट किया जाता है, जो फट्टी की मोटाई के बराबर होता है। प्लास्तर के सैट हो जाने पर, इन फट्टियों को सावधानी से निकाल दिया जाता है। इस प्रकार प्लास्तर-सतह पर कलात्मक खाँचे-नलियाँ बन जाती हैं।

खाँचे-नलियाँ (ग्रूविंग) प्लास्तर सतह में दरारें पड़ने से भी रोकती हैं।

प्रश्न 9—शॉटक्रीट या गुनाइटिंग क्या है?

उत्तर—शॉटक्रीट या गुनाइटिंग (Shotcrete or Guniting)—सीमेन्ट मसाले को मशीन के द्वारा उच्च दाब पर सैंड की भाँति दीवार-सतह पर फेंककर प्लास्तर करने की शॉटक्रीट या गुनाइटिंग कहते हैं। गुनाइटिंग व्यापार में सीमेन्ट गन कम्पनी का व्यापारिक (ट्रेड) नाम है।

शॉटक्रीट के लाभ—

(i) प्रलेपन सामान्य मोटाई का प्राप्त होता है।

(ii) कार्य शीघ्र सम्पन्न होता है।

(iii) मसाले की सतह से पकड़ उत्तम होती है।

(iv) जल रिसकता अधिक प्राप्त होती है।

(v) प्लास्तर की आयु अधिक होती है।

शॉटक्रीट बड़े कार्यों के लिए लाभप्रद रहता है। प्लास्तर करने की शॉटक्रीट विधि अधिकतर ऊर्ध्वाधर संरचनाओं, संरक्षक कोटों, सुरंगों, खोलों, चिमनियों, नहरों के आस्तरीकरण इत्यादि के लिए अपनाई जाती है। जब लेप पर प्लास्तर करना हो, तो शॉटक्रीट से यान्त्रीकृत फिनिशिंग प्राप्त होती है।

प्रश्न 10—प्लास्तर में काम आने वाले औजारों के नाम बताइये।

उत्तर— **प्लास्तर करने के औजार (Tools use for Plastering)**

(1) कूची या कूँची (Brush)—यह सीमेन्ट पर पानी के छिड़काव, फिनिश और लगाने के काम आती है।

(2) लोहे का फ्लोट (Metal Float)—यह मसाला फैलाने व समतल करने के काम आता है।

(3) गुरमाला (Wooden Float)—यह प्लास्तर की सम्पूर्ति के काम आता है।

(4) डेविल फ्लोट (Devils Float)—इसकी तली पर 3 मिमी लम्बी कीलें लगी रहती हैं। जब पहल परत पर प्लास्तर की दूसरी परत करनी हो तो इस फ्लोट से पिछली परत पर निशान बना देते हैं, ताकि दोनों परतों में अभिलाग उत्तम बन जावे।

(5) फ्लोटिंग पट्टी (Floating Rule)—दीवार पर मसाला फैलाने तथा समतल करने के काम आता है।

(6) खुरचनी (French Man)—यह जोड़ों को खुरचने के काम आती है। इसका एक सिरा नुकीला होता है।

(7) पाटा या सीध पट्टी (Straight Edge)—यह प्लास्तर कार्य की सिधाई जाँचने के काम आती है।

civilguru.net

प्रश्न 11—सफेदी तथा रंगीन पुताई क्या है? *(UPBTE 2011)*

उत्तर—सफेदी करने से दीवारों पर निखार आ जाता है। यह स्वच्छता व सफाई के लिये तथा कीटों आदि को नष्ट करने के लिए की जाती है। यह दीवारों को प्रकाशित करती है।

सफेदी, बाहरी व भीतरी दीवारों, सीलिंग तथा अन्य सतहो पर की जाती है।

प्रश्न 12—भवनों की पुताई के महत्त्व की चर्चा कीजिये। एक अच्छे पेन्ट के गुणों की सूची बनाइये। *(UPBTE 2011)*

उत्तर—भवनों की दीवार पर सफेद व रंगीन पुताई करने के सजावट में पर्याप्त वृद्धि होती है। इसमें चूना प्रयोग होता है। अत: इनका प्रभाव कीटनाशक होता है। सफेद व रंगाई पुताई की अच्छी सतह एवं प्रभाव प्राप्त करने के लिये सतह की अच्छी तैयारी महत्वपूर्ण है। यदि सतह पर पहले कभी पुताई हुई है और वह उखड़ने लगी है तो उसे खुरचकर साफ कर देना चाहिये। दीवारों के छोटे-छोटे छिद्रों में चूने की क्रीम भर देनी चाहिये।

भवनों पर पुताई के एक या दो कोट करके ही पेन्ट इत्यादि करना चाहिये। मुख्य रूप से हम कह सकते हैं कि पुताई पेन्ट का आधार का कार्य करती है। दीवारों की सुन्दरता बनाने के अतिरिक्त वायुमण्डलीय प्रभावों से रक्षा करती है।

अच्छे पेन्ट के गुण—एक अच्छे पेन्ट में निम्न गुण होने चाहियें—

(i) यह इतना पतला होना चाहिये कि इसे ब्रुश अथवा फुहार द्वारा सतह पर आसानी से मला जा सके।

(ii) पेन्ट की परत कठोर, लचीली, चिकनी व चलसह होनी चाहिये। इसका वायुमण्डलीय प्रतिरोध अधिक होना चाहिये ताकि इसकी चमक लम्बे समय तक बनी रहे।

(iii) पेन्ट की परत सुन्दर-चमकीली व टिकाऊ होनी चाहिये।

(iv) पेन्ट सूखने पर सिकुड़ना नहीं चाहिये अन्यथा सतह पर दरारें पड़ जायेंगी।

प्रश्न 13—निम्न की विवेचना कीजिये। *(UPBTE 2010)*

(i) गिट्टीदार लिपाई (ii) प्लास्तर में दरारें

उत्तर—(i) गिट्टीदार लिपाई—सतह पर क्रिसिशिंग कोट का मसाला सीमेंट, मोटी बजरी (1:3) लगाने के तुरन्त बाद उस पर पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़े या गिट्टी जोर से फेंकी जाती हैं, जो गीले-मसाले में जाकर धँस जाती हैं। फिर लकड़ी की फट्टी से उसको थोड़ा थपथपा दिया जाता है, जिससे यह टुकड़े मसाले में सेट हो जाते हैं। यह उभरे हुए पत्थर देखने में अच्छे लगते हैं।

यह सम्पूर्ति देखने में सुन्दर लगती है। अधिक सुन्दरता के लिये विभिन्न रंगों के पत्थर की गिट्टी प्रयोग की जाती है। इस गिट्टी को किसी नमूने में लगाकर कलात्मक सतह प्राप्त की जा सकती है।

(ii) **प्लास्तर में दरारें**—प्लास्तर में दरारें पड़ने के कारण निम्नलिखित हो सकते हैं—

(1) प्लास्तर करने से पहले सतह को अच्छी तरह तैयार न करना।

(2) प्लास्तर की अत्यधिक मोटी तह लगाना।

(3) क्षेत्र के तापमान में बार-बार परिवर्तन होने से।

(4) प्लास्तर मैटीरियल के सिकुड़ने पर।

उपाय—प्लास्तर कार्य में सुधार करके दरारों को रोका जा सकता है। प्लास्तर की साधारण मोटाई 15–20 mm से अधिक नहीं होनी चाहिये।

प्रश्न 14—डिस्टेम्पर क्या होता है? यह कितने प्रकार का होता है? *(UPBTE 2008)*

उत्तर—चूने में उपयुक्त रंग वर्णक, सरेस तथा आवश्यक पूरक मिलाकर डिस्टेम्पर बनाये जाते हैं। ये चूने के रंग भी कहलाते हैं। डिस्टेम्पर को भीतरी दीवारों पर किया जाता है। इसको पानी में घोलकर ब्रुश से लगाया जाता है। डिस्टेम्पर बाजार में रेडिमेड मिलते हैं। इसकी प्रयोग विधि डिब्बों में अंकित रहती है।

डिस्टेम्पर रंग सुन्दर और टिकाऊ होते हैं और पेन्ट से पर्याप्त सस्ते पड़ते हैं, परन्तु ये धूप व वर्षा से शीघ्र प्रभावित होते हैं। अत: इनको बाहरी सतहों पर नहीं लगाना चाहिए। यह सफेदी की तुलना में अच्छे व सुन्दर लगते हैं।

नये कार्यों पर डिस्टेम्पर से पहले, सतहों पर प्राइमिंग के रूपमें एक कोट सफेदी की जाती है।

डिस्टेम्पर दो प्रकार के होते हैं—

(i) सूखा या ड्राई डिस्टेम्पर (Dry Distemper D.D.)

(ii) तैलीय डिस्टेम्पर (Oil Bound Distemper O.B.D.)।

सूखा डिस्टेम्पर पाउडर के रूप में होता है। तैलीय डिस्टेम्पर में सूख जाने वाला तेल मिला रहता है। यह सूखे डिस्टेम्पर से अधिक स्थाई और चमकदार होता है। दोनों प्रकार के डिस्टेम्पर निर्माणकर्ता के निर्देशों के अनुसार पानी में घोल कर तैयार किए जाते हैं और ब्रुश से लगाये जाते हैं। डिस्टेम्पर करने से पहले सतह को अच्छी प्रकार झाड़कर साफ कर लेना चाहिए और चिकनी सतह पर सैंड-पेपर रगड़ना चाहिए। नई सीमेन्ट प्लास्तर सतहों को जिंक-सल्फेट के घोल से धो लिया जाता है। डिस्टेम्पर करने से पहले सतह अच्छी तरह सूख जानी चाहिए। नयी दीवारों को 2 मास तक सूखने देना चाहिए, तभी इस पर डिस्टेम्पर कार्य करना चाहिए।

डिस्टेम्पर का साधारणतया एक कोट ही काफी होता है, परन्तु नई सतह पर दो कोट किए जाते हैं। सीलन-ग्रस्त दीवारों पर डिस्टेम्पर नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसमें धब्बे पड़ जायेंगे और चमक नहीं होगी तथा कुछ दिनों में यह झड़कर नष्ट हो जायेगा।

डिस्टेम्पर को **जल-पेन्ट** (Water Paint) भी कहते हैं।

प्रश्न 15—पेन्ट क्या होता है? पेन्ट के उद्देश्य व गुण बताइये। *(UPBTE 2002)*

उत्तर—पेन्टिंग—लकड़ी, लोहा, चिनाई तथा अन्य उपयोगी वस्तुओं की सतहों पर ब्रुश से जो तैलीय प्रलेपन किया जाता है, उसे पेन्ट (रंग-रोगन) कहते हैं।

(a) **उद्देश्य**—पेन्ट संरचना के सतही दोषों को ढाँप लेता है। इसे सुन्दरता तथा आकर्षण प्रदान करता है और वायुमण्डलीय कुप्रभावों जैसे—धूप, धूल, सीलन, ताप से वस्तु की सुरक्षा करता है। पेन्ट करने से संरचनाओं की लाभकारी आयु में वृद्धि होती है।

(b) **गुण**—एक अच्छे पेन्ट की आच्छादन क्षमता अधिक होनी चाहिए और यह सतह पर दृढ़ता से चिपक जाये। यह शीघ्र सूख जाये और सस्ता भी हो।

प्रश्न 16—वार्निश क्या होती है? इसका क्या प्रयोग है? *(UPBTE 2002)*

उत्तर—वार्निशिंग—रेजिनी पदार्थों (लाख, गोंद, कोपल, चपड़ा इत्यादि) को तारपीन, एल्कोहल या स्प्रिट में घोलकर वार्निश बनायी जाती है। इस घोल में आवश्यकतानुसार रंग वर्णक, वाहक तथा शोषक मिलाये जाते हैं। तेल के सूखने पर सतह पर रेजिनी पदार्थ की ठोस, पारदर्शी, लचीली, चमकदार झिल्ली रह जाती है।

वार्निश अधिकतर लकड़ी कार्य पर, इसकी सुन्दरता बढ़ाने तथा प्राकृतिक रेशों को चमकाने के लिए की जाती है।

वार्निश धूप, धूली, वर्षा इत्यादि से प्रभावित होती है; अत: इसको भीतरी सतहों, फर्नीचर आदि पर किया जाता है।

प्रश्न 17—स्कर्टिंग या डेडो क्या है?

उत्तर—स्कर्टिंग या डेडो (Skirting or Dado)—फर्श तथा दीवारों के संगम पर, दीवार की सतह तथा कोनों को अधिक दृढ़ता प्रदान करने तथा सीलन-मुक्त रखने के लिए जो पर्याप्त मोटा व सामर्थ्यवान प्लास्तर किया जाता है, जिसे स्कर्टिंग कहते हैं। यदि फर्श टेराजो का बनाया गया है, तो यही मसाला स्कर्टिंग के लिए भी प्रयोग किया जाता है।

स्कर्टिंग फर्श-तल से 15 सेमी से 30 सेमी की ऊँचाई तक रखी जाती है। रसोईघर, स्नान गृह तथा फ्लश-शौचालय में यह एक मीटर ऊँची रखी जाती है।

डेडा दीवार का सुन्दरता भी बढ़ाता है।

प्रश्न 18—दीवारी कागज क्या होता है?

उत्तर—दीवारी कागज (Wall Paper)—कमरों की भीतरी दीवारों व अन्तरछदों को कलात्मक ढंग से सुन्दर बनाने के लिए, इन पर फूल-पत्ती, सीनरी बना मजबूत कागज चिपकाया जाता है। कुछ कागजों पर तैलीय चित्रकारी भी होती है। कुछ प्रकार के कागज धोये जाने वाले (Washable) होते हैं। दीवारी कागज रोल में आते हैं।

civilguruji.net

जिस दीवार पर कागज लगाना होता है, उसे अच्छी तरह से साफ व समतल कर लिया जाता है। दीवार सतह पर चूना अथवा चूना-यौगिक नहीं लगे होने चाहिएं। दीवार सतह पर मोटा बाँसी कागज चिपकाकर, उसके ऊपर कागज लगा दिया जाता है। लगाते समय दीवारी कागज पर सिलवट नहीं पड़नी चाहिये।

दीवारी कागज लगाने पर, दीवारों पर सफेदी या डिस्टेम्पर करने की आवश्यकता नहीं रहती। बाहरी सतहों के लिए यह कागज उपयुक्त नहीं है।

प्रश्न 19—जलरोधन व जलापसारी पदार्थ क्या होते हैं?

उत्तर—जलरोधन व जलापसारी पदार्थ (Water Proofing and water Repellent)—दीवारों पर आने वाली सीलन को रोकने के लिए, इन पर जलापसारी पदार्थों का लेप किया जाता है। सीलन ग्रस्त सतह को अच्छी तरह साफ करके, इस पर ब्रुश से यह लेप एक अथवा दो कोट में किया जाता है।

मुख्य जलापसारी पदार्थों के नाम इस प्रकार हैं—

(i) एल्युमीनियम या जिंक सल्फेट,

(ii) सोडियम या पोटेशियम के सिलिकेट,

(iii) बैरियम हाइड्रॉक्साइड व मैग्नीशियम सल्फेट,

(iv) स्नेहम,

(v) बिटुमिन-कोलतार का लेप,

(vi) चूना व अलसी के तल का लेप,

(vii) रेजिन व गोंद का लेप।

अब जलरोधक व जलापसारी पदार्थ अनेक ट्रेड नामों से बाजार में उपलब्ध हैं। कुछ का वर्णन निम्न है—

(1) **टेक्मास्ट** (Techmast 71)—यह रबर-आधारित सीलिंग यौगिक है, जो लकड़ी, एस्बेस्टस, मार्बल, कंक्रीट की दरारें व महीन जोड़ भरने के काम आता है। सूखने पर यह एक स्थिर व कठोर एण्ड के रूप में स्थायी-स्थल पर चिपक जाता है। सूखने पर, सतह पर वांछित पुताई/पेन्ट किया जा सकता है।

(2) **टेक्कोट** (Techcoat-61 P)—यह एक पोलीयुरथेन (Polyurethane) रबर आधारित मिश्रण है, जो ठंडे-यह कोट के रूप में किया जाता है। यह दोषी सतह को एक जल-सह झिल्ली की भाँति ढाँप देता है, जो लचकीली, कठोर व टिकाऊ होती है। टेक्कोट प्लास्तर छतों, पाइपों, इस्पातीय भण्डारण टंकियों आदि पर, इन्हें जलरोधक बनाने के लिये किया जाता है।

(3) **टेक्कोएक्सी** (Techoxy)—यह जल रोधक कोट भीतरी सतहों पर किया जाता है। यह दो विभिन्न पेस्टों में होता है, जिन्हें प्रयोग के समय, समान मात्रा में मिलाकर, फिर पानी डालकर, उपयुक्त सघनता का लेप (घोल) बना लिया जाता है और दूषित जगह पर लगाया जाता है। टेक्कोएक्सी गीले स्थानों पर भी लगाया जा सकता है। इसे लगाने से पूर्व सतह पर किसी प्राईमर लगाने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु लगाने से पहले सतह से धूली (dust), तैलीय पदार्थ तथा ढीली-पपड़ी हटा देनी चाहिये।

प्रश्न 20—दीवारी टाइलें क्या होती हैं?

उत्तर—दीवारी टाइलें (Wall Tiles)—बाहरी व भीतरी दीवारों को आकर्षक बनाने के लिए, कई बार इनकी सतह पर कंचित टाइलों अथवा पत्थर पटिया की लाइनिंग (आस्तरीकरण) लगायी जाती है। टाइल लाइनिंग की ऊँचाई सामान्यतः 60 सेमी से 120 सेमी रखी जाती है। यह पूरी दीवार पर सीलिंग ऊँचाई तक भी लगाई जाती है। सामान्यतः यह भवनों के प्रवेश-द्वार पर, बरामदे, रसोईघर, स्नानगृह, फ्लश शौचालय, जीना इत्यादि में लगाई जाती है।

(i) प्राकृतिक पत्थर की पेटियाँ—ग्रेनाइट, संगमरमर, स्लेट, चूना पत्थर, बलुआ पत्थर की 2 से 5 सेमी मोटी सिलें, सीमेन्ट मसाले 1 : 3 अथवा चूना-मसाला में लगाई जाती है। इन सिलों का माप 30 सेमी × 60 सेमी से 75 सेमी × 150 सेमी होता है। दीवार में पकड़ के लिये धातु के क्रम्प (Metal Cramps) अथवा मोटी तारें लगायी जाती है।

(ii) टेरा-कोटा (Tera-Cotta) टाइलें—यह 2·5 से 4 सेमी मोटी होती हैं और 20 सेमी × 30 सेमी, 30 सेमी × 45 सेमी, 45 सेमी × 60 सेमी के माप में निर्मित की जाती हैं। इनकी पिछली सतह (Back) (जो कुछ रफ होती है) पर सीमेन्ट-मसाला लगाकर दीवार पर जड़ दिया जाता है।

(iii) आर०सी०सी० पेनल (R.C.C. Panel), टेराजो (Terrazo) अथवा कंचित टाइलें (Glazed Tiles)—यह विभिन्न माप में बाजार में उपलब्ध हैं।

दीवार-टाइलों के रूप में इस्पात, स्टेनलेस स्टील, ताँबा, काँसा, एल्यूमीनियम, दृढ़ काँच तथा प्लास्टिक की रंगदारी टाइलों का भी प्रयोग किया जाता है।

टाइलों की पीछे की सतह खुरदरी होती है, जिस पर सीमेन्ट-मसाला या कोई अन्य आसंजक (Adhesive) लगाकर दीवार के फलक पर शुद्ध रूप से जड़ दी जाती है। टाइलों के जोड़ कागज के समान पतले रखे जाते हैं। जोड़ों में रंगदार या सफेद सीमेन्ट का मसाला भरा होता है।

gyaguru.net

10 भवनों का आयोजन व कंक्रीट निर्माण
(Planning of Buildings & Concrete Constructions)

प्रश्न 1—सीमेन्ट कंक्रीट निर्माण की कुछ विधियों का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—सीमेन्ट कंक्रीट निर्माण की अनेक विधियाँ अब विकसित कर ली गयी हैं। मुख्य के नाम निम्न हैं—

(i) सादा सीमेन्ट कंक्रीट (Plain Cement Concrete),
(ii) प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट (Reinforced Cement Concrete),
(iii) फैरो सीमेन्ट निर्माण (Ferro Cement Construction),
(iv) कंक्रीट ढाँचेदार निर्माण (Concrete Framed Construction),
(v) कंक्रीट शैल संरचनायें (Concrete Shell Structures),
(vi) पूर्व-ढालित कंक्रीट रचनायें (Precast Concrete Structures),
(vii) पूर्व-प्रबलित कंक्रीट (Pre-stressed Concrete)।

प्रश्न 2—सीमेन्ट कंक्रीट क्या होता है? इसका संघटन क्या-क्या होता है?

उत्तर

सीमेन्ट कंक्रीट (Cement Concrete)

कंक्रीट में बन्धक पदार्थ के रूप में जब सीमेन्ट का प्रयोग किया जाता है, तो यह सीमेन्ट कंक्रीट कहलाती है। सीमेन्ट कंक्रीट के संघटक निम्नलिखित हैं—

(a) सीमेन्ट—साधारण कार्यों के लिये पोर्टलैंड सीमेन्ट का प्रयोग किया जाता है। यह सीमेन्ट लगभग 65% चूना तथा 35% चिकनी मिट्टी के घोल को भट्टी में पका (जला) कर और महीन पीसकर बनाया जाता है।

(b) बालू—महीन मिलावे के रूप में बालू का प्रयोग किया जाता है। यह नदी, नाले, सूखी झील की तली से निकाला जाता है अथवा भूमि में गड्ढा खोदकर प्राप्त किया जाता है। बालू में किसी प्रकार की मिलावट, जैसे—मिट्टी, घास-पात, लवण, कार्बनिक पदार्थ नहीं होने चाहियें। बालू को धोकर प्रयोग करना उचित रहता है।

(c) गिट्टी—मोटे मिलावे के लिये, कठोर पत्थर जैसे—ग्रेनाइट, बलुआ पत्थर, लेटेराइट, बेसाल्ट व ट्रेप को गिट्टी के माप में तोड़कर प्रयोग किया जाता है। पत्थर की गिट्टी कठोर, साफ, खुरदुरी सतह वाली, भारी तथा नुकीले कणों वाली होनी चाहिये। उच्च सामर्थ्य वाली सीमेन्ट कंक्रीट में, ईंटों की रोड़ी का प्रयोग नहीं किया जाता है, क्योंकि सरन्ध्र होने के कारण यह कंक्रीट का पानी सोख लेती है तथा इस्पात की छड़ों को जंग लग जाती है।

(d) पानी—सीमेन्ट कंक्रीट को सुपथ्य बनाने के लिये पानी का प्रयोग किया जाता है। सीमेन्ट में पानी मिलाने से रासायनिक क्रिया होती है, जिसे जलयोजन क्रिया के नाम से जाना जाता है। इस क्रिया के फलस्वरूप, सीमेन्ट पतली झिल्ली (Gel) के रूप में फूलकर, महीन व मोटे मिलावे को घेर लेता है और सूखने पर इनको आपस में आबद्ध करके पत्थर की भाँति कठोर पदार्थ बनाता है। कंक्रीट के लिये साफ पानी, जो तेल, निम्न स्तर, अम्लता, क्षारता, घास-फूस एवं अन्य कार्बनिक एवं अकार्बनिक अशुद्धियों से मुक्त हो, प्रयोग करना चाहिये।

समुद्री पानी का प्रयोग, सीमेन्ट कंक्रीट के लिये नहीं किया जाता है।

(e) उपयोग—सीमेन्ट कंक्रीट ठोस अवस्था में एक ऐसा कृत्रिम पत्थर है जो आसानी से इच्छित आकार में ढाला जा सकता है और सामर्थ्य, कार्यक्षमता, दृढ़ता, आयु, जल रोधकता, अग्नि-सहनता इत्यादि गुणों में प्राकृतिक पत्थर से कहीं उत्तम है। सादा सीमेन्ट कंक्रीट का उपयोग संरचनाओं की नींव, फर्शों, आधार ब्लॉक, कोपिंग, सड़कों, गुरुत्व बाँधों इत्यादि के लिये बड़े पैमाने पर किया जाता है।

प्रश्न 3—सीमेन्ट कंक्रीट में जल सीमेन्ट अनुपात पर टिप्पणी कीजिये। *(UPBTE 2000)*

उत्तर—

जल-सीमेन्ट अनुपात (Water-Cement Ratio)

सीमेन्ट कंक्रीट, सीमेन्ट, बालू, गिट्टी और पानी के मिश्रण से तैयार की जाती है। कंक्रीट की सामर्थ्य केवल सीमेन्ट की मात्रा पर निर्भर नहीं करती। अधिक सीमेन्ट का प्रयोग करने से, कंक्रीट अधिक सामर्थ्यवान होगी, यह सर्वथा सत्य नहीं है।

वास्तव में कंक्रीट की सामर्थ्य जल सीमेन्ट अनुपात व उसकी कुटाई पर निर्भर करती है। सीमेन्ट का भार तथा उसमें मिलाये गये पानी के भार के अनुपात को जल सीमेन्ट अनुपात कहते हैं। अतः

$$\text{जल सीमेन्ट} = \frac{\text{जल का भार}}{\text{सीमेन्ट का भार}}$$

पानी की मात्रा, सीमेन्ट में जितनी कम रखी जायेगी, कंक्रीट की सामर्थ्य उतनी ही अधिक होगी, परन्तु पानी की मात्रा इतनी अवश्य होनी चाहिये कि कंक्रीट की सुकार्यता (Workability) बनी रहे और कंक्रीट की कुटाई पूर्णतः हो सके।

कंक्रीट की हुरमुटों द्वारा कुटाई करने पर, अधिक जल-अनुपात की आवश्यकता पड़ती है, जबकि कम्पक (Vibrator) द्वारा कटाई करने पर, कम पानी की आवश्यकता पड़ती है और कंक्रीट की सामर्थ्य भी अधिक होती है।

सीमेन्ट की जलयोजन क्रिया के लिये 25% से 30% पानी की मात्रा पर्याप्त होती है। साधारण कंक्रीट के लिये, जल सीमेन्ट अनुपात 0·4 रखा जा सकता है। परन्तु यदि मिलावे (महीन अथवा मोटे) में, पहले से ही नमी मौजूद है, तो उपरोक्त जल-सीमेन्ट कम रखा जाता है।

प्रश्न 4—साधारण कंक्रीट व नियंत्रित कंक्रीट में अन्तर बताइये। *(UPBTE 2002)*

उत्तर—तैयार कंक्रीट को दो श्रेणियों में बाँटा जाता है—

(i) साधारण कंक्रीट (Ordinary Concrete), या नामन-मिक्स कंक्रीट (Nominal Mix Concrete)
(ii) नियन्त्रित कंक्रीट (Controlled Concrete) या डिजाइन-मिक्स कंक्रीट (Design Mix Concrete)

(1) साधारण कंक्रीट—इस श्रेणी की कंक्रीट के लिये, स्थल पर इस्तेमाल होने वाले कंक्रीट के संघटकों का संरचना में वास्तविक प्रयोग से पूर्व परीक्षण नहीं किया जाता है। मौके पर बनायी गयी कंक्रीट के प्रतिदर्श की ही प्रयोगशाला अथवा कार्यस्थल पर जाँच की जाती है।

(2) नियन्त्रित कंक्रीट—जब कंक्रीट की संरचना में वास्तविक प्रयोग से पहले, इसके प्रतिदर्श तैयार करके प्रयोगशाला में प्रारम्भिक जाँच की जाती है, तो इसे नियन्त्रित कंक्रीट कहते हैं।

प्रश्न 5—सीमेन्ट कंक्रीट के क्या गुण होते हैं? *(UPBTE 2003)*

उत्तर—

सीमेन्ट कंक्रीट के गुण
(Properties of Cement Concrete)

सीमेन्ट कंक्रीट के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं—

(1) सामर्थ्य (Strength),
(2) टिकाऊपन (Durability),
(3) सुकार्यता (Workability),
(4) सघनता (Consistency)।

इसके अतिरिक्त एक अच्छी कंक्रीट जलरोधक, अग्नि-रोध, ठोस तथा मितव्ययी होनी चाहिये।

सामर्थ्य (Strength)

कंक्रीट की सामर्थ्य इतनी अवश्य होनी चाहिये कि वह अध्यारोपित भार के कारण उत्पन्न प्रतिबलों को सुरक्षा-कारक बनाये रखते हुए, सहन कर सके। सीमेन्ट कंक्रीट की सामर्थ्य प्रभावित करने वाले मुख्य कारक इस प्रकार हैं—

(i) कंक्रीट के विभिन्न घटकों की किस्म तथा सामर्थ्य।
(ii) जल-सीमेन्ट अनुपात।
(iii) कंक्रीट के विभिन्न घटकों को उचित प्रकार से मिलाना।
(iv) कंक्रीट की कुटाई।
(v) कंक्रीट की तराई व तापक्रम।
(vi) आयु।

Gurukul Net

सीमेन्ट कंक्रीट में प्रयुक्त विभिन्न घटकों की मात्रा व उनकी सूक्ष्मता (Fineness) सीमेन्ट कंक्रीट की सामर्थ्य को बहुत प्रभावित करती है। सीमेन्ट कंक्रीट की सामर्थ्य जल-सीमेन्ट अनुपात पर भी निर्भर करती है। जल-सीमेन्ट का अनुपात बढ़ाने से प्राय: कंक्रीट की सामर्थ्य कम होती है।

कंक्रीट को मिश्रक (Mixer) में 1·5 से 2 मिनट तक मिलाना पर्याप्त होता है। अधिक समय तक मिलाने से कंक्रीट का पृथक्कीकरण हो सकता है और इसका प्रारम्भिक पकन शुरू हो जाता है, जिससे कंक्रीट की सामर्थ्य कम हो जाती है।

कंक्रीट की कुटाई पूर्ण होनी चाहिये। 95% कुटाई की गयी कंक्रीट की सामर्थ्य पूर्णत: कुटी गयी कंक्रीट का 70% होती है, जबकि 85% कुटाई की गई कंक्रीट की सामर्थ्य केवल 10 से 20% ही रह जाती है।

कंक्रीट में अच्छी सामर्थ्य उत्पन्न होने के लिये, समस्त सीमेन्ट का जलयोजन होना आवश्यक है। इसके लिये उचित अवधि तक कंक्रीट की तराई की जाती है। यह अवधि, सामान्यत: 14 दिन से 28 दिन ली जाती है।

तापक्रम का भी कंक्रीट की सामर्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। जितना अधिक तापक्रम होगा, उतनी ही अधिक गति से सीमेन्ट की जल-योजना क्रिया सम्पन्न होगी, और उतनी ही तेजी से कंक्रीट सामर्थ्य ग्रहण करेगी।

कंक्रीट की आयु के साथ-साथ, उसकी सामर्थ्य में भी वृद्धि होती जाती है। पहले सामर्थ्य में वृद्धि अधिक तेजी से होती है, परन्तु कुछ समय पश्चात् वृद्धि की यह दर कम होने लगती है। 28 दिन के पश्चात् कंक्रीट की सामर्थ्य में वृद्धि निम्नलिखित दर से होती है—

3 महीने के पश्चात् =10%
6 महीने के पश्चात =15%
1 वर्ष के पश्चात् =20%

2. टिकाऊपन या चिरस्थायित्व (Durability)—सीमेन्ट कंक्रीट में, उत्तम गुणता का सीमेन्ट तथा मिलावा प्रयोग करके तथा उचित जल-सीमेन्ट अनुपात रखकर, भली-भाँति मिलाकर, कुटाई तथा तराई करके, इसे चिरस्थायी बनाया जा सकता है।

अनिश्चित (Un-sound) प्रकार के सीमेन्ट तथा कमजोर मिलावे से तैयार कंक्रीट निम्न श्रेणी की होती है। कंक्रीट के रन्ध्रों में पानी, लवण, गैसें इत्यादि घुस जाने से तथा बार-बार तापक्रम में अत्यधिक परिवर्तन होने से कंक्रीट शीघ्र नष्ट होने लगती है।

3. सुकार्यता (Workability)—सुकार्यता कंक्रीट का वह गुण है, जिसके अन्तर्गत तैयार कंक्रीट बिना पृथक्कीकरण (Segregation) अथवा उत्स्रवण (Bleeding) के, सुगमता से उचित स्थान पर डाली जा सके।

कंक्रीट की सुकार्यता इसमें मिलाये गये पानी की मात्रा पर निर्भर करती है। कंक्रीट में जितना अधिक पानी होगा उतना ही वह अधिक आसानी से बिछायी जा सकेगी, परन्तु जल-सीमेन्ट अनुपात से अधिक जल उपलब्ध होने पर कंक्रीट की सामर्थ्य कम हो जाती है।

आवश्यकता से कम पानी मिलाने पर कंक्रीट का मोटा मिलावा, महीन मिलावे से अलग हो जाता है। इसे **पृथक्कीकरण** कहते हैं।

कंक्रीट में आवश्यकता से अधिक पानी मिलाये जाने पर, अतिरिक्त पानी कंक्रीट की सतह पर आ जाता है, जिसे उत्स्रवण कहते हैं।

कंक्रीट की सुकार्यता बढ़ाने के लिये नुकीले मिलावे के स्थान पर गोल व महीन प्रकार का मिलावा प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु ऐसा करने पर कंक्रीट की सामर्थ्य प्रभावित होती है।

कंक्रीट के विभिन्न घटकों को मिलाने की पद्धति तथा कुटाई विधि का भी कंक्रीट की सुकार्यता से सम्बन्ध रहता है। कंक्रीट-मिक्सर तथा वाइब्रेटर्स का प्रयोग करने से सख्त प्रकार की कंक्रीट भी भली-भाँति मिलाई तथा बिछाई जा सकती है।

कंक्रीट की सुकार्यता बढ़ाने का सबसे अच्छा तरीका, इसके मिलावे का उचित श्रेणीकरण है। उचित श्रेणीकरण से कंक्रीट भी अधिकतम घनत्व की प्राप्त होती है। कंक्रीट की सुकार्यता बढ़ाने के लिये कुछ सम्मिश्रण (Admixture) भी प्रयोग

किये जाते हैं। विनसोल व डेरेक्स रेजिन, लिसापोल-ऐन आदि रासायनिक पदार्थ उचित मात्रा में मिलाने में कंक्रीट की सुकार्यता बढ़ जाती है, परन्तु अधिक मात्रा का प्रयोग कंक्रीट की सामर्थ्य को कम करता है।

4. सघनता (Consistency)

कंक्रीट की द्रव के रूप में बहने (flow) की प्रवृत्ति को सघनता कहते हैं। कंक्रीट में जिस कदर अधिक पानी होगा, उसकी सघनता (गाढ़ापन) उतना ही कम होगी। सघनता तथा सुकार्यता कंक्रीट के दो सम्बन्धित तथ्य हैं। कंक्रीट की सघनता तथा सुकार्यता ज्ञात करने के लिये अवपात (स्लम्प) परीक्षण (Slump Test) किया जाता है।

प्रश्न 6—कंक्रीट के लिये फरमावन्दी से क्या मतलब है? *(UPBTE 2004)*

उत्तर—

कंक्रीट के लिये फरमावन्दी (Form Work)

गीली कंक्रीट को वांछित आकार में डालने/ढालने के लिये तथा इधर-उधर फैलने से रोकने के लिये, इसे अस्थायी तौर पर सहारे की आवश्यकता रहती है। यह सहारा लकड़ी अथवा लोहे का ढूला (Centering) एवं तख्तावन्दी (Shuttering) करके दिया जाता है।

फरमावन्दी पर्याप्त दृढ़ होनी चाहिए ताकि यह गीली कंक्रीट का भार, मजदूरों का भार तथा कुटाई करते समय उत्पन्न संघट्ट सहन कर सके और नीचे को झुके नहीं, अन्यथा पूरी संरचना नीचे को लटक जायेगी।

कंक्रीट के सैट हो जाने के पश्चात्, जब यह अपनी तथा अपने ऊपर पड़ने वाले भार को सम्भालने योग्य हो जाये, तब उपरोक्त फरमावन्दी हटा दी जाती है।

प्रचलित सीमेन्ट कंक्रीट के विभिन्न अवयवों की फरमावन्दी हटाने की अवधि सारणी 6.1 में दी गई है। फरमावन्दी हटाते समय बड़ी सावधानी बरतनी चाहिये ताकि कोई दुर्घटना न हो और फरमावन्दी को अधिक टूट-फूट भी न हो।

कंक्रीट डालने से पहले, फरमावन्दी की भीतरी सतह साफ कर लेनी चाहिये तथा इसकी तली एवं पार्श्व पर ग्रीस-तेल लगा देनी चाहिये ताकि गीली कंक्रीट इससे चिपक न जाये।

यदि कंक्रीट फर्श तल या नींव में डालनी है तो उस जगह की धूल-मिट्टी हटा देनी चाहिये और अच्छी तरह पानी छिड़क देना चाहिये। कंक्रीट को ऊँचाई से नहीं फेंकना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से मोटा मिलावा बिखर जाता है और कंक्रीट का पृथक्कीकरण हो जाता है।

प्रश्न 7—प्रचलित सीमेन्ट के गुण-दोषों का वर्णन कीजिये।

उत्तर—

प्रचलित सीमेन्ट कंक्रीट के गुण-दोष
(Merits and Demerits of R.C.C.)

(i) कंक्रीट तथा इस्पात का यह ऐसा संयोजन है, जिसको किसी भी आकार में ढाला जा सकता है। आर०सी०सी० की रचनायें सम्मोहक तथा तनन, दोनों प्रकार के प्रतिबलों के लिये सन्तोषजनक काम देती हैं।

(ii) आर०सी०सी० के सभी घटक इस्पात, सीमेन्ट, बालू तथा गिट्टी सभी स्थानों पर आसानी से उपलब्ध होते हैं तथा प्रकाश से सस्ते पड़ते हैं।

(iii) इसकी रचनायें आग, पानी, धूप आदि के प्रकोप से कम प्रभावित होती हैं। सीमेन्ट कंक्रीट काफी हद तक अग्नि-सह होती है।

(iv) इसको लकड़ी की भाँति दीमक नहीं लगती है और यह गलती सड़ती नहीं है। इस्पात की छड़ें क्योंकि कंक्रीट के काफी भीतर दबा दी जाती हैं अत: इनको जंग नहीं लगती है।

(v) इसका निर्माण सरल है तथा अनुरक्षण व्यय नहीं के बराबर होता है। इसको लकड़ी अथवा लोहे की भाँति अनुरक्षक पेन्ट नहीं करना पड़ता।

(vi) आर०सी०सी० की रचनायें सीलन से प्रभावित नहीं होतीं। यह अधिक टिकाऊ होती हैं।

(vii) इसकी आयु चिनाई की भाँति बहुत अधिक होती है।

(viii) प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट की रचनायें, देखने में सुन्दर लगती हैं। विशाल होते हुए भी, यह साफ, समतल तथा आकर्षक होती हैं।

civilguruji.net

(b) दोष—

(i) आर०सी०सी० अवयवों के अभिकल्पन में काफी सूत्र-सूत्र तथा व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता है, क्योंकि यह पूर्णत: भिन्न प्रकार के पदार्थों का अनोखा संयोजन है।

(ii) निर्माण के लिये कुशल कारीगरों की आवश्यकता पड़ती है।

(iii) निर्माण काल में अथवा इसके बाद, प्रबलित कंक्रीट की रचनाओं में फेर-बदल करना कठिन तथा संशयपूर्ण होता है। निर्माण काल में तनिक लापरवाही के कारण पूरी संरचना नष्ट हो सकती है अथवा अलाभकारी सिद्ध होती है।

(iv) अवयवों को ढालने के लिये दृढ़ फरमाबन्दी की आवश्यकता पड़ती है। इस पर अतिरिक्त व्यय आता है।

(v) प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट की रचनाओं पर प्रारम्भिक व्यय अधिक आता है। इस्पात जो एक मूल्यवान पदार्थ है, का उपयोग इससे उत्तम कार्यों के लिये हो सकता है।

प्रश्न 8—भवन निर्माण में ईंटों के प्रयोग का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2007)*

उत्तर—सिविल इन्जीनियरिंग कार्यों व भवन निर्माण कार्यों में ईंट का उपयोग एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। सिविल इन्जीनियरी संरचनाओं जैसे—पुल, सड़कों एवं सिंचाई संरचनाओं में ईंट के महत्त्व से सभी भली-भाँति परिचित हैं। इसका प्रयोग काफी प्राचीन काल से चला आ रहा है। ईंट चिनाई में सर्वाधिक प्रयोग की जाती है। हालांकि कुछ ऐसे स्थानों जहाँ पर पत्थर स्थानीय उपलब्ध पदार्थ है वहाँ पत्थर का काफी प्रयोग किया जाता है। लेकिन सामान्य भवन निर्माण में ईंट सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई है।

ईंट एक कृत्रिम पदार्थ है जिसे विशेष प्रकार की मिट्टी से साँचों में ढालकर व भट्टों में पकाकर तैयार किया जाता है। ईंट एक सस्ता गुणवान पदार्थ है। अग्निरोधी निर्माण में भी ईंट एक अच्छा पदार्थ है। ईंट के विभिन्न प्रयोग हैं—

(i) चिनाई कार्यों में (ii) R.B. SLAB में (iii) सस्ते मकानों के फर्शों में

(iv) गलियों के खड़ंजों में (v) चूने मसाले के लिये सुर्खी में

(vi) रोड़ी के रूप में (vii) अग्निसह भट्टे व चिमनियों में आदि।

प्रश्न 9—भवनों के दिग्विन्यास से क्या तात्पर्य है? *(UPBTE 2008)*

उत्तर—भवनों का दिग्विन्यास—सूर्य की स्थिति, वायु तथा वर्षा की दिशा को दृष्टि में रखते हुए, भवन को भौगोलिक दिशाओं के अनुसार स्थापित करना, भवन का दिग्विन्यास कहलाता है। इसके मुख्य बिन्दु निम्न हैं—

(1) सोने का कमरा तथा बैठक कक्ष उत्तर-पूर्व दिशा में होने चाहियें।

(2) खिड़कियाँ पूर्व और दक्षिण-पश्चिम दीवारों में लगानी चाहियें ताकि प्रात: व सायंकाल के समय धूप का प्रवेश हो सके।

(3) पश्चिम व दक्षिण दिशा में कमरों के आगे गहरा बरामदा रहना चाहिये ताकि दोपहर के बाद का सीधा सूर्य, कमरों को अत्यधिक गर्म न करे।

(4) भवन का लम्बा भाग पूर्व-पश्चिम दिशा के समानान्तर रखना चाहिये ताकि तेज धूप से भवन सुरक्षित रह सके।

(5) पश्चिम दिशा में खिड़की आदि कम चौड़ी होनी चाहियें तथा सीधी धूप को रोकने के लिये, इस पर सन-शेड लगाने चाहियें

प्रश्न 10—भवन उपनियम से क्या तात्पर्य है? *(UPBTE 2009)*

उत्तर—भवन उपनियम—विभिन्न स्थानीय निकाय जैसे महापालिका, नगरपालिका, टाउन एरिया कमेटी तथा महानगरों के विकास प्राधिकरण अपने-अपने क्षेत्रों में भवन निर्माण को नियन्त्रित एवं नियमित करने के उद्देश्य से कुछ नियम बना लेते हैं जिन्हें भवन उपनियम कहते हैं। इनका उद्देश्य भवन निर्माण को नियमित व नियन्त्रित करना तथा भवन में समुचित प्रकाश, संवातन व स्वास्थ्यकर स्थितियाँ बनाये रखना है।

सभी नगरपालिकाओं व निगमों आदि के भवन अधिनियमों के उद्देश्य समान ही हैं। लेकिन शहर में भूमि की उपलब्धता, जलवायु की परिस्थितियों तथा अन्य स्थानीय कारणों से उनमें थोड़ा अन्तर हो सकता है। भवन बनाने वाले सभी व्यक्तियों के लिये इन नियमों का पालन करना कानूनी रूप से अनिवार्य है।

प्रश्न 11—भवन की साइट का चुनाव करते समय किन बातों का ध्यान रखा जाता है? *(UPBTE 2006)*

उत्तर—भवन निर्माण के लिये स्थल चयन महत्त्व रखता है। स्थल का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये—

(i) भवन के लिये भूमि ऊँचे स्थान पर हो ताकि बाढ़ से प्रभावित न हो।

(ii) भवन स्थल के लिये दलदली अथवा भराव वाली भूमि नहीं होनी चाहये।

(iii) यह शहर की घनी आबादी व गन्दी बस्तियों से दूर होना चाहिये।

(iv) शोर-गुल व फैक्ट्रियों, मिलों व व्यावसायिक केन्द्रों के निकट नहीं होना चाहिये।

(v) यह भूमि रेलवे स्टेशन, बस स्टाप, डाकखाना, स्कूल, अस्पताल इत्यादि के समीप होनी चाहिये।

प्रश्न 12—भवन निर्माण में उपयोग होने वाली विभिन्न प्रकार की इमारती लकड़ी के बारे में बतायें। लकड़ी के परिरक्षण की विधियों को संक्षेप में बताइये। *(UPBTE 2011, 13)*

उत्तर—भवन निर्माण में प्रयोग होने वाली विभिन्न प्रकार की इमारती लकड़ी निम्न हैं—

(1) देवदार या दयार—देवदार के पेड़ लम्बे व पत्तियाँ लम्बी होती हैं। ये पश्चिमी हिमालय में 1000 से 3000 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है। यह लकड़ी मजबूत व टिकाऊ होती है। इसका रंग हल्का पीला तथा खुला रहने पर गहरा पीला हो जाता है। इसमें तीव्र गन्ध आती है। यह तैलीय है। इसके रेशे गठे हुए, स्पष्ट व साफ होते हैं। इस लकड़ी में लचक बहुत होती है।

(2) बबूल—बबूल कापेड़ काँटेदार व छोटी पत्तियों वाला होता है तथा इस पर पीला फूल आता है। इससे प्राप्त लकड़ी कठोर, सख्त व लचीली होती है। यह बहुत टिकाऊ होती है। इसके रेशे गठे हुए व मजबूत होते हैं। इस लकड़ी का रंग लाल भूरा या गहरा बादामी होता है। इस लकड़ी का भार 880 kg/m^3 होता है।

(3) शीशम, ताली या सिस्सू—यह पेड़ उत्तरी भारत व मध्य प्रदेश में बहुतायत में पाया जाता है। यह एक बहुमूल्य व महत्त्वपूर्ण लकड़ी है। इस लकड़ी का रंग गहरा भूरा जिसमें सुनहरी या गहरे भूरे रंग की धारियाँ होती हैं और यह पर्याप्त सख्त व टिकाऊ होती है। यह बहुत कठोर और अच्छे गठे हुए रेशों वाली व मजबूत होती है। यह काफी भारी (88 kg/m^3) होती है।

(4) साल (Sal)—इसके पेड़ उत्तर प्रदेश, बंगाल, तमिलनाडु व हिमालय की तलहटी में पाये जाते हैं। इसकी लकड़ी का रंग पीला भूरा तथा खुला रहने पर थोड़ा गहरा पड़ जाता है। इसके रेशे गठे हुए व मजबूत होते हैं। यह कठोर व भारी (12% जलांश पर 870 kg/m^2) लकड़ी है।

(5) सागौन, सागवान या टीक—टीक के पेड़ मध्य भारत में व दक्षिणी भारत में पाये जाते हैं। यह अधिक मूल्यवान लकड़ी है। भारतीय टीक अपेक्षाकृत निम्न श्रेणी की होती है। इस लकड़ी का रंग सुनहरे पीले से लेकर गाढ़ा भूरा तक होता है। यह काफी मजबूत लकड़ी है। इसमें साल की तरह ही तेल रेजिन होता है, जो इसका परिरक्षण का कार्य करता है। यह काफी हल्की (12% जलांश पर 625 से 67 kg/m^3) लकड़ी होती है।

(6) कैल (Kail)—यह हिमालय क्षेत्र में 2000 मीटर से 4000 मी तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। यह एक महत्त्वपूर्ण व सदाबहार पेड़ है। इसका रंग पीला-भूरा होता है। यह काफी कठोर व टिकाऊ लकड़ी है। इसके रेशे सुगठित होते हैं।

(7) आम—यह पूरे भारत में पाया जाने वाला फलदार वृक्ष है। इस लकड़ी का रंग पीला-भूरा होता है। यह मोटे व खुले रेशों वाली एक निम्न श्रेणी की लकड़ी है। यह कम टिकाऊ लकड़ी है। यह घटिया किस्म की सस्ती लकड़ी है। इसका भार 65 [illegible]

(8) रोज वुड—यह पीले-भूरे रंग की बहुत सामर्थ्यवान एवं कठोर लकड़ी है। यह काफी महंगी लकड़ी पड़ती है। इसके सुन्दर रेशे व गठे हुए होते हैं।

(9) तुन (Tun)—यह लाल-भूरे रंग की लकड़ी होती है। यह हल्की लकड़ी है तथा इसका संशोषण आसानी से होता है।

लकड़ी के परिक्षण की विधियाँ—परिरक्षण की प्रमुख विधियाँ निम्न हैं—

(i) पृष्ठीय उपचार विधि।

(ii) अवशोषण अथवा दाब विधि।

(iii) गर्म व ठण्डा उपचार विधि।

civilguruji.net

(i) पृष्ठीय उपचार विधि—इन विधियों में परिरक्षण उपचार केवल प्रकाष्ठ की ऊपरी सतहों पर ही किये जाते है। कुछ प्रमुख पृष्ठ उपचार निम्न हैं—

(1) पेन्ट करना—इस विधि में लकड़ी की सतह पर पेन्ट, वार्निश अथवा पॉलिश कर दी जाती है, जिसके कारण सतह नमी रोधक हो जाती है। इसके साथ ही सतह की सुन्दरता भी बढ़ जाती है।

(2) कोलतार पोतना—यह विधि पेन्ट की तरह ही है। लेकिन इसमें पेन्ट की जगह कोलतार का लेप किया जाता है। यह एक प्रभावशाली परिरक्षक है।

(3) झुलसाना—इस विधि में लकड़ी को बाह्य पृष्ठ को जो रस काष्ठ होता है, जो थोड़ा जला दिया जाता है। जलाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि अन्त: काष्ठ के रेशे न झुलसें। लकड़ी को झुलसाने के तुरन्त बाद उसे पानी से ठण्डा कर दिया जाता है। ऐसा करने से लकड़ी में घुन या दीमक आदि नहीं लगती है।

(ii) अवशोषण या दाब विधि—इस विधि में परिरक्षक को दाब पर लकड़ी के अन्दर गर्भित कराया जाता है। इस प्रकार परिरक्षक लकड़ी की कोशिकाओं तक पहुँच जाता है, जिससे लकड़ी पर घुन व दीमक आदि नहीं लग पाती है। इसमें प्रयोग किये जाने वाले परिरक्षक कीटाणुनाशक होते हैं।

(iii) गर्म व ठण्डा उपचार—इस विधि में परिरक्षक के घोल में लकड़ी को डुबो दिया जाता है तथा इसका ताप धीरे-धीरे 100°C कर लेते हैं। अब घोल को वायुमण्डलीय तापक्रम पर ठण्डा कर लेते हैं। गर्म करते समय लकड़ी के अन्दर की हवा फैलती है व बाहर निकल जाती है। ठण्डा करने पर लकड़ी के अन्दर आंशिक निर्वात उत्पन्न हो जाता है, जिससे परिरक्षण घोल लकड़ी के अन्दर प्रवेश कर जाता है।

11 संवातन व वातानुकूलन (Ventilation & Air-conditioning)

प्रश्न 1—भवनों में वातायन व वातानुकूलन का क्या तात्पर्य है? *(UPBTE 2006, 13)*

उत्तर—भवनों में वातायन और वातानुकूलन—भवन के कमरों में सदैव स्वच्छ व शुद्ध वायु अच्छे वेन्टीलेशन के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। इसके लिए कमरों में वेन्टीलेटरों का प्रयोग किया जाता है, जिससे कमरे में श्वांस द्वारा छोड़ी गई गर्म तथा अशुद्ध वायु ऊपर उठकर वेन्टीलेटर द्वारा बाहर निकल जाती है तथा स्वच्छ व शुद्ध वायु खिड़कियों के माध्यम से अन्दर आ जाती है। यह प्रक्रिया "वेन्टीलेशन" (Ventilation) कहलाती है।

1. **एयर कन्डीशन**—गर्मी ऋतु मे भवन के कमरों की वायु अत्यन्त गर्म हो जाती है तथा इस गर्म वायु को एयर कन्डीशनरों द्वारा ठण्डा कर दिया जाता है। इनके द्वारा वायुरूद्ध स्थान की समस्त वायु को ठण्डा करके कक्षों का तापमान कम किया जा सकता है। यह प्रक्रिया एयर कन्डीशन कहलाती है।

2. **एयर कन्डीशन प्लांट**—Referization के माध्यम से गर्म वायु को ठण्डा करना ही एयर कन्डीशन का सिद्धान्त है। इस प्लांट में एक बड़े Compresser की सहायता से पतली-पतली नलियों में अमोनिया गैस को घुमाया जाता है, जिससे इस गैस का तापमान कम हो जाता है तथा नलियों के सम्पर्क में आने वाली वातावरणीय वायु वास्तविक ताप से कुछ कम हो जाती है तथा इस प्रकार एयर कन्डीशन प्लांट किसी कक्ष या Area की समस्त वायु को धीरे-धीरे ठण्डा कर देता है।

प्रश्न 2—भवन निर्माण की दृष्टि से कौन-कौन सी सुखदायक परिस्थितियाँ हैं?

उत्तर—

सुखदायक परिस्थितियाँ (Comfortable Conditions)

मनुष्य को सुखदायक पर्यावरण में रहने तथा अपना कार्य सम्पन्न करने के लिये निम्न बातें आवश्यक हैं—

(i) ताजी-शुद्ध वायु (Fresh Air),
(ii) वायुमण्डलीय ऊष्मा व दाब (Atmospheric Heat and Pressure),
(iii) आर्द्रता (Humidity),
(iv) प्रकाश (Light)।

प्रश्न 3—संवातन के क्या उद्देश्य हैं?

उत्तर—

संवातन के उद्देश्य (Objects of Ventilation)

आवासीय भवनों व कार्य स्थलों में संवातन निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए किया जाता है—

(i) श्वांस से दूषित वायु को कमरों से बाहर निकालना और स्वच्छ वायु को भीतर लाना।
(ii) कमरों में एकत्रित कार्बन डाइ ऑक्साइड व अन्य दूषित गैसों को बाहर निकालना।
(iii) दुर्गन्ध, धुआँ, बैक्टीरिया, उड़न कीटों को भीतर एकत्र होने से रोकना।
(iv) मनुष्य शरीर द्वारा त्यागी ऊष्मा को कम करना और इसे ठण्डा रखना।
(v) वायु में विद्यमान धूली के कणों व अन्य अशुद्धियों को हटाना।
(vi) कमरों के फर्श व भीतरी दीवारों से सीलन को दूर करना और द्रवण (condensation) को समाप्त करना (कमरे के बाहर व भीतर के तापमानों में अन्तर होने के कारण द्रवण होने लगता है।)
(vii) सभा भवनों, सिनेमा, नाचघरों तथा अन्य भीड़, भरे कक्षों में घुटन रोकना।
(viii) भवनों में स्वच्छ व स्वास्थ्यवर्धक पर्यावरणीय स्थितियाँ बनाये रखना।

civilguru.net

प्रश्न 4—प्राकृतिक तथा यांत्रिक संवातन की तुलना कीजिये।

उत्तर— प्राकृतिक तथा यान्त्रिक संवातन की तुलना
(Comparison of Natural and Mechanical Ventilation Systems)

क्र. सं.	प्राकृतिक संवातन	यान्त्रिक संवातन
1.	यह वायु के प्राकृतिक प्रवाह पर निर्भर करता है।	हवा यान्त्रिक पंखों द्वारा बलपूर्वक कमरे में भेजी जाती है।
2.	यह भवन के खुले प्रवेशों (दरवाजे-खिड़की) की स्थिति व क्षेत्रफल पर आधारित है।	यह निस्कासक (एक्साजास्ट फैन) व प्लैनम के द्वारा होता है।
3.	यह संवातन आवासीय भवनों में अधिक अपनाया जाता है।	यान्त्रिक संवातन सार्वजनिक स्थलों, कार्यालयों, औद्योगिक संस्थानों में अपनाया जाता है।
4.	इस पर व्यय बहुत कम करना पड़ता है।	यान्त्रिक संवातन पर पर्याप्त व्यय आता है।
5.	इसका अनुरक्षण नाममात्र है।	अनुरक्षण व देखभाल अधिक करनी पड़ती है।
6.	प्राकृतिक संवातन विधि इतनी सुदृढ़ नहीं है।	यान्त्रिक संवातन विधि अधिक सुदृढ़ है।

प्रश्न 5—वातानुकूलन प्रक्रम को समझाइये।

उत्तर— वातानुकूलन के प्रक्रम (Process of Airconditioning)

वातानुकूलन के प्रक्रम निम्न हैं—

(i) आगत वायु का फिल्टरन (Filtration of Coming Air),
(ii) तापन/शीतलीकरण (Heating/Cooling of Air),
(iii) आर्द्रीकरण/अनार्द्रीकरण (Humidification/Dehumidification)
(iv) वायु वितरण (Air Distribution),
(v) पुनः संचरण (Recirculation)।

प्रश्न 6—वातानुकूलन का श्रेणीकरण बताइये।

उत्तर— वातानुकूलन का श्रेणीकरण (Classification of Air Conditioning)

वातानुकूलन द्वारा भवनों को मौसम के अनुसार ठण्डा अथवा गर्म रखा जाता है। अतः मौसम के आधार पर यह निम्न प्रकार का होता है—

(i) ग्रीष्म वातानुकूलन (Summer Airconditioning)
(ii) शरद वातानुकूलन (Winter Airconditioning)
(iii) बारहमासी वातानुकूलन (Round the Year Airconditioning)

वर्णन निम्न है—

(i) ग्रीष्म वातानुकूलन—गर्मी के मौसम में बाहर का तापमान कमरे के तापमान से अधिक होता है, अतः वातानुकूलन में वायु की सफाई (Filtration) प्रशीतलीकरण (Cooling), अनार्द्रीकरण (Dehumidification) तथा वितरण क्रियायें की जाती हैं (चित्र 11.1)।

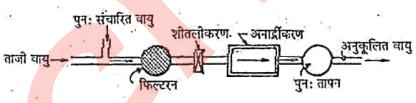

चित्र 11.1-ग्रीष्म वातानुकूलन (प्रवाह चित्र)

(ii) शरद वातानुकूलन—शरद ऋतु में बाहर की वायु ठण्डी होती है, जिसे वांछित तापमान तक गर्म करना होता है। अतः वातानुकूलन के अन्तर्गत फिल्टरन, पूर्व तापन, आर्द्रीकरण तथा वितरण क्रियायें की जाती हैं (चित्र 11.2)।

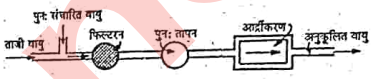

चित्र 11.2-शरद वातानुकूलन (प्रवाह चित्र)

(iii) बारहमासी वातानुकूलन—इस प्रकार के वातानुकूलन में सम्पूर्ण वर्ष के सभी मौसमों के लिए अनुकूलित वायु की आपूर्ति की जाती है। इसे समग्र वातानुकूलन भी कहते हैं।

बारहमासी वातानुकूलन में ऊपर वर्णित ग्रीष्म तथा शरद ऋतु की सभी क्रियायें मौसमानुसार सम्पन्न की जाती हैं अर्थात् तापन या शीतलीकरण, आर्द्रीकरण या अनार्द्रीकरण, वायु सफाई तथा वितरण की क्रियायें अपनायी जाती हैं।

प्रश्न 7—वातानुकूलित भवनों के लिये आवश्यक बातें क्या हैं?

उत्तर— वातानुकूलित भवनों के लिए आवश्यक बातें
(Requirements of An Airconditioned Building)

भवन में वातानुकूलित प्रभावकारी बना रहे, इसके लिए निम्न बातें ध्यान रखने योग्य हैं—

(i) वातानुकूलित कक्षों के आगे प्रवेश लाबी (Entrance Lobby) बनायी जाये, जिसका तापमान बाहरी तथा भीतरी जगहों का औसत मान होना चाहिए। इस व्यवस्था से मनुष्य को बाहर आते/भीतर जाते समय झटका (Shock) का अनुभव नहीं होता।

(ii) दरवाजे-खिड़कियों से ऊष्मा का ह्रास कम करने के लिए, इनके निर्माण में न्यूनतम ताप चालकता वाले पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए।

(iii) दरवाजे-खिड़कियों के पल्ले दोहरे काँचित (Doubly Glazed) होने चाहिए।

(iv) सभी बाहरी प्रवेशों/खिड़कियों के आगे धूप अवरोधक लगे होने चाहिएं, जो सूर्य की सीधी धूप को भीतर आने से रोकें।

(v) दरवाजे-खिड़कियाँ पूर्णतः वायुरोधक होने चाहिएं। वातानुकूलित कक्षों में रोशनदान नहीं लगाये जाते।

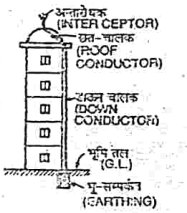

चित्र 11.3-तड़ित चालक

प्रश्न 3—निम्न पर टिप्पणी कीजिये— ***(UPBTE 2007)***

(i) नार्थ लाइट छत कैंची (ii) मास्टर प्लान

उत्तर—(i) नार्थ लाइट छत कैंची—सूर्य पूर्व में उदय होकर दक्षिण को होता पश्चिम में छिपता है। इस प्रकार सूर्य कभी भी उत्तर दिशा में नहीं आता। यदि भवन में प्रकाश के लिए खिड़कियाँ पूर्व, पश्चिम अथवा दक्षिण में लगायी जायें तो इनसे दिन के किसी-न-किसी समय में सूर्य की चौंध आयेगी। उत्तर दिशा से आने वाले प्रकाश में काफी समानता रहती है। इन कारणों से औद्योगिक भवनों में प्रकाश की व्यवस्था उत्तर दिशा में की जाती है।

इस कैंची का ढाल एक साइड म उत्तर स दक्षिण की तरफ होता है। कैंची के उत्तर दिशा में पूरे ऊर्ध्वाधर फलक में प्रकाश प्राप्त करने के लिए काँच के पैनल लगा दिए जाते हैं। यह कैंची 12 m पाट तक के लिए उपयुक्त है। पाट अधिक होने पर कई उत्तर प्रकाशी कैंचियाँ श्रेणीक्रम में लगायी जाती हैं जिससे आरे की दाँते जैसी आकृति बन जाती है। अतः इसे आरा-दाँत कैंची कहते हैं।

(ii) मास्टर प्लान—आजकल नये नगरों की योजना टाउन प्लानिंग विभाग द्वारा की जाती है और योजना करते समय ही प्रति हेक्टेयर जनसंख्या निर्धारित कर ली जाती है। प्लाटों व मकानों का परिमाप तथा संख्या भी पहले से निर्धारित कर ली जाती है। भवन निर्माण पर प्रभावकारी ढंग से नियन्त्रण रखा जाता है। भविष्य में योजनाबद्ध विकास के लिए मास्टर प्लान बनाए जाते हैं। अतः इस प्रकार भविष्य में बढ़ने वाली जनसंख्या का ठीक-ठीक अनुमान लगाया जाता है तथा उसी के अनुरूप जल आपूर्ति तथा अन्य योजनाएँ बनायी जाती हैं।

civilguru.net

प्रश्न 9—नलकारी (Plumbing) से क्या तात्पर्य है?

उत्तर—नलकारी—एकल पाइप प्रणाली में वाहित मल तथा गंदा पानी एक ही नल (मल पाइ) द्वारा नीचे लाया जाता है। वात नल इसके अतिरिक्त होता है, जिसे स्वच्छता फिटिंग के ट्रैप से जोड़ दिया जाता है।

द्विकल पाइप प्रणाली में वाहित मल और गन्दे पानी के लिए अलग-अलग पाइप डाले जाते हैं और इसके लिए वातनल भी अलग-अलग रखे जाते हैं।

आंशिक संवाती एकल पाइप प्रणाली में वाहित मल तथा गन्दे पानी को एक ही मल नल में डाला जाता है, परन्तु शौचागार व यूरीनल के ट्रैप ही वात पाइप से जोड़े जाते हैं, ताकि इनकी सील कायम रहे।

प्रश्न 10—स्वच्छता फिटिंग (sanitary fittings) पर टिप्पणी करें।

उत्तर— स्वच्छता फिटिंग

(1) शौच-पात्र (W.C. Seat)—यह मल त्यागने के लिए जल शौचागार में लगाया जाता है। यह मूलतः भारतीय व यूरोपियन, दो प्रकार के होते हैं।

(2) फ्लशिंग टंकी (Flushing Cistern) —यह टंकी मल बहाने के लिए शौच पात्र के ऊपर लगायी जाती है। यह दो प्रकार की होती है—उच्च तली टंकी व निम्न तली टंकी। इसकी क्षमता 12-15 लीटर की होती है। उच्च तली फ्लशिंग टंकी एक चेन द्वारा तथा निम्न तली एक लीवर द्वारा संचालित की जाती है।

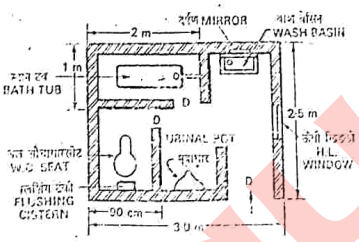

चित्र 11.4-स्वच्छता फिटिंग प्रतिष्ठापन

(3) मूत्राधार (Urinals)—यह चर्ल तथा सार्वजनिक स्थानों पर खड़े होकर मूत्र त्यागने के लिए लगाये जाते हैं। यह चाउत प्रकार अथवा स्वतंत्र प्रकार का होता है और सफाई के लिए इसके ऊपर 2.5 लीटर की फ्लशिंग टंकी लगायी जाती है।

(4) वाश बेसिन (Was Basin)—यह हाथ-मुँह धोने के लिए प्रसाधन कक्ष में लगाया जाता है। यह कुर्सी पर रखा अथवा दीवार से सटा, दो प्रकार का होता है।

(5) स्नान टब (Bath Tub)—यह एक लम्बा-चौड़ा टब होता है, जो स्नान के लिए आधुनिक प्रसाधन कक्षों में लगाया जाता है।

(6) सिंक (Sink)—यह बर्तन धोने के लिए रसोईघर में लगाया जाता है। यह प्रायः स्टील से बनाया जाता है।

चित्र 11.4 में प्रसाधन कक्ष में विभिन्न स्वच्छता फिटिंग की उपयुक्त स्थिति दर्शायी गयी है।

प्रश्न 11—आवासीय भवनों में प्रयुक्त होने वाले जीनों का वर्गीकरण लिखें। एक अर्धमोड़ जीने का रेखाचित्र बनाइए। *(UPBTE 2013)*

उत्तर—आकार के अनुसार सोपान निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

(1) सीधा सोपान (Straight Flight Stair)
(2) समकोण मोड़ सोपान (Quarter Turn Stair)
(3) प्रतिवर्ती या कुत्ता-टांग सोपान (Dog-Legged Stair)
(4) खुला कूपक सोपान (Open-well Stair)
(5) द्वि-शाखी सोपान (Bifurcated Stair)
(6) गोल सोपान (Circular Stair)
(7) ज्यामितीय सोपान (Geometrical Stair)
(8) सर्पिल सोपान (Spiral Stair)
(9) सीढ़ी (Ladder)

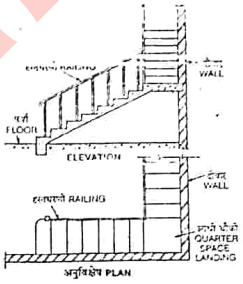

चित्र 11.5-समकोण मोड़ जीना

12 भवनों में ध्वनि, ऊष्मा व अग्निरोधन प्रणाली (Sound, Thermal & Fire Insulation System)

प्रश्न 1—किसी भवन में अग्निशमन प्रावधानों की मुख्य रूपरेखा बताइये। *(UPBTE 2007)*

उत्तर—

अग्निशमन प्रावधान

अग्निशमन प्रावधान निम्न हैं—

(i) आग लगने से रोकना, (ii) आग लगने का पता लगाना तथा अग्नि संचेतन प्रयोग करना

(iii) आग बुझाना

(i) आग लगने से रोकना—भवनों में आग लगने के कारणों व सम्भावनाओं को समाप्त कर देने पर अग्नि को प्रज्वलित होने से रोका जा सकता है। खाना बनाने की गैस, विद्युत फिटिंग, जलती मोमबत्ती, लाइटर माचिस की तिल्ली इत्यादि पर विशेष नजर रखनी चाहिये।

(ii) अग्नि का पता लगाना व अग्नि संचेतक उपस्कर प्रयोग करना—आग लगने का यथासंभव पता लगाना चाहिये अन्यथा यह समय पाकर भयंकर रूप ले लेती है। इस प्रकार की समस्याओं से निजात पाने के लिये अग्नि संचेतक उपस्कर लगाये जाते हैं जो धुआँ, ऊष्मा, ज्वाला या गैस के प्रति संवेदनशील होते हैं। ये धुएँ या ऊष्मा के सम्पर्क में आते ही खतरा खतरे की घण्टी बजने लगती है।

(iii) आग बुझाना—भवन में आग लगने की सूचना, भवनवासियों तथा सम्बन्धित व्यक्तियों व अग्निशमन विभाग को तुरन्त देनी चाहिये। आग लगने पर पहले पाँच मिनट का समय विशेष तौर पर बड़ा ही महत्व का तथा मूल्यवान होता है। घबराकर इधर-उधर भागने के बजाय इस समय सूझ-बूझ कर साहस से काम लेना चाहिये। जब तक अग्निशमन दस्ता आता है तब तक आग को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने का प्रयास करना चाहिये।

आग बुझाने वाले उपस्कर निम्न भवनों में प्रयोग हो रहे हैं। इनको स्थायी रूप में भवनों में स्थापित कर देना उत्तम है—

(i) आग की सूचना देने वाले फैक्टरक अलार्म
(ii) हस्तचालित अग्निशमन
(iii) आटोमेटिक हाइड्रेन्ट
(iv) जलाशय व गीली राइजर प्रणाली
(v) स्वतः छिड़काव प्रणाली।

प्रश्न 2—किसी भवन में आग लगने के क्या कारण हैं? अग्निशमन की क्या विधियाँ हैं? *(UPBTE 2006)*

उत्तर—आग लगने के निम्न कारण हैं—

(1) धूम्रपान करते हुए लापरवाही से सिगरेट के जलते हुए टुकड़े फेंकने से,
(2) बिजली के तारों में शॉर्ट सर्किट से,
(3) एल.पी.जी. गैस के लीक होने से,
(4) जलती आग पर ध्यान न देने पर,
(5) लापरवाही, असावधानी व वैर भाव के कारण,
(6) आसानी से जलने वाली वस्तुओं की लापरवाही से उठाने पर।

प्रश्न 3—भवनों की अग्नि सुरक्षा आवश्यकताएँ क्या हैं? *(UPBTE 2004)*

उत्तर—भवनों के लिए अग्नि सुरक्षा आवश्यकताएँ—ये आवश्यकताएँ निम्न हैं—

(1) भवन का निर्माण करते समय अग्नि सम्बन्धी भवन अधिनियमों व I.S. कोड का सख्ती से पालन करें।

(2) आग लगने पर, भवन से बाहर निकलने के लिए उपयुक्त सुरक्षित अग्नि सह निकास होना चाहिए। यह आवासीय भवनों में 22.5m और अन्य भवनों में 30 m से अधिक दूरी पर नहीं होना चाहिए।

(3) जीना व बरामदों की स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि उन तक बिना रोक एवं शीघ्रता से पहुँचा जा सके।

civilguru.net

(4) बहुतली भवनों में एक जीना बाहर सड़क से सीधा ऊपर छत तक जाना चाहिए जिसके कपाट बाहर को खुलने चाहिएं।

(5) आग लगने पर उत्थापक निकास मार्ग नहीं बनते क्योंकि इसमें धुआँ सबसे पहले भरता है।

(6) सभी दरवाजे-खिड़कियों की चौखटें व पल्ले अग्निसह पदार्थ के बने होने चाहिएं।

(7) आमने-सामने के भवनों के मध्य शुद्ध 9 m की दूरी होनी चाहिए।

(8) प्रत्येक तल पर रेत, पानी की बल्लियाँ व अग्निशामक उपयुक्त संख्या में लगाने चाहिएं। ये उपकरण जीने के निकट अथवा भवन के मध्य भाग में उत्तम रहते हैं।

प्रश्न 4—भवन निर्माण में अग्नि प्रतिरोधी पदार्थ क्या हैं?

उत्तर— **अग्नि प्रतिरोधी पदार्थ**

(i) ईंट, (ii) पत्थर, (iii) प्रकाष्ठ, (iv) कंक्रीट, (v) R.C.C., (vi) इस्पात, (vii) ढलवां लोहा, (viii) एस्बेस्टस, (ix) काँच, (x) प्लास्तर।

प्रश्न 5—'अनुरणन' से क्या तात्पर्य है?

उत्तर—अनुरणन (Reverberation)—ध्वनि की तरंगें जब किसी ठोस पदार्थ, दीवार आदि से टकराती हैं तो इसकी कुछ ऊर्जा वर्षण व अवशोषण से नष्ट हो जाती है, जिसके फलस्वरूप परावर्तित तरंगों की तीव्रता कुछ कम हो जाती है। यह परावर्तित तरंगें जब बार-बार दीवारों से टकराती हैं तो इनकी ऊर्जा या तीव्रता कम होते-होते इतनी घट जाती है कि ये सुनायी नहीं देतीं। ध्वनि तरंग के इस प्रकार अन्य माध्यमों से टकराकर नष्ट होने की क्रिया को अनुरणन कहते हैं।

प्रश्न 6—ध्वनि रोधन व ध्वनि अवशोषण में अन्तर बताइये।

उत्तर—ध्वनि रोधन (Sound Insulation) तथा ध्वनि अवशोषण (Sound Absorption) में अन्तर है। ध्वनि रोधन, ध्वनि का संचरण (Transmission) रोकना होता है जबकि ध्वनि अवशोषण, ध्वनि का परावर्तन (Reflection) रोकना होता है। दीवार के इस पार से उस पार ध्वनि जाने से हुई ऊर्जा में कमी ध्वनि रोधन कहलाती है और दीवार से टकराकर लौट जाने पर ध्वनि की ऊर्जा में कमी को ध्वनि अवशोषण कहते हैं।

प्रश्न 7—ध्वनि अवशोषक पदार्थ क्या होते हैं?

उत्तर— **ध्वनि अवशोषक पदार्थ**
(Sound Absorbent Materials)

भवन निर्माण में प्रयुक्त साधारण मैटीरियल जैसे—ईंट, गारा, कंक्रीट, प्लास्तर इत्यादि की ध्वनि अवशोषण क्षमता पर्याप्त नहीं होती। अत: कमरे की दीवारों, छतों आदि पर अलग से विभिन्न पदार्थों का प्रयोग करके, इसकी ध्वनिकता में सुधार किया जाता है।

एक उत्तम अवशोषण पदार्थ, सस्ता टिकाऊ, जल-सह, अग्निरोधक, आकर्षक होना चाहिए तथा इसके लगाने की विधि सरल होनी चाहिए। यह नर्म, लचीले तथा सरन्ध्री होने चाहिए। अवशोषण पदार्थों की अवशोषण क्षमता उनकी सतह की बनावट, सरन्ध्रता, मोटाई, सघनता तथा ध्वनि तरंगों की आवृत्ति पर निर्भर करती है। यह पदार्थ पेनल अथवा शीटों के रूप में उपलब्ध है, जिनको कीलों से दीवारों तथा सीलिंग पर जड़ दिया जाता है अथवा लटका दिया जाता है।

विभिन्न प्रकार के ध्वनि अवशोषक पदार्थ निम्नलिखित हैं—

(i) ध्वानिका प्लास्तर (Acoustics Plaster)—सीमेन्ट मसाले में दानेदार ध्वनिरोधक पदार्थ मिलाकर यह प्लास्तर किया जाता है। इसकी अवशोषण क्षमता 500 की आवृत्ति पर 0·30 तक होती है।

(ii) ध्वानिका टाइलें (Acoustics Tiles)—यह पूर्व निर्मित टाइलें विभिन्न नाम से बाजार में उपलब्ध हैं। इनको फर्श के ऊपर लगाया जाता है। यह अन्य अवशोषक पदार्थों से महंगी पड़ती हैं।

(iii) ध्वानिका बोर्ड (Acoustics Boards)—यह बोर्ड छिद्रित अथवा ठोस होते हैं, जो दीवार से थोड़ा हटाकर लगाये जाते हैं। छिद्रित बोर्ड अधिक उपयुक्त होते हैं। ध्वनि की आवृत्ति से बोर्डों में कम्पन होता है, जिससे इनके पीछे की खाली जगह की वायु से ध्वनि का अवशोषण होता है। यह बोर्ड आजकल बहुत उपयोग में आने लगे हैं।

कुछ बोर्डों के नाम इस प्रकार हैं—स्ट्रा बोर्ड (Straw Board), पल्प बोर्ड (Pulp Board), दाबित फाइबर बोर्ड (Compressed Fibre Board), छिद्रित प्लाई वुड (Perforated Ply Wood), लकड़ी के छीलन के बोर्ड (Wood Wool Board) इत्यादि।

पूर्व निर्मित बोर्डों तथा पैनल की अवशोषण क्षमता प्राय: निर्माण-कर्त्ता द्वारा उन पर अंकित कर दी जाती है।

प्रश्न 8—मुख्य ऊष्मारोधी पदार्थ कौन-से हैं?

उत्तर— **मुख्य ऊष्मारोधी पदार्थ**

(1) काँच की रूई (Glass wool)—काँच को पिघलाकर काँच-की-रूई तैयार की जाती है। काँच की रूई के रेशों का कपड़ा या कम्बल बनाया जाता है। मोटे रेशे वातानुकूलन फिल्टर के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

काँच की रूई ऊष्मारोधक के अतिरिक्त विद्युत की कुचालक, जल-सह एवं ध्वनि रोधक होती है।

(2) काष्ठ छीन या रूई (Wood Wool)—लकड़ी की लम्बी-लम्बी एवं पतली छीलनों को, जो प्रकाष्ठ उद्योगों से निकलती हैं, काष्ठ रूई कहते हैं। इस रूई का प्रयोग ऊष्मा रोधक एवं ध्वनि रोधक पदार्थों में किया जाता है।

काष्ठ छीलन को उबालकर और उसमें सीमेन्टिंग पदार्थ मिलाकर तथा अत्यधिक दाब लगाकर काष्ठ-रूई बोर्ड (Wood Wood Board) बनाये जाते हैं, जिन्हें दीवारों पर जड़कर, कमरों को ऊष्मा तथा ध्वनि रोधक बनाया जाता है।

(3) धातु-मल रूई (Slag Wool)—धातु मल जो विभिन्न धातुओं के निष्कर्षण से प्राप्त होता है, में वायु के झोंके भेजकर, इसे रन्ध्रमय (Porous) बनाया जाता है। यह ऊष्मा रोधन के काम आता है।

(4) कार्क (Cork)—कार्क जो कर्क वृक्ष से तैयार किया जाता है, रन्ध्रमय होता है। यह ताप, ध्वनि तथा विद्युत का कुचालक है। कार्क का उपयोग शीतगृहों, वातानुकूलन में ऊष्मारोधी पदार्थ के रूप में किया जाता है।

(5) नमदा (Felt)—यह सूत अथवा सूत मिली ऊन को बुनकर बनाया जाता है। उचित मोटाई प्राप्त करने के लिए कई परतों को आपस में जोड़ दिया जाता है। नमदे को टिकाऊ तथा सामर्थ्यवान बनाने के लिए, इस पर बिटुमिन का लेप कर दिया जाता है। तब इसको बिटुमिन फेल्ट कहते हैं। इसका प्रयोग ऊष्मा तथा शीतन रोकने के लिए, भवनों की छतों पर किया जाता है। बिटुमिन नमदे पर अभ्रक का लेप करके, इसे अग्निरोधक बनाया जाता है।

यह नमदे जानवरों अथवा वनस्पति के रेशों को बिटुमिन में मिलाकर भी बनाये जाते हैं।

(6) एस्बेस्टस (Asbestos)—यह एक रेशेदार खनिज पदार्थ है। यह ऊष्मा रोधी ध्वनिरोधी एवं विद्युत का कुचालक है। एस्बेस्टस में सीमेंट मिलाकर चादरें तैयार की जाती हैं, जिनका उपयोग गर्म स्थानों पर छतों को ढाँपने के लिए किया जाता है। एस्बेस्टस मिश्रित प्लास्टिक भी बनाया जाता है।

(7) थर्मोकोल (Thermocole)—यह पोलीस्ट्रीन नामक प्लास्टिक से बनाया जाता है। यह कोशिकायें-युक्त (Cellular) होता है। थर्मोकोल काफी हल्का, तापरोधक एवं जल-सह होता है। इसका उपयोग शीतगृहों, वातानुकूलन प्रशीतन (Refrigeration), भवनों की छतों व दीवारों पर किया जाता है। यह बोर्ड अथवा पटिया के रूप में मिलता है।

civilguru.net

13 भूकम्प प्रतिरोधी निर्माण व अनिवार्य सेवायें (Earthquake Resistance Constructions & Essential Services)

प्रश्न 1—भूकम्पीय क्षेत्र में भवनों के अभिकल्पन हेतु क्या सावधानियाँ बरतनी चाहियें? *(UPBTE 2007)*

उत्तर—भूकम्प-सह भवनों का निर्माण काफी जटिल है। इसके लिये भवनों के निर्माण में न्यून भार वाली परन्तु अधिक सामर्थ्य वाली सामग्री का प्रयोग करना चाहिये। इन पदार्थों की कर्तन सामर्थ्य एवं अग्नि प्रतिरोधकता उच्च होनी चाहिये। इसके लिए सीमेंट कंक्रीट एक उत्तम पदार्थ है। भवन की कुल लम्बाई इसकी चौड़ाई से तीन गुना से अधिक नहीं होनी चाहिये। संरचना की V अथवा L प्रकार की आकृति की अपेक्षा बन्द या वर्गाकार आकृति उत्तम रहती है।

भवन का गुरुत्व केन्द्र जहाँ तक सम्भव हो, भूमितल के निकट स्थित होना चाहिये। पलटन आघूर्ण, परिस्थापन आघूर्ण 50% से अधिक नहीं होना चाहिये।

भूकम्पग्रस्त क्षेत्रों में एक मंजिल भवनों की बाहरी दीवारें 40 cm से कम नहीं होनी चाहियें। भवनों पर डाट वाली छतें डालनी चाहियें पैराफिट की ऊँचाई 45 cm से अधिक नहीं होनी चाहिये।

भूकम्पीय क्षेत्र में भवन के अभिकल्पन में सावधानियाँ—

(1) भवन की नींव यथा सम्भव निरन्तर प्रकार की होनी चाहिए।

(2) भवन की नींव व अधिरचना परस्पर अच्छी प्रकार सम्बद्ध होने चाहियें ताकि भूकम्प के समय वे एक पिण्ड की भाँति कार्य करें।

(3) दीवार में दरवाजों व खिड़कियों आदि के लिये खुले स्थान यथासम्भव कम छोटे व मध्य में स्थित होने चाहियें।

(4) भूकम्प के झटके से भवन की छत, दीवारों से अलग हटने का प्रयास करती हैं। छतें अपना जड़त्व बल दीवारों के शीर्ष पर स्थानान्तरित कर देती हैं। R.C.C. व R.B. छतों का भूकम्प प्रतिरोध काफी अधिक होता है।

(5) बहु धरन (cantilever) डाट, गुम्बद व पैराफिट, चिमनी आदि में यथासम्भव बचना चाहिये।

प्रश्न 2—भूकम्पों का श्रेणीकरण कैसे करते हैं?

उत्तर— **भूकम्पों का श्रेणीकरण (Classification of Earthquakes)**

उद्गम बिन्दु (Hypocentre) की भूमि सतह से गहराई के अनुसार भूकम्पों को निम्न तीन श्रेणी में रखा गया है—

(i) उथले भूकम्प (Shallow Earthquake)

(ii) मध्यम भूकम्प (Semi-Deep Earthquake)

(iii) गहरे भूकम्प (Deep Earthquake)

जिन भूकम्पों का उद्गम बिन्दु (Focus) भूमिसतह से 70 किमी से कम गहरा होता है, उथले भूकम्प कहलाते हैं। जिन भूकम्पों का फोकस 70 किमी से 300 किमी के मध्य होता है, मध्यम भूकम्प कहलाते हैं और जिन भूकम्पों का फोकस भूमि सतह से 300 मिमी से 700 किमी तक होता है, गहरे भूकम्प कहलाते हैं।

प्रश्न 3—भूकम्पीय बलों का भवनों पर क्या कुप्रभाव पड़ता है?

उत्तर— **भूकम्पीय बलों का भवनों पर कुप्रभाव (Illeffects of Seismic Forces on Buildings)**

भूकम्प के समय जो उद्गम केन्द्र से तरंगें उत्पन्न होती हैं, उससे भूमि में हरकत होती है। यह हलचल कम्पनों के अध्यारोपण होने के कारण और अधिक जटिल हो जाती है। सरल अध्ययन के लिए इसको क्षैतिज व ऊर्ध्वाधर कम्पनों में बाँट लेते हैं। क्षैतिज कम्पन, ऊर्ध्वाधर कम्पनों से अधिक प्रबल व घातक होते हैं। भवनों को क्षति धरती के क्षैतिज कम्पन से अधिक

होती है, क्योंकि भवन जड़त्व (Inertia) के कारण अपनी मूल स्थिति में रहता है और इसके नीचे की भूमि अक्समात एक ओर खिसक जाती है (चित्र 13.1)।

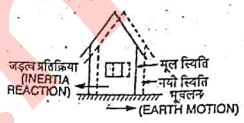

चित्र 13.1

भूकम्प के कारण धरती की हरकत किसी भी दिशा में हो सकती है; अतः भवन को प्रत्येक दिशा में पार्श्व बलों को सहने योग्य होना चाहिए। सरलता के लिए धरती की हरकत को दो समकोणक दिशाओं में मानकर भवनों की सामर्थ्य का अध्ययन किया जाता है।

प्रत्येक भवन की कम्पन की भूमि अपनी एक निश्चित आवृत्ति होती है। जब भूमि की कम्पन आवृत्ति, भवन की कम्पन आवृत्ति के समपाती हो जाती है, तो अनुनाद (Resonance) होता है और वह संरचना पूर्णतः ध्वस्त हो जाती है। भूमि की कम्पन आवृत्ति 1 से 2·5 सेकण्ड होती है। प्रबलित संक्रीट भवनों की कम्पन आवृत्ति इसके तलों की संख्या के अनुसार 1 से 2·0 सेकण्ड ली जाती है।

प्रश्न 4—पश्च दृढ़ीकरण या रिट्रोफिटिंग क्या होती है?

उत्तर— **पश्च-दृढ़ीकरण या रिट्रोफिटिंग (Retrofitting)**

भूकम्पों की दृष्टि से असुरक्षित/कमजोर/क्षतिग्रस्त पूर्व-निर्मित संरचनाओं को, उनकी मरम्मत व उपचार करके, भूकम्पों के प्रति सुदृढ़ व सुरक्षित बनना, पश्च-दृढ़ीकरण कहलाताहै। पश्च-दृढ़ीकरण ऐसे पूर्व-निर्मित (पुराने) भवनों में ही किया जाता है, जिनमें भूकम्पीय सुरक्षा की दृष्टि से पूर्व में आवश्यक प्रावधान नहीं किये गये हैं और वे क्रान्तिक भूकम्पीय जोन में पड़ते हों।

पश्च-दृढ़ीकरण के अन्तर्गत भूकम्पीय दृष्टि से कमजोर पड़े धरनों, स्तम्भों, स्लैब व नींव का जैकेटिंग करके सुधार किया जाता है। नई अपरूपण दीवार, पुश्ता, ब्रेसिंग लगाना तथा वर्तमान दीवार की मोटाई बढ़ाना भी पश्च-दृढ़ीकरण के अन्तर्गत लिया जाता है।

चिनाई व कंक्रीट की दरारों, छिद्रों व फटानों को भरने के लिये इनमें अभिपूण घोल (Grout) डाले जाते हैं। ये सीमेन्ट आधारित या पॉलीमर घोल होते हैं।

पुरानी व नयी कंक्रीट को जोड़ने के लिये तथा कंक्रीट व प्रबलन छड़ों को एकाश्मी बनाने के लिये अभिलाग पदार्थ (Bonding Agents) प्रयोग किये जाते हैं। Epoxy, Polyster, Acrylic, Polyurethane इत्यादि रेजिन आसंजकों का घोल कंक्रीट पर पोत दिया जाता है।

दीवारों, स्तम्भों के क्षतिग्रस्त व टूटे भागों के प्रतिस्थापित करने के लिये जैकेटिंग क्रिया की जाती है। जैकेटिंग के लिये सीमेन्ट मसाला/कंक्रीट आदि प्रयोग की जाती है। इस कार्य के लिये सीमेन्ट गन प्रयोग की जाती है और क्रिया और शॉटक्रीट या गुनाइटिंग (Guniting) कहते हैं। जैकेट प्रबलित सीमेन्ट कंक्रीट, रेशा प्रबलित प्लास्टिक, शीशे अथवा इस्पातीय प्लेटों की भी होती है। कार्बन रेशों, काँच के रेशों की जैकेटिंग भी लगायी जाती है। जैकेटिंग अवयव के चारों तरफ अथवा किसी एक फलक पर भी मढ़ी जाती है।

नये अवयव जोड़कर भी कमजोर भवन का सुदृढ़ीकरण किया जाता है। इसके अन्तर्गत अपरूपण दीवारों का निर्माण, ब्रेसिंग-फ्रेम जड़कर अथवा पुश्ता दीवारें खड़ी की जाती हैं।

civilguru.net

प्रश्न 5—कृत्रिम प्रकाश की आवश्यकता व इसकी व्यवस्था करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?

उत्तर— कृत्रिम प्रकाश की आवश्यकता (Necessity of Artifical Lighting)

बड़े भवनों में, विशेष तौर पर बहुतली भवनों, मनुष्य की गतिविधियों को देखते हुए, पर्याप्त प्राकृति प्रकाश उपलब्ध नहीं हो पाता। भीतरी कमरों में यह समस्या अधिक होती है। पास-पास सटाकर खड़े किए भवन एक-दूसरे के प्राकृतिक संसाधनों—हवा, धूप व प्रकाश के मुक्त संचरण में बाधा डालते हैं। सूर्य का प्रकाश दिन में ही उपलब्ध है, वह भी पर्याप्त तभी मिल पाता है, जब भवन का दिक्विन्यास उचित हो। अतः भवनों के ऐसे भागों में जहाँ पर्याप्त प्राकृतिक प्रकाश उपलब्ध नहीं हो पाता हो और रात्रि के लिए कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था करनी पड़ती है। सार्वजनिक भवनों में व्यक्तियों के समूह को तथा उनके प्रकार्य को देखते हुये, अलग-अलग तीव्रता वाले प्रकाश की व्यवस्था जरूरी हो जाती है। आवासीय भवनों में कमरों की उपयोगिता देखते हुए विभिन्न तीव्रता का प्रकाश देना पड़ता है। यह कृत्रिम व्यवस्था द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए—

(i) प्रकाश तीव्रता आवश्यकतानुसार पर्याप्त हो, परन्तु प्रकाश में चौंध नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इससे आँखों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(ii) कार्य-पटल पर प्रकाश की तीव्रता लगभग समान हो।

(iii) प्रकाश वांछित रंग का हो। सामान्यतः श्वेत प्रकाश उत्तम रहता है, परन्तु शोकेसों, नृत्य पटलों और विज्ञापन स्थलों पर रंगीन प्रकाश भी उपयोग किया जाता है। पीला प्रकाश सावधानी का द्योतक माना जाता है। लाल प्रकाश खतरे का भान कराता है।

प्रश्न 6—वायरिंग प्रणाली कितने प्रकार की होती है?

उत्तर— विद्युत तार स्थापन या वायरिंग प्रणाली (Wiring System)

भवनों के लिए भीतरी वायरिंग निम्न पाँच प्रकार की होती है—

(i) क्लीट वायरिंग (Cleat Wiring)

(ii) केसिंग वायरिंग (Wood Casing Wiring)

(iii) C.T.S. या T.R.S. वायरिंग (Cotton Tough Sheated or Tough Rubber Sheated Wiring)

(iv) कन्ड्यूट वायरिंग (Conduit Wiring)

(v) सिर्री कन्ड्यूट वायरिंग (Recessed Conduit Wiring)।

प्रश्न 7—ऊँचे भवनों की आकाशीय बिजली से सुरक्षा से क्या तात्पर्य है?

उत्तर— ऊँचे भवनों की आकाशीय बिजली से सुरक्षा (Protectionof High Buildings Against Sky-Lighting)

ऊँचे भवनों व संरचनाओं को आकाशीय बिजली से बचाना चाहिए, विशेषतौर पर सार्वजनिक भवन, चिमनी, टावर, शिरोपरि जल टैंक, फैक्टरी व गोदाम शैड, तेल-गैस के टैंक, विद्युत गृह, टेलीफोन एक्सचेंज, रेलवे व बस स्टेशन, पवन चक्की, शिव-मन्दिर इत्यादि, जिनके ढह जाने पर अत्यधिक जन हानि होती है।

इसके लिए संरचना के शिखर/छत से भूमि तक एक सतत विद्युत कन्डक्टर डाला जाता है, जिसे नीचे तक उत्तम भू-सम्पर्कन इलेक्ट्रोड से जोड़ दिया जाता है। गरजती हुई आकाशीय विद्युत धारा यह सरल पथ अपनाकर, तत्काल भूमि के गर्भ में चली जाती है।

कन्डक्टर के लिए ताँबे अथवा जी० आई० की 20 mm × 3 mm माप की पत्ती (Strip) लगायी जाती है, जिसके ऊपरी सिरे पर विद्युत अन्तारोधक (Intercepter) लगा होता है। अन्तरोधक भवन के सबसे ऊँचे किंगरे से 30 cm ऊपर निकला रहना चाहिए।

एक कन्डक्टर संरचना के 90 वर्ग मीटर आधार क्षेत्र के लिए पर्याप्त है। कन्डक्टर सीधा नीचे भूमि तक आना चाहिए। इसमें जोड़, तीखे मोड़/घुमाव/चक्कर नहीं होने चाहिये।

प्रश्न 8—दूषित जल निकासी कैसे करते हैं?

उत्तर— दूषित जल निकासी (House Drainage)

जल निकासी (Drainage)

आवासों से उत्सर्जित सूखे कूड़े-कचरे (Garbage) को द्रव-मल-मूत्र (Sewage) से नहीं मिलाया जाता है। दोनों अपशिष्टों को अलग-अलग घर से बाहर लाया जाता है। कचरा डालने के लिए, घरों के बाहर कूड़ा-ड्रम रखे जाते हैं, जहाँ से प्रतिदिन कूड़े की निकासी की व्यवस्था की जाती है।

फ्लश लैट्रिन से निकला हुआ मल-मूत्र घरेलू सीवर लाइन द्वारा घर से बाहर लाकर नगर पालिका की सीवर लाइन में डाल दिया जाता है। सीवर प्रणाली उपलब्ध न होने पर, इसका सेप्टिक टैंक में समापन किया जा सकता है।

घरेलू सीवर के लिए 100 mm व्यास का ढलवां लोहे, सीमेन्ट कंक्रीट अथवा प्लास्टिक (PVC) का पाइप डाला जाता है इसे 1 in 40 से 1 in 60 की अनुलम्ब ढाल दी जाती है। जोड़ों को पूर्णतः जल-रोधक बनाया जाता है। सभी मोड़ पर निरीक्षण चैम्बर बनाये जाते हैं। ऊपर तलों से सीवेज ऊर्ध्व नलों द्वारा भूमि तल पर लाकर, भूमिगत सीवर पाइप में डाल दिया जाता है।

आँगनों तथा खुले क्षेत्रों से वर्षा जल के निकास के लिए सतही नाली बनायी जाती है। इसे भी उपयुक्त अनुलम्ब ढाल देनी चाहिए।

दूषित जल निकासी अपनाते समय निम्न बातों का ध्यान देना चाहिए—

(i) सीवर पाइप का माप पर्याप्त होना चाहिए ताकि वह अधिप्रवाहित (Over flow) न होने पाये। शौचागार, स्नान कक्ष व रसोईघर से निकलने वाली सीवर (पाइप) 10 cm व्यास से कम नहीं होनी चाहिये।

(ii) सीवर को उपयुक्त अनुलम्ब ढाल देनी चाहिए, ताकि इसमें स्वतः शोधी वेग बना रहे।

(iii) सीवर (मल पाइप) के सभी जोड़ पूर्णतः जल रोधक होने चाहिएँ।

(iv) सीवर के प्रत्येक मोड़ तथा उचित अन्तराल पर निरीक्षण व सफाई चैम्बर बनाने चाहिएँ।

(v) फर्शों में दबाई गयी सीवर के लिए ढलवाँ लोहे का पाइप ठीक रहता है। इस पाइप को चारों तरफ से 10 cm मोटी कंक्रीट से आवरित कर (ढक) देना चाहिए।

(vi) वात पाइप (Vent Pipe) के अतिरिक्त सभी स्वच्छता उपकरणों/फिटिंग की तली पर पर्याप्त जल-सील वाले ट्रेप लगाने चाहिएं।

(vii) संवातन पाइप व मल नल भवन की मुंडेर से न्यूनतम 60 cm ऊपर निकले रहने चाहएं।

जल निकास व्यवस्था (House Drainage)

यह व्यवस्था निम्न प्रकार से की जाती है—

(i) फ्लैश लैट्रिन व मूत्राधार से अपशिष्ट द्रव बाहर ले जाने के लिए मल-नल (Soil Pipe) बिछाये जाते हैं। ये ढलवाँ लोहे के होते हैं।

(ii) स्नानघर, रसोई तथा धावन पात्र में गन्दा पानी निकालने के लिए गंदा जल-नल (Waste Pipe) लगाये जाते हैं। यह भी ढलवां लोहे (अथवा प्लास्टिक) के उपयुक्त रहते हैं।

(iii) वर्षा जल को छत से नीचे लाने के लिए वर्षा जल पाइप (Rain Water Pipe) लगाये जाते हैं। यह पाइप एस्बेस्टस सीमेन्ट का 15 cm व्यास का होता है।

प्रश्न 9—स्लैब का वर्गीकरण कीजिए। ***(UPBTE 2013)***

उत्तर—क्लोड स्लैब—पूर्व ढालित कंक्रीट पटियाँ छत आदरण के रूप में प्रयोग की जाती हैं। पटियों की मोटाई में एक तरफ खाँचा और दूसरी ओर कोर बनी होती है। दो पटियों को पास-पास सटा कर, इनके जोड़ में सीमेन्ट मसाला (1 : 2) भर दिया जाता है (चित्र 13.14)।

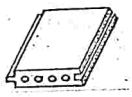

चित्र 13.14–क्लोड स्लैब

civilguru.net

खोखले ब्लॉक व बैटन—प्रबलित कंक्रीट के पूर्व ढालित बेटन दीवारों पर टिकाकर, उनके मध्य खोखले ब्लॉक लगा दिये जाते हैं। ब्लॉकों के ऊपर सीमेन्ट कंक्रीट की परत डालकर अथवा प्लास्तर करके छत सतह की फिनिशिंग की जाती है। खोखले ब्लॉकों के कारण यह काफी हल्की छत होती है और छोटे पाटों के लिये उपयुक्त रहती है (चित्र 13.15)।

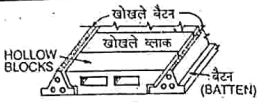

चित्र 13.15–खोखले ब्लॉक व बैटन

टी स्लैब खण्ड—यह खण्ड 6m पाट तक छत के आवरण के रूप में आवासीय व औद्योगिक भवनों में प्रयोग किय जाते हैं। यह खण्ड पर्याप्त सामर्थ्यवान व मितव्ययी होते हैं। छत स्लैब के लिये दूला व शटरिंग लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती (चित्र 13.16)।

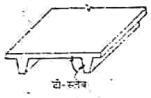

चित्र 13.16–टी-स्लैब खण्ड

वायुतान स्लैब—यह स्लैब-खण्ड हल्के भार वाली फेनिल (Cellular) कंक्रीट के बनाये जाते हैं और छत आवरण के रूप में काम आते हैं। यह खण्ड काफी हल्के होते हैं और ऊष्मा प्रतिरोधक हैं (चित्र 13.17)।

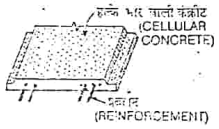

चित्र 13.17–वायुतान स्लैब

14 अनुरक्षण व मरम्मत (Maintenance & Repairs)

प्रश्न 1—भवन संरचना को क्षति पहुँचाने वाले कारक क्या हैं? उनको दूर करने के उपाय क्या हैं? *(UPBTE 2006)*

उत्तर—

भवन संरचना को क्षति पहुँचने वाले कारक
(Factors Responsible for Building Deterioration)

भवन चाहे कितने ही उत्तम ढंग से बनाया गया हो, उपयोग में आने और समय बीतने पर इसमें टूट-फूट व क्षति होती ही रहती है। भवन के पूर्ण हो जाने के साथ ही, इसका अपक्षय शुरू हो जाता है। भवनों की अपक्षय की दर, इनके निर्माण-स्तर, उपयोग विधि तथा अनुरक्षण की अवधि पर निर्भर करती है। भवनों को क्षति पहुँचाने के लिए निम्न कारक जिम्मेदार हैं—

(i) वायुमण्डलीय प्रभाव जैसे धूप, ठण्ड, तापमान परिवर्तन, हवायें, आँधी-तूफान, वर्षा, बाढ़ इत्यादि.
(ii) भौम जल स्तर के ऊपर उठने तथा सीलन के कारण,
(iii) दीमक व अन्य कीटों के प्रकोप के कारण,
(iv) प्रयोग के कारण टूट-फूट,
(v) भारी वस्तु गिरने से क्षति,
(vi) घटिया निर्माण सामग्री अथवा निर्माण तकनीक के कारण,
(vii) काल प्रभाव तथा प्राकृतिक आपदायें जैसे भूकम्प, बाढ़ आदि के कारण।

(i) वायुमण्डलीय प्रभाव के कारण अपक्षय—(a) सीधी तेज धूप से दरवाजे-खिड़कियों का पेन्ट फीका पड़ जाता है। पुताई/डिस्टेम्पर नष्ट होने लगते हैं। ताप परिवर्तन पर भवन की दीवारों, छतों के प्लास्तर आदि में दरारें पड़ जाती हैं। लकड़ी तड़क जाती है। आँधी-तूफान से दरवाजे/खिड़कियों के पल्ले खड़खड़ा जाते हैं, उनमें जड़े काँच टूट जाते हैं।

उपाय—दरवाजे/खिड़कियों की चौखटें 8 cm × 10 cm से कम नहीं होनी चाहिए। पल्ले की मोटाई 4 cm से कम नहीं होनी चाहिये। दरवाजे/खिड़कियों के पल्लों के पीछे स्क्रीन लगाने चाहिए और बाहरी खिड़की पर तेल-रोधी पेन्ट करना चाहिए और इनके आगे धूप अवरोधक लगाने चाहिए।

(b) वर्षा से दीवारों की परिसज्जा धुल जाती है। लकड़ी गलने लगती है। वर्षा का पानी जल भवन की नींव में घुस जाता है, तो नींव का अवस्थापन होने लगता है। वर्षा जल की उचित व तुरन्त निकासी न होने के कारण भवन में सीलन आ जाती है। सीलन से दरवाजे, खिड़कियाँ, विद्युत फिटिंग, प्लास्तर, रंग-रोगन इत्यादि नष्ट होने लगते हैं।

उपाय—सीलन को रोकने के लिये कुरसी तल पर ध्यानपूर्वक सील रोक रद्दा लगाना चाहिये और भवन की कुरसी (प्लिंथ) सामान्य बाढ़तल से 30 से 45 सेमी ऊपर रखनी चाहिये।

(ii) भौम जल-स्तर का ऊपर उठना—जलग्रस्त क्षेत्रों में तथा वर्षा अधिक होने पर प्रायः भौम जल-स्तर ऊपर उठ जाता है और नींव की सीमा तक आ जाता है, जिस कारण भवन की नींव में सीलन आ जाती है, जो केशिका क्रिया (Capillary Action) द्वारा भवन की कुरसी व अधिरचना में पहुँच कर इसे क्षति पहुँचाती है।

उपाय—जलग्रस्त क्षेत्र में भवन नहीं बनाना चाहिये अथवा उसमें नलकूप लगाकर, भौम-जल स्तर को नीचा रखना चाहिये।

(3) दीमक/कीटों के कारण क्षति—दीमक लकड़ी की कड़ियों, चौखटों, अलमारियों, पेलमेट, फर्नीचर, विद्युत फिटिंग, पुस्तकों तथा अन्य सामान को खाकर नष्ट कर देती है।

उपाय—यदि भूमि में दीमक के ठिकाने हैं तो उन्हें भवन निर्माण से पूर्व ही दीमक रोधी उपचार करके नष्ट कर देने चाहियें। दीमक लगने पर, दीमक ग्रस्त अवयव को काटकर निकाल देना चाहिये और शेष भाग पर दीमकरोधी रसायनों का लेप कर देना चाहिये।

(4) प्रयोग के कारण होने वाली टूट-फूट—भवन का लापरवाही से इस्तेमाल करने पर, इसका अपक्षय शीघ्र होने लगता है। भवन जिस प्रयोजन के लिए बनाया गया है, उसी कार्य के लिये इस्तेमाल करना चाहिए। जब फर्शों, छतों तथा अन्य घटकों पर अभिकल्पित भार से अधिक भार आते हैं, तो भवन की सामर्थ्य प्रभावित होती है और यह असुरक्षित हो जाता है।

civilguru.net

यद्यपि भवन ईंट, पत्थर, कंक्रीट, इस्पात इत्यादि चिरस्थायी सामग्री से बनाया जाता है, परन्तु इन पदार्थों की भी अपनी क्षमता व आयु होती है। बेदर्दी से भवन का प्रयोग करने पर इनको क्षति पहुँचती है और भवन की आयु घट जाती है। सार्वजनिक भवनों में टूट-फूट इसी कारण अधिक होती है। अत: भवन संरचना को एक जीवित काया समझते हुए, सावधानी व सज्जनता से इसका उपयोग करना चाहिए। छोटी-मोटी टूट-फूट की तरफ भी ध्यान देना चाहिये और इसे ठीक करवा देना चाहिए अन्यथा यह बड़ी टूट-फूट का रूप धारण कर लेती है।

(5) भारी वस्तु के गिरने से भवन की क्षति—जब आवासीय भवन का उपयोग सार्वजनिक कार्यों अथवा फैक्ट्री के रूप में होने लगता है तो इसकी टूट-फूट अधिक होती है, क्योंकि उसके फर्श, दीवारें व छत इस प्रकार के भारी कार्य के लिए नहीं बने होते हैं। भारी वस्तु से टकराने से दीवार का प्लास्तर उखड़ जाता है, फर्श टूट जाते हैं तथा अन्य क्षति होती है।

अत: भवन का उपयोग उसी कार्य के लिए करना चाहिए, जिसके लिए यह मूल रूप से निर्माण किया गया है। यदि इसका अन्य प्रकार से प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है, तो संरचना को अधिक सामर्थ्यवान बना देना चाहिये।

(6) घटिया निर्माण सामग्री अथवा निर्माण तकनीकी अपनाने से—(a) भवन के अपक्षय का एक कारण, इसके निर्माण में प्रयोग की गयी घटिया, सस्ती व अनुपयुक्त सामग्री होता है। इससे भवन की लाभकारी आयु भी कम हो जाती है। घटिया प्रकार की भवन सामग्री पर वायुमण्डलीय कुप्रभाव भी अधिक तेजी से होता है। अधपकी, पिल्ली ईंटें, असंशोधित व रोगग्रस्त प्रकाष्ठ, घटिया सीमेन्ट, निम्न कोटि का इस्पात, घटिया-पुराना रंग-रोगन इत्यादि के प्रयोग से भवन का अपक्षय शीघ्र होने लगता है और बाद में मरम्मती उपाय भी अधिक कारगर सिद्ध नहीं होते हैं।

अत: भवन निर्माण में अच्छी, परखी हुई और भूस्थल के अनुरूप सामग्री का प्रयोग करना चाहिये।

(b) निर्माण तकनीक का भी भवन की आयु पर बहुत प्रभाव होता है। उत्तम क्वालिटी की सामग्री का प्रयोग करने पर भी, यदि निर्माण घटिया स्तर का है, तो निर्माण सामग्री की गुणवत्ता भी गौण पड़ जाती है।

भवन निर्माण सदा सक्षम व अनुभवी कर्मियों से कराना चाहिए। नींव, कुरसी सीलन रोक रद्दा, दीवारें, फर्श, दरवाजे, खिड़कियाँ, फर्श, भवन के सभी घटक भवन के उपयोग के अनुरूप ही अभिकल्पित किए जाने चाहियें। भवन की मुँडेरों पर कोर्निस तथा बाहरी दरवाजे-खिड़कियों के आगे छज्जे व धूपरोधक (Sun shades) लगाने चाहियें।

(7) काल प्रभाव—उत्तम निर्माण सामग्री, उच्च निर्माण तकनीक, सही ढंग से उपयोग तथा समयबद्ध देखभाल व मरम्मत से भवन की लाभकारी आयु बनी रहती है; परन्तु फिर भी समय का प्रभाव प्रत्येक वस्तु पर पड़ता है। काल प्रभाव को रोक पाना सम्भव नहीं है। अत: जब भवन की लाभकारी आयु समाप्त हो जाये, इसे गिराकर नया निर्माण कर लेना चाहिये।

प्रश्न 2—भवन अनुरक्षण से क्या तात्पर्य है? अनुरक्षण कार्य का वर्गीकरण कीजिये।

उत्तर— **भवन अनुरक्षण (Building Maintenance)**

भवन की सामान्य टूट-फूट की मरम्मत और समय-समय पर लिपाई-पुताई करवा कर, इसे लाभकारी और आवासीय स्थिति में बनाये रखना, भवना अनुरक्षण कहलाता है।

भवन संरचना को धूप, वर्षा, बाढ़, सीलन, आँधी, झक्कड़, गर्मी, सर्दी जैसे वायुमण्डलीय कारक क्षति पहुँचाते हैं। औद्योगिक क्षेत्रों में बने भवनों पर विभिन्न प्रकार की गैसें, अम्ल, रासायनिक धुएँ भी अपना कुप्रभाव डालते हैं। फिर उपयोग होने पर भवन में टूट-फूट भी स्वाभाविक है।

यदि समय रहते टूट-फूट की सन्तोषजनक मरम्मत नहीं की जाती है तो भवन की दशा उत्तरोत्तर खराब होती जाती है। भवन की अनिवार्य सेवायें जैसे विद्युत फिटिंग, जल आपूर्ति नल, स्वच्छता फिटिंग भी लगाकर देखभाल और मरम्मत माँगती है। इनके प्रति लापरवाही से, ये सेवायें अनुपयोगी बन जाती हैं और भवन वासियों को परेशान करने लगती है। अत: भवनों का अनुरक्षण तथा मरम्मत अनिवार्य है। इसके लिये समयबद्ध निरीक्षण को अपनाना होता है।

अनुरक्षण कार्य निम्न चार श्रेणी में लिया जाता है—

(i) रोकथाम अनुरक्षण (Preventive Maintenance),
(ii) उपचार अनुरक्षण (Remedial Maintenance),
(iii) सामान्य अनुरक्षण (Routine Maintenance),
(iv) विशेष अनुरक्षण (Special Maintenance)।

(v) संरचना में दोष प्रकट होने से पूर्व किया गया अनुरक्षण कार्य, रोकथाम अनुरक्षण कहलाता है। इसके अन्तर्गत संरचना का निरीक्षण, मरम्मत की योजना तथा मरम्मत आती है।

(vi) दोष/क्षति होने पर, संरचना का अनुरक्षण, उपचार अनुरक्षण कहलाता है। इसके अन्तर्गत संरचना का अपक्षय, उसके कारण, मात्रा तथा अनुरक्षण कार्य किया जाता है।

(vii) समयबद्ध संरचना का निरीक्षण, क्षति का ब्यौरा तथा आवश्यक मरम्मत कार्य, सामान्य अनुरक्षण कहलाता है। इसके लिये वार्षिक बजट में भवन लागत का 1·5% तक का प्रावधान रखा जाता है।

(viii) विशेष अनुरक्षण, विशेष स्थितियों के कारण संरचना को हुयी क्षति की मरम्मत के लिये अपनाया जाता है। इस अनुरक्षण कार्य के लिये विशेष अनुमति की आवश्यकता पड़ती है।

प्रश्न 3—भवन अनुरक्षण के सिद्धान्त क्या हैं?

उत्तर— **भवन अनुरक्षण के सिद्धान्त (Principles of Building Maintenance)**

भवन अनुरक्षण के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं—

(i) भवन की निरन्तर देख-भाल की जाये तथा भवन-सेवायें सन्तोषजनक स्तर पर बनायी रखी जायें।
(ii) सामान्य टूट-फूट की तुरन्त मरम्मत होनी चाहिये।
(iii) बड़ी क्षति को शीघ्र ठीक करवाने की व्यवस्था करनी चाहिये।
(iv) वर्षा ऋतु से पहले समस्त भवन का विशेष तौर पर छतों का निरीक्षण करना चाहिये।
(v) भवन में कोई बड़ा संरचनात्मक परिवर्तन करने से पहले, भवन की नींव की सामर्थ्य की जाँच कर लेनी चाहिये।
(vi) भवन जिस उद्देश्य के लिये बना है, उसी काम में लाना चाहिये। आवासीय भवनों को सार्वजनिक भवनों में परिवर्तन करते समय, सभी आवश्यक सावधानी बरतनी चाहिये।
(vii) अगल-बगल सटी हुई संरचनाओं के कारण, भवन विशेष को क्षतिग्रस्त होने से बचाना चाहिये।
(viii) अनुरक्षण कार्य के कारण भवनवासियों तथा आस-पड़ोस को सामान्य सुरक्षा प्रभावित नहीं होनी चाहिये।

प्रश्न 4—भवन अनुरक्षण हेतु लोक निर्माण विभाग द्वारा अपनायी जा रही पद्धतियों का वर्णन कीजिये।

उत्तर—मरम्मत कार्य (Repair Work)

सार्वजनिक विभाग के अनुसार सरकारी भवनों का मरम्मत कार्य निम्न चार स्तर का होता है—

(i) दैनिक मरम्मत (Day to Day Repairs-D.R.),
(ii) वार्षिक मरम्मत (Annual Repairs–A.R.),
(iii) चतुर्वर्षीय मरम्मत (Quadrennial Repairs-Q.R.),
(iv) विशेष मरम्मत (Special Repairs–S.R.)।

विस्तृत वर्णन निम्न है—

(i) **दैनिक मरम्मत**—भवन में विभिन्न अनिवार्य सेवायें सुचारू रूप से बनी रहें, इसके लिये इनकी प्रतिदिन देखभाल व मरम्मत आवश्यक है। दैनिक मरम्मत के अन्तर्गत अवरूद्ध जल-पाइपों व नलों की सफाई, प्रवेश छिद्रों/निरीक्षण चैम्बरों की सफाई, टपकती जल-टोंटियों को बदलना, फ्यूज बल्बों तथा टूटे स्विचों को बदलना, पेड़ों के सूखे पत्तों तथा फुटपाथ से घास की सफाई आदि आते हैं।

(ii) **वार्षिक मरम्मत**—यह मरम्मत प्रति वर्ष (वर्ष में एक बार) की जाती है। वार्षिक मरम्मत के अन्तर्गत निम्न मरम्मती कार्य आते हैं—

(1) सफेदी तथा रंगीन पुताई,
(2) छतों की मरम्मत तथा छतों से घास-फूँस की सफाई (यह कार्य वर्षा-काल शुरू होने से पहले अवश्य हो जाना चाहिये),
(3) बरसाती नलों व गटर की सफाई,
(4) दरवाजे-खिड़कियों के टूटे काँच बदलना,
(5) फर्श की छोटी-मोटी टूट-फूट की मरम्मत,

engineer.net

(6) टूटे प्लास्तर की मरम्मत,

(7) रिसते जल व मलजल पाइपों व फिटिंग की मरम्मत।

उपरोक्त मरम्मती कार्यों की अवधि निम्न ली जाती है—

(1) सफेदी/डिस्टेम्पर/रंगीन पुताई = दो वर्ष

(2) पेन्ट कार्य = तीन वर्ष

(3) स्प्रिट पॉलिश = पाँच वर्ष

(4) जल-भण्डारण टंकी की सफाई तथा रोगाणुनाशन = छह माह

(5) पंखे की सफाई व ग्रीस देना = एक वर्ष

(6) सड़कों का पृष्ठ-प्रलेपन (Carpetting) = पाँच वर्ष

वार्षिक मरम्मत के लिये भवन की मूल लागत का 1% से 1·5% निर्धारित कर दिया जाता है। वार्षिक मरम्मत का कार्य, सम्बन्धित विभाग, यदि सक्षम है, स्वयं भी करवा सकता है।

(iii) **चतुर्वर्षीय मरम्मत**—यह मरम्मत चार वर्ष में एक बार की जाती है। इसके अन्तर्गत निम्न कार्य आते हैं—

(1) दीवारों पर सीमेन्ट पेन्ट-स्नोसम इत्यादि,

(2) लकड़ी तथा लोहे के कार्य पर रंग-रोगन, वार्निश इत्यादि,

(3) क्षतिग्रस्त टीप या प्लास्तर का नवीकरण।

(iv) **विशेष मरम्मत**—इस मरम्मत के लिये समय या अवधि का कोई बन्धन नहीं है। आवश्यक होने पर, सक्षम अधिकारी की अनुमति से यह मरम्मत कभी भी करायी जा सकती है। इसके अन्तर्गत प्रायः निम्न कार्य आते हैं—

(1) टूटी खिड़कियों व पल्लों को बदलना अथवा इनकी स्थिति में फेर-बदल करना,

(2) छत कँचियों की क्षतिग्रस्त चादरों की मरम्मत,

(3) वर्षा, बाढ़ से क्षति पहुँचे बटकों की मरम्मत,

(4) लैट्रिन की टूटी सीट, क्षतिग्रस्त वाशबेसिन, सिंक, टंकी, टूटी पाइप लाइन को बदलना,

(5) फ्यूज बल्बों/ट्यूबों को बदलना, जले पंखे की मरम्मत,

(6) छत पर नया सौलन रोधक आस्तर लगाना,

(7) अन्य कोई अनिवार्य मरम्मत।

विशेष मरम्मत इसलिये की जाती है कि भवन का अपक्षय यथासम्भव रूक जाये और यह पुनः मूल स्तर की सेवा प्रदान कर सके।

प्रश्न 5—'गुनाइटीकरण' क्या है?

उत्तर— गुनाइटीकरण द्वारा क्षतिग्रसत प्रबलित कंक्रीट प्रस्तम्भों/धरनों की मरम्मत

(Repairs of Damaged R.C.C. Columns/Beams)

क्षतिग्रस्त प्रबलित कंक्रीट धरनों, स्लैब व स्तम्भों को तथा इनकी सतही दरारों/फटानों से बाहर झाँकती प्रबलन छड़ों को गुनाइटीकरण द्वारा मरम्मत की जाती है। क्योंकि नई कंक्रीट पुरानी सैट हुई कंक्रीट से आसानी से चिपकती नहीं है, अतः गुनाइटीकरण ही उत्तम विकल्प रह जाता है।

सीमेन्ट मसाले अथवा महीन कंक्रीट को मशीन द्वारा उच्च दाब पर जैट की भाँति कंक्रीट अवयवों की सतह पर फैंक कर, दरारें, फटानों व गड्ढों को भरने को गुनाइटिंग या शॉटक्रीट (Shotcrete) कहते हैं। सरल भाषा में इसे ग्राउटिंग (Grouting) भी कहते हैं। गुनाइटिंग से जहाँ कार्य शीघ्र सम्पन्न होता है, वहाँ इसकी अभिलाग व सामर्थ्य भी उत्तम बनती है। गुनाइटिंग के लिये जो मशीन प्रयोग की जाती है, उसे सीमेन्ट गन कहते हैं।

गुनाइटिंग कार्य शुरू करने से पहले, यदि आवश्यक हो, अवयव की दोनों फलकों पर हल्की टोकें (Cut) लगा देनी चाहिये और अवयव को ऊपरी अचल भार से मुक्त कर देना चाहिये। मरम्मत कार्य निचले फर्श से शुरू करके ऊपरी फर्शों तक ले जाना चाहिये।

सर्वप्रथम कंक्रीट अवयव से ढीला सतही प्लास्तर/पपड़ी यदि कोई है, छीलकर हटा दी जाती है और ऊपरी सतहों को छैनी से एक सेमी की दूरी पर 6 mm गहरे टोंके (Cut) दिये जाते हैं, ताकि गुनाइट-प्लास्तर से अभिलाग बन जाये। बाहर से दिखायी देने वाली प्रबलन छड़ों को तार-ब्रुश से रगड़कर साफ कर लिया जाता है और जंग की पपड़ी निकाल दी जाती है। जंग खाई व क्षतिग्रस्त छड़ों के साथ नयी छड़ें, आवश्यक संख्या व लम्बाई में, बन्धक तार (Binding Wire) द्वारा बाँध दी जाती है, परन्तु दो प्रबलन छड़ों के मध्य 5 cm की रिक्ति बनी रहनी चाहिये ताकि उनमें कंक्रीट भरी जा सके। क्षतिग्रस्त भाग पर वर्फी-जाली (Expanded Metal), तार जाली अथवा छड़ें भी बाँधी जा सकती हैं। पुरानी छड़ों पर ब्रुश से सीमेन्ट घोल लगा देना चाहिये। यदि छड़ें अधिक संक्षारित हैं, उन पर काला जहाजी पेन्ट (Black Ship Paint) पोत देना चाहिये।

अब सीमेन्ट गन (Cement Gun) से सीमेन्ट बालू का घोल (1 : 2) उचित दाब (2–3kg/cm^2) पर अवयव की सतहों पर डाला जाता है। घोल-परत की मोटाई 50 mm से 100 mm रखी जाती है। सीमेन्ट घोल की परत के सैट हो जाने पर, अवयव को 10 दिन तक तराई की जाती है।

गुनाइटीकरण का निरीक्षण करने के बाद ही, खड़ों व पड़ी टेकों को हटाना चाहिये। तराई पूर्ण हो जाने के बाद ही अवयव पर पूर्ववत् भार आने दिया जाता है।

प्रश्न 6—भवन निर्माण में विभिन्न प्रकार के लेपों (प्लास्तर) का वर्णन कीजिये। *(UPBTE 2012, 13)*

उत्तर—बन्धक पदार्थ प्रयोग के अनुसार प्लास्तर (लेप) निम्न प्रकार के होते हैं—

(1) सीमेन्ट प्लास्तर। (2) चूना प्लास्तर। (3) सीमेन्ट चूना प्लास्तर। (4) गारे का प्लास्तर।

(1) **सीमेन्ट प्लास्तर**—सीमेन्ट प्लास्तर बाहरी व भीतरी दोनों सतहों पर किया जाता है। बाहरी सतह पर यह अधिक उपयुक्त है, क्योंकि यह जल रोधक होता है। सीमेन्ट प्लास्तर छतों की भीतरी सतह पर तथा विशेष प्रकार की फिनिशिंग के लिये भी किया जाता है।

(a) घटक—सीमेन्ट प्लास्तर में बन्धक के रूप में सीमेन्ट तथा अपमिश्रण के लिये बालू का प्रयोग किया जाता है। सीमेन्ट बालू का अनुपात 1 : 4, 1 : 5, 1 : 6 रखा जाता है। इसमें उचित मात्रा में पानी मिलाकर गाढ़ा लेप तैयार कर लिया जाता है। पानी मिलाने पर सीमेन्ट में जलायोजन की क्रिया होती है। अतः सीमेन्ट के सैट होने से पूर्व ही सीमेन्ट मसाले का प्रयोग कर लेना चाहिये।

(b) **सीमेन्ट प्लास्तर करने की विधि**—नयी सतहों पर सीमेन्ट प्लास्तर करने के चरण निम्न हैं—

(i) सतह तैयार करना, (ii) मसाला लीपना, (iii) तराई।

(i) सतह तैयार करना—दीवार की सतह पर प्लास्तर दृढ़ता से सटा रहे, इसके लिये चिनाई के जोड़ों को 13 mm गहराई तक किसी हुक से खुरच देना चाहिये। दीवार की सतह के उभरे भागों व किनारों को हथौड़े व करनी से झाड़कर समतल कर दिया जाता है। पूरी सतह को तार के ब्रुश से अच्छी प्रकार रगड़कर साफ कर दिया जाता है। प्लास्तर करने से पहले सतह को पानी से भली-भाँति तर कर लेना चाहिये, ताकि मसाला सतह को पकड़ ले।

(ii) मसाला लीपना—बाहरी दीवारों पर प्लास्तर, ऊपरी खण्ड से शुरू करके नीचे की ओर ले जाया जाता है। जहाँ सीलिंग पर प्लास्तर करना हो, वह कार्य अंदर की दीवारों पर प्लास्तर करने से पहले किया जाता है। साधारणतः सीमेन्ट प्लास्तर एक कोट (12 mm) में किया जाता है। प्लास्तर दो चरणों में किया जाता है। पहले चरण को रेन्डरिंग कोट तथा दूसरे चरण को फिनिशिंग कोट कहते हैं। प्लास्तर करते समय प्लास्तर की मोटाई व सतह को सीधपट्टी व साहुल से चैक करते रहना चाहिये।

(iii) प्लास्तर सतह की तराई—भली-भाँति प्लास्तर सैट हो जाने पर 10 दिन तक लगातार पानी डालकर तराई की जाती है। ताकि प्रसाला अपनी सामर्थ्य ग्रहण कर सके।

(2) **चूना प्लास्तर**—प्लास्तर में जब बन्धक के रूप में चूना होता है, तब यह चूना प्लास्तर कहलाता है। इसके लिये अच्छी प्रकार से बुझा हुआ चूना ही प्रयोग किया जाता है।

(a) घटक—चूना प्लास्तर में बन्धक के रूप में बुझा हुआ चूना तथा अपमिश्रण के रूप में सुर्खी, राखी व बालू प्रयोग की जाती है। मसाले में चूना व अपमिश्रण का अनुपात 1 : 2 रखा जाता है। जब दो अपमिश्रण का प्रयोग करना हो तो यह अनुपात 1 : 1 रखा जाता है।

चूना प्लास्तर को अधिक सामर्थ्य प्रदान कराने के लिये इसमें 1.5 kg गुग्गुल तथा 1 kg सीन प्रति घन मीटर मसाले के अनुपात में मिलानी चाहिये। इससे प्लास्तर में दरार नहीं पड़ती है।

civilguru.net

(b) चूना प्लास्तर करने की विधि—चूने का प्लास्तर भी सीमेन्ट प्लास्तर की भाँति किया जाता है। क्योंकि सूखने पर सुर्खी सिकुड़ती है, अत: सैटिंग काल में प्लास्तर की सतह को लकड़ी की थापी से पीटा जाता है। सिकुड़न रोकने के लिये बालू मिलायी जाती है। चूने के प्लास्तर को दो कोटों में किया जाता है। पहले कोट को 12 mm व दूसरे कोट को 20 mm रखते हैं। जहाँ दूसरा कोट करना हो वहाँ पहले कोट की सतह खुरदरी रखी जाती है। थापी व बास से प्लास्तर सतह की पिटाई करते समय बेल-फूट, गुड़-पानी के घोल को छिड़कने से सतह जल रोधक बन जाती है। सतह की फिनिशिंग करने के लिये चूने की पट्टी प्रयोग की जाती है। इससे सतह चिकनी व सुन्दर बन जाती है।

(c) प्लास्तर की तराई—प्लास्तर कार्य पूर्ण हो जाने के बाद सतह पर सात दिन तक पानी छिड़ककर तराई की जाती है।

(3) सीमेन्ट चूना प्लास्तर—सीमेन्ट को चूने में मिलाकर प्लास्तर करने से यह शीघ्र जम जाता है। सील को रोकता है। इसका अनुपात साधारणत: (1 : 1 : 6) रखा जाता है। पहले चूना और बालू को मिला लिया जाता है। फिर उसमें सीमेन्ट मिलाकर पानी डाला जाता है। यह मसाला आधा घण्टे के भीतर प्रयोग कर लेना चाहिये अन्यथा सीमेन्ट सैट होने लगता है।

(4) मिट्टी गारे का प्लास्तर—गारे का प्लास्तर कच्ची चिनाई व पक्की चिनाई की दीवारों पर किया जाता है। गारे में कुछ अन्य जलरोधक पदार्थ मिलाकर जलरोधक बनाया जाता है।

जलरोधक पदार्थ हैं—(i) मिट्टी, साफ व कंकर रहित होनी चाहये, (ii) भूसा, (iii) गोबर, (iv) जनता इमल्शन या बिटुमिन कट बैक या द्रव-एस्फाल्ट।

अब साफ और महीन मिट्टी को गड्ढा खोदकर उसमें भर देते हैं तथा मिट्टी में पानी डालकर फावड़े से अच्छी प्रकार गोड़ी करते हैं। यह मिट्टी पाँवों से भी रौंदी जाती है। अब इसमें 60 kg/m^3 की दर से भूसा डालकर फावड़े से खूब मिलाया जाता है और सात दिनों तक इसी प्रकार भीगा रहने देते हैं। प्लास्तर कार्य शुरू करने से पहले इसमें जनता इमल्शन, द्रव-एस्फाल्ट या कट-बैक उचित मात्रा में मिलाया लिया जाता है।

जिस दीवार पर गारा प्लास्तर करना हो उसकी सतह को ब्रुश या झाड़ू से साफ कर लिया जाता है। फिर सतह पर पानी छिड़ककर, उसे गीला कर लिया जाता है। कन्नी व सीध-पट्टी की सहायता से प्लास्तर किया जाता है।

प्रश्न 7—निम्न पर टिप्पणी लिखिये। *(UPBTE 2005)*

(i) प्लास्तर में फफोले, (ii) Shoring, (iii) Under Pinning

उत्तर—(i) प्लास्तर में फफोले—प्लास्तर सतह में फफोले होना ही प्लास्तर में फफोले कहलाता है। यह दोष चूना प्लास्तर में पाया जाता है। फफोले से प्लास्तर उखड़ने लगता है।

(ii) Shoring—संरचना के किसी असुरक्षित भाग को अस्थायी रूप से आलम्बन देने के लिये बनायी गयी अस्थायी संरचना Shoring कहलाती है। यह भवन की किसी कमजोर दीवार को तोड़कर बनाई जाती है या जब किसी भवन की किसी दीवार की बाहर की तरफ झुकने की प्रवृत्ति दिखाई पड़े तो टेकबन्दी की जाती है।

(iii) Underpinning—किसी निर्मित भवन की अधिरचना को प्रभावित किये बिना भवन की खराब नींव को बदलने या नींव को आवश्यकतानुसार अधिक मजबूत बनाने के लिये अण्डरपिनिंग की जाती है। अण्डरपिनिंग में दीवार में थोड़ी-थोड़ी दूरी पर छेद बना लिये जाते हैं और इन छेदों में क्षैतिज धरन डालकर उनकी दीवार के दोनों तरफ ऊर्ध्वाधर टेकों पर आधारित कर दिया जाता है। अण्डरपिनिंग करने से संरचना की नींव भार मुक्त हो जाती है। अण्डरपिनिंग छोटी-छोटी लम्बाइयों 1.25 मीटर से 2.0 मीटर में की जाती है।

प्रश्न 8—पेन्ट क्या होता है? पेन्ट कार्य में दोष तथा उसका उपचार बताइये। *(UPBTE 2013)*

उत्तर—पेन्ट तथा प्रलेपन (Painting)—पेन्ट भवनों को आकर्षक बनाते हैं और इनकी धूप, वर्षा, नमी, धूली, ताप इत्यादि से सुरक्षा करते हैं। पेन्ट कार्य की आयु, भवन की स्थिति व उपयोग के अनुसार 2 से 5 वर्ष ली जाती है, परन्तु कुछ इससे पहले ही नष्ट होने लगते हैं।

(a) पेन्ट कार्य में दोष तथा उपचार

(i) पेन्ट का चटकना—पेन्ट में दूषित तेल का प्रयोग करने से अथवा एक कोट के सूखने से पूर्व ही उस पर दूसरा कोट चढ़ाने से पेन्ट सतह पर महीन रेखायें (चटकन) पड़ जाती हैं। पेन्टिंग में सावधानी रखने पर इसका चटकना रोका जा सकता है।

(ii) दरारें पड़ना—असंशोषित लकड़ी पर पेन्ट करने पर, अधिक मोटी पेन्ट की परत चढ़ाने पर अथवा पेन्ट में अधिक मात्रा में शोषक मिलाने पर पेन्ट में दरारें पड़ने लगती हैं। दरार खाये पेन्ट को उतारकर नया पेन्ट देना चाहिये।

6-6-6-60

(iii) फफोले पड़ना—अन्तिम कोट में अत्यधिक तेल मिलाने पर अथवा तेज धूप के कारण पेन्ट कार्य में फफोले पड़ जाते हैं। दोषपूर्ण पेन्ट को उतारकर नया कोट करना चाहिए।

(iv) पेन्ट का झड़ना—पेन्ट में कम मात्रा में तेल होने से यह ऊँगलियों अथवा सूखे कपड़े की रगड़ से छूटने लगता है। अत: पेन्ट तैयार करते समय उपयुक्त मात्रा में तेल डालना चाहिए।

(v) चमक खो देना—अधिक मात्रा में शोषक डालने से अथवा पुराने पेन्ट का प्रयोग करने से पेन्ट कार्य में चमक नहीं आती है। चमकरहित पेन्ट को उतारकर नया पेन्ट कर देना चाहिए।

(b) पुरानी सतह पर पेन्ट करना

(i) लकड़ी की पुरानी सतह पर पेन्ट करना—लकड़ी की पुरानी सतह पर पेन्ट करने से पहले, पुराने पेन्ट को खुरच कर निकाल दिया जाता है। इसके लिए ब्लो-लैम्प प्रयोग किया जाता है अथवा रासयनिक घोलों के प्रयोग से पुराना पेन्ट छुड़ाया जाता है। पुराना पेन्ट खुरचते समय सतह को हानि से बचाना चाहिये। इस पर रेगमाल रगड़कर सतह को साफ तथा समतल कर लेना चाहिए। पहले एक कोट प्राइमिंग (अस्तर कोट) किया जाता है। जब अस्तर कोट सूख जाये तो इसके ऊपर पुन: रेगमाल रगड़ा जाता है। यदि कोई छिद्र दिखाई पड़े, तो उसमें पुटीन भर दी जाती है। फिर इस सतह पर एक कोट वांछित रंग का किया जाता है। पुराने कार्य पर साधारणत: पेन्ट का एक कोट ही पर्याप्त रहता है।

(ii) लोहे की पुरानी सतह पर पेन्ट करना—लोहे की सतह पर से पहले पुराना पेन्ट खुरचकर अलग कर दिया जाता है। पेन्ट को हटाने के लिए वर्नर अथवा विलायकों की सहायता ली जाती है। बुझा हुआ चूना तथा सोडे को मिलाकर सतह पर लगाया जाता है और सतह को पानी से साफ कर लेते हैं। जब सतह सूख जाये तो वांछित रंग का एक या दो कोट कर दिया जाता है।

प्रश्न 9—सफेदी व रंगीन पुताई क्या है?

उत्तर— सफेदी व रंगीन पुताई (White and Colour Washing)

सफेदी दीवारों व अन्तश्छद को प्रकाशित करती है, जबकि रंगीन पुताई इन्हें आकर्षक बनाती है। सफेदी/रंगीन पुताई की आयु एक वर्ष ही ली जाती है। बाहरी दीवारों पर वर्षा के कारण सफेदी धुल जाती है।

प्लास्तर के पूर्णत: सूख जाने पर ही सफेदी करनी चाहिये। नमी वाले स्थानों पर यह पपड़ी बनकर उखड़ने लगती है।

सफेदी की चौंध कम करने के लिए इसमें नील मिलाया जाता है। रंगीन पुताई करने से पहले, आधार कोट के रूप में सफेदी का कोट किया जाता है। सफेदी तथा रंगीन पुताई में सरेस मिलाने पर, यह सतह से कम छूटती है। सफेदी में यदि धब्बे अथवा कूची के निशान दिखायी पड़ें, तो कार्य पर ठीक ढंग से एक कोट सफेदी और कर देनी चाहिए।

एक कमरे के लिए सफेदी/रंगीन पुताई का घोल, कोटों की संख्या के अनुसार पर्याप्त मात्रा में एक बार बना लेना चाहिए ताकि पुताई में समान शेड प्राप्त हो सके।

प्रश्न 10—डिस्टेम्पर क्या है? इसके मुख्य दोष, कारण तथा उपचार बताइये।

उत्तर—डिस्टेम्पर (Distemper)—यह चूने के रंग होते हैं, जो भीतरी सतहों पर किए जाते हैं। डिस्टेम्पर वर्षा व नमी से नष्ट हो जाता है, अत: इसे बाहरी सतहों पर नहीं करना चाहिए। डिस्टेम्पर कार्य के मुख्य दोष, कारण तथा उपचार निम्न हैं—

(i) डिस्टेम्पर का छूटना—ऊँगली से रगड़ने पर अच्छा डिस्टेम्पर छूटना नहीं चाहिये। यदि यह छूटता है तो इसमें आसंजक (सरेस आदि) की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। डिस्टेम्पर में फेवीकोल (Fevicole) (ट्रेड नाम) मिलाने से इसकी पकड़ अच्छी हो जाती है।

(ii) डिस्टेम्पर की सही शेड न आना—डिस्टेम्पर का कोट करने से पहले सतह पर सफेदी का एक या दो कोट करना आवश्यक है; तभी डिस्टेम्पर का सही शेड आ पाता है। डिस्टेम्पर की क्वालिटी ठीक न होने पर भी डिस्टेम्पर का शेड बदल जाता है। ऐसे डिस्टेम्पर को खुरच कर पुन: अच्छी प्रकार नया कोट करें।

(iii) डिस्टेम्पर का झड़ना—जब सतह पर नमी विद्यमान हो तो डिस्टेम्पर इस पर टिक नहीं पाता और पपड़ी के रूप में झड़ने लगता है। सीलन ग्रस्त सतहों पर डिस्टेम्पर नहीं करना चाहिये।

(iv) शेड में अन्तर आ जाना—जब कमरे के लिए पर्याप्त घोल एक बार में तैयार नहीं किया जाता, तो दोबारा घोल बनाने पर शेड में अन्तर आ जाता है। अत: एक कमरे के लिए पर्याप्त घोल एक बार ही बना लेना चाहिए।

civilguru.net

15 निर्माण कार्यों पर सुरक्षा (Safety in Construction)

प्रश्न 1—खुदाई कार्य करते समय कौन-कौन से सुरक्षात्मक उपाय किये जाते हैं?

उत्तर—खुदाई कार्य—नींव तथा अन्य खुदाई कार्य बड़े ध्यान व सावधानी से करना चाहिये। अन्धाधुन्ध खुदाई करने से भूमिगत संचार-लाइनों-टेलीफोन, विद्युत केबलों, जल व गैस पाइप लाइनों आदि को क्षति पहुँच सकती है। जब नासमझ श्रमिक के हाथ में गैंती आ जाती है, वह अपने आप को तीस-मार खाँ समझते हुये, नीचे देखे बगैर इसे चलाता जाता है, जिससे संचार लाइनें क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। इस कारण कई बार उसका अपना जीवन भी खतरे में पड़ जाता है। अब खाना पकाने वाली गैस के पाइप भी भूमि के अन्दर डाले जाते हैं, अतः खुदाई कार्य में अधिक सावधानी रखनी आवश्यक है।

सावधानी—खुदाई कार्य शुरू करने से पहले स्थल-प्रभारी को उस क्षेत्र का मानचित्र (Site Plan) देखकर, भूमिगत संचार लाइनों की स्थिति की सही जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिये और खुदाई-श्रमिकों की निगरानी पर एक निरीक्षक/मेट लगा देना चाहिये।

स्थल सफाई/निशानदेही/खुदाई करते समय बैपैले काँटों/साँपों से सावधान रहना चाहिये क्योंकि आप उनके ठिकानों/अड्डों पर आक्रमण कर रहे हैं। श्रमिक गम-बूट, दस्ताने (Gloves) आदि पहन कर खुदाई कार्य करें। कार्य स्थल पर प्राथमिक-उपचार की व्यवस्था रखनी चाहिये अथवा चोटिल श्रमिक को नजदीकी अस्पताल में पहुँचाने की व्यवस्था होनी चाहिये। मृदा-खुदाई के समय निम्न स्थितियों के कारण संकट आ सकते हैं।

(a) **ढीली-दलदली मृदा में दो मी० से अधिक गहरी खुदाई**—ऐसी मृदा में, खाई की पार्श्व फलकें सीधी खड़ी नहीं रह पाती हैं और अकस्मात् ढह जाती हैं। इस कारण श्रमिक/औजारों के खाई में दब जाने का भय बना रहता है।

सावधानी—नींव को सीढ़ीनुमा खत्तकों (Steps) में काटें और खाई की तख्तावन्दी करें।

(b) **जलग्रस्त क्षेत्र अथवा फिसलन-भूमि में कार्य**—कार्यस्थल से पम्प लगाकर पानी निकाल दें और भूमि को सूखने दें। फिसलन-भूमि पर 10-15 cm मोटी बालू की परत फैला दें अन्यथा लकड़ी के पटरे बिछा दें।

(c) **चट्टान-कटाई व विस्फोटन कार्य**—विस्फोटन के समय 180 मी की दूरी तक, क्षेत्र से सभी श्रमिकों (प्लीता वाले को छोड़कर) को हटा दें। प्लीता (Fuse) की लम्बाई पर्याप्त रखें ताकि इसे आग दिखाने और विस्फोट होने के मध्य पर्याप्त समय मिल जाये और प्लीता वाला भागकर सुरक्षित स्थान पर चला जाये।

(d) **प्रवेश-छिद्र (Main Hole) की खुदाई**—कार्यस्थल की काँटेदार तार लगाकर अथवा खाली ड्रम खड़े करके, उपयुक्त नाकाबन्दी कर लें और रात के समय चौकीदार व लाल-बत्ती की व्यवस्था करें।

प्रश्न 2—भवन निर्माण में दुर्घटनाओं को रोकने/नियंत्रित करने के क्या उपाय हैं?

उत्तर— **दुर्घटनाओं को रोकने/नियन्त्रित करने के उपाय**
(Remedies to Avoid Accidents)

(i) श्रमिक को काम पर रखने से पहले उसकी शारीरिक स्थिति व मानसिक अवस्था की जाँच कर लें।
(ii) विशिष्ट व जोखिमी कार्य पर अनुभवी श्रमिक को वरीयता दें।
(iii) श्रमिक को मशीन/औजार के समेचित हस्तन के प्रति सभी आवश्यक जानकारी/सावधानी से अवगत करा दें।
(iv) श्रमिक के कार्य/प्रगति/व्यवहार पर नजर रखने के लिये, अनुभवी अधिदर्शक नियुक्त करें।
(v) कार्य-स्थल पर पर्याप्त प्रकाश, संवातन उपलब्ध हो।
(vi) कार्यस्थल पर अनावश्यक भीड़ मत एकत्र होने दें और श्रमिकों को ठाली मत रखें।
(vii) कठिन/जोखिम भरे कार्य पर श्रमिक के कार्य-घण्टे घटा दें।
(viii) कार्यस्थल पर मशीन के सभी चल-अंगों को चिन्हित कर दें ताकि श्रमिक उनसे सुरक्षित दूरी बनाये रखें।

(ix) कार्य-क्षेत्र में श्रमिकों की सुरक्षा सम्बन्धी सभी आवश्यक बातें/निर्देशक नोटिस के रूप में लिखकर टाँग दें।
(x) दुर्घटना होने पर तुरन्त मशीन/विद्युत सप्लाई बन्द कर दें और पीड़ित को प्राथमिक उपचार दें।

प्रबन्धकों के लिये—

(i) श्रमिकों के लिये सुरक्षा अभियान का आयोजन करें।
(ii) सुरक्षा कर्मचारियों/प्रभावी को नियुक्त करें।
(iii) कार्यस्थल/क्षेत्र को साफ-सुथरा रखें। सभी सामग्री, मशीनें अपनी-अपनी निर्धारित स्थान/स्थिति में रहनी चाहिये।
(iv) प्राथमिक उपचार की सन्तोषजनक व्यवस्था रखें।
(v) बीमा कम्पनियों द्वारा श्रमिकों का बीमा करायें, जिसका कुछ अंशदान प्रबन्धक/संस्थान अपने दफ्तर से अदा करें।

प्रश्न 3—एक क्षतिग्रस्त/अनावश्यक भवन को ढाहते/गिराते समय कौन-से सुरक्षा नियमों का पालन आवश्यक है?

उत्तर— **क्षतिग्रस्त/अनावश्यक भवन को ढाहते/गिराते समय सुरक्षा नियम**

(1) **स्वीकृति**—किसी भी भवन को गिराने की स्वीकृति नगरपालिका/क्षेत्र के नियत प्राधिकारी से, कार्य शुरू करने से पहले अवश्य प्राप्त कर लें।

(2) **अड़ोस-पड़ोस की सुरक्षा**—आस-बगल के सटे हुए भवनों की पूर्ण सुरक्षा करके ही प्रस्तावित भवन के ढाहने का कार्य हाथ में लेना चाहिए।

(3) **बेराबन्दी**—जिस भवन को गिराना हो, उसके चारों ओर काँटेदार तार लगाकर बेराबन्दी कर दें ताकि अवांछनीय लोग वहाँ एकत्रित न होने पायें। स्थल पर नियन्त्रण के लिए चौकीदार की नियुक्ति कर लें।

(4) **भवन सेवायें**—ढाहने का कार्य शुरू करने से पहले सभी पानी, बिजली, सीवर, गैस के कनेक्शन काट दें। यदि कोई सप्लाई आवश्यक हो, तो उसके लिए अस्थायी कनेक्शन ले लें।

(5) **मलबा**—भवन गिराने पर निकलने वाले मलबे/मैटीरियल के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित कर दें। जो सामग्री पुनः काम आ सकती है, उसे ध्यान से छाँटकर अलग ढेर लगा लें।

(6) **अनुक्रमण**—ढाहने का कार्य क्रमबद्ध शुरू करें। पहले ऊपर की मंजिल/फर्श लें। उसे पूर्ण गिरा लें। फिर नीचे का तल लें। इसी क्रम में निचले तलों पर उतरते जायें।

(7) **प्रक्रिया**—छत के गर्डरों के नीचे आलम्ब देकर उन्हें उखाड़ें। किसी घरन को हवा में मत लटकने दें। दीवारों की चिनाई रद्दा-दर-रद्दा उखाड़ें। लापरवाही के कारण चिनाई का बड़ा पिण्ड अकस्मात नीचे गिरकर साथ वाले भवन को क्षति पहुँचा सकता है।

(8) **डाटें गिराना**—डाट को गिराते समय, इसके ऊपर खड़े न हों। पार्श्व में पेड़ बाँधकर और उस पर खड़े होकर ही डाटों को गिराना शुरू करें।

(9) **छत गिराना**—ऊपरी छत को गिराते समय नीचे के सभी फर्शों के नीचे टेकें लगा दें।

(10) **बाहरी दीवारें**—बाहरी दीवार को गिराते समय, इसकी विभिन्न ऊँचाई पर बाँसों-पटरों के मजबूत रोक प्लेटफार्म बना दें ताकि भूमिगत पर कार्य करने वाले श्रमिकों को ऊपर से गिरते मलबे से कोई क्षति न पहुँचे।

(11) **मलबा गिराना**—मलबे को ऊँचाई से मत फेंकें। इसे ड्रमों में भरकर रस्सियों द्वारा नीचे भूमि पर उतार लें अथवा प्रवेणी (Ramp) या शूट (Chute) की व्यवस्था करें।

(12) **मलबा हटाना**—मलबे को स्थल से लगाकार हटाते रहें ताकि नये मलबे के लिए स्थान बनता रहे।

(13) **अस्थिर अवयव**—भवन के ऐसे भागों को जो अस्थिर हो गए हैं और जिनके अकस्मात गिरने का भय है, की तरफ पहले ध्यान देना चाहिए। यदि उनको बाद में गिराना है, तो उस समय तक उनको रोक/टेक लगाकर रखना चाहिए।

(14) **श्रमिक सुरक्षा**—ढाहने के कार्य में लगे सभी श्रमिक सुरक्षा के आवश्यक उपकरण पहनकर कार्य करें। ऊपर से गिरते हुए ईंट-पत्थर, लटकते हुए गर्डर, लिन्टल आदि से सावधान होकर कार्य करें।

sguru.net

(15) स्थल सफाई—भवन को गिराने तथा सभी मलबा हटा लेने के बाद स्थल की सफाई करके समतल कर देना चाहिये।

प्रश्न 4—भवन कार्य में प्रयोग आने वाले मुख्य निर्माण उपकरणों को सूचीबद्ध कीजिये।

उत्तर—मुख्य निर्माण उपकरण हैं—

(1) ट्रक (Truck) (2) ट्रैक्टर (Tractor)
(3) डोजर (Dozer) (4) शावल (Shovel)
(5) ड्रेग लाइन (Drag Line) (6) ग्रेडर (Grader)
(7) डम्पर (Dumper) (8) सड़क रोलर (Road Roller)
(9) कंक्रीट मिश्रक (Concrete Mixer) (10) कम्पक (वाइब्रेटर) (Vibrator)
(11) सीमेन्टगन (Cement Gun) (12) चल पट्टा (Belt Conveyor)
(13) उच्चल उपस्कर (Hoisting Equipment) (14) क्रेन (Cran) (15) गेन्ट्री (Gantry)
(16) पाइल गाड़ने के उपस्कर (Pile Driving Equipment)।

प्रश्न 5—भवन निर्माण में निम्न मशीनों का काम बताइये।

(i) बुलडोजर **(ii) डम्पर**

उत्तर—(i) बुलडोजर (Bulldozer)—ट्रैक्टर के आगे एक वक्राकार लम्बा ब्लेड लगाकर यह संयन्त्र बनाया जाता है। डोजर ऊँची-नीची भूमि को काटकर समतल करने, स्थल सफाई व मिट्टी समेटने के काम आता है। अधिक प्रचलित मशीन, बुलडोजर के नाम से जानी जाती है। इसका ब्लेड आवश्यकतानुसार ऊपर-नीचे सरकाया जा सकता है।

(ii) डम्पर (Dumper)—यह विशेष प्रकार का ट्रक होता है, जिसका पिछला भाग एक हाइड्रालिक चालित पिस्टन द्वारा ऊपर उठाया जा सकता है। इस प्रकार इसे तिरछा करके बड़ी सरलता व तेजी से खाली किया जा सकता है।

प्रश्न 6—किराया निर्धारण से क्या तात्पर्य है? इसका निर्धारण कैसे होता है?

उत्तर—किराया निर्धारण (Rent Fixation)—किसी व्यक्ति द्वारा, किसी अन्य की भूमि का विधिवत् इस्तेमाल करने पर उसे सम्पत्ति-मालिक को वार्षिक (अथवा मासिक) दर पर भुगतान करना होता है, जिसे किराया कहते हैं।

किराया दर इस प्रकार निर्धारित करनी चाहिए कि भवन स्वामी को अपने धन का उचित लौट (Return) मिल सके और किरायेदार के लिए न्यायसंगत हो।

मानक किराया निर्धारण की निम्न दो विधियाँ मान्य हैं—

(a) पहली विधि में कुल पूँजीगत लागत का 6% वार्षिक किराया माना जाता है। पूँजीगत लागत में निम्न व्यय जोड़े जाते हैं—

(i) संरचना की निर्माण लागत,
(ii) जल आपूर्ति, स्वच्छता तथा विद्युत फिटिंग पर किया गया व्यय,
(iii) भवन चारदीवारी, गेट तथा भीतरी सड़क/खड़ंजा का निर्माण व्यय।

पूँजीगत लागत में भूमि (प्लाट) का मूल्य नहीं जोड़ा जाता। यह विधि 1922 के पश्चात् निर्मित अथवा किराये पर दी गयी सम्पत्ति के लिये है।

(b) दूसरी विधि में कुल पूँजीगत लागत का 6% ब्याज ज्ञात करके, इसमें वार्षिक व विशेष मरम्मत व्यय तथा समस्त कर जोड़े जाते हैं।

उपरोक्त दोनों विधियों से ज्ञात किराया में जो न्यूनतम होता है। उसे मानक किराया के रूप में स्वीकार किया जाता है।

16 भौम जल अवक्षय तथा वर्षा जल संचयन (Ground Water Depletion & Rain Water Harvesting)

प्रश्न 1—भौम जल क्या होता है? इसकी क्या विशेषतायें हैं?

उत्तर—भौमजल (Ground Water)—पृथ्वी पर सभी जलों का स्रोत वर्षा है। वर्षा जल का एक बड़ा भाग अपवाह जल (Run off) के रूप में, नदी-नालों में बहता हुआ समुद्र में जा पड़ता है। कुछ जल का वाष्पीकरण हो जाता है। वर्षा जल का जो भाग मृदा की सरन्ध्रता के कारण, रिसता हुआ अथवा भूमि की दरारों (Cracks), छिद्रों (Crevices) तथा फटानों (Fissures) में घुसकर अव: भूमि में चला जाता है, उसे भौम जल (Ground Water) कहते हैं। इस जल की मात्रा कुल वर्षा जल का 10 से 25% ली जाती है।

भौम जल की विशेषतायें (Merits of Ground Water)—ये विशेषतायें निम्न हैं—

(i) भौमजल, जलापूर्ति का विश्वसनीय तथा दीर्घकालीन स्रोत है। इस जल पर क्षेत्र के सूखा-पड़ने का प्रभाव नहीं पड़ता है।

(ii) भौमजल साफ व स्वच्छ होता है और बीमारी फैलाने वाले जीवाणुओं से मुक्त होता है।

(iii) यह प्रदूषण-रहित होता है। उपयोग से पूर्व इसके शुद्धिकरण की कम आवश्यकता पड़ती है।

(iv) भौमजल सर्वत्र उपलब्ध है और इसका दोहन सस्ता पड़ता है।

(v) आवश्यकता पड़ने पर, इसे तुरन्त निकाला जा सकता है। इसके लिये आकाश में मेघों के आने की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती है और 'इन्द्र देव' को पुकारना नहीं पड़ता है।

(vi) सूखाग्रस्त क्षेत्रों में भौमजल ही जीवित रहने का आधार है। नदियाँ-तालाब सूख जाने पर भी, अव:भूमि में पर्याप्त मात्रा में जल मिल जाता है।

(vii) भौमजल की मात्रा, सतही पानी से अधिक है। यह एक ऐसा अदृश्य-आरक्षित भण्डार (Reserve Stock) है, जो प्रकृति ने इसी ग्रह पर मानव को भेंट किया है।

प्रश्न 2—भौम जल भरण की मुख्य कृत्रिम विधियाँ क्या हैं?

उत्तर—भौमजल पुन: भरण की मुख्य कृत्रिम विधियाँ निम्न हैं—

(i) अपवाह क्षेत्र में रोक बन्धे बनाकर (By Constructing Check Dams)
(ii) सूखे पड़े कूपों/पोखरों में आवाह जल भरकर (By Reacharging Dry and Abandoned Wellsand Ponds)
(iii) सघन वनरोपन द्वारा (By Afforestation)
(iv) नहर सिंचाई अपनाकर (By Switching to Canal Irrigation)
(v) नगरों में खुले-क्षेत्रों का कंक्रीटन रोककर (By Checking Concreting of Open Spaces in Cities)
(vi) पक्के क्षेत्रों में नये पोखरों/जलाशयों का निर्माण करके (By adopting Rain Water Harvesting in Built-Up Areas)
(vii) ग्रामीण क्षेत्रों में नये पोखरों द्वारा (By Constructing of New Ponds in Villages)
(viii) जल खपत पर नियन्त्रण लगाकर तथा वेकार जल को शोधित करके (By Controlling Water Consumption and Recycling Waste-water)।

प्रश्न 3—भौमजल के पुन: भण्डारण के क्या लाभ हैं?

उत्तर—भौमजल पुन: भरण के लाभ (Benifits of ground water recharge)—भौम जल पुन: भरण (Recharge) के लाभ निम्न हैं—

(i) धरती पर सतही जल की कमी होने पर अव: भूमि में जल उपलब्ध होता है।

civilguru.net

(ii) भौम जल एक स्थायी जल-बैंक है, जब भूमि पर कहीं से जल न मिले, भूमि खोदकर जल निकाल लें।

(iii) लम्बे समय तक वर्षा न होने पर अथवा नदियों-तालाबों के सूख जाने पर भी भौम जल सदा उपलब्ध रहता है।

(iv) भूमि जल-तल नीचे नहीं गिरने पाता है, बल्कि यह ऊपर आ जाता है।

(v) भौमजल उपलब्ध होने पर, कुओं के सूखने का भय जाता रहता है।

(vi) अत्यधिक गहरे नलकूप लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(vii) भौम जल शुष्क व साफ़ होता है, क्योंकि भूमि की परतों में रिसते समय यह स्वत: फिल्टरित हो जाता है।

(viii) सड़कों, पार्कों व छतों से फालतू पानी अव: भूमि में भेजकर, नगर को बाढ़ ग्रस्तता से बचाया जा सकता है।

(ix) भौम जल पुन: भरण के निर्माण सरल प्रकार के और मितव्ययी होते हैं। पुन: भरण निर्माण कार्य पर लगभग प्रति 1000 लीटर पर कुल 1·0 से 1·50 रुपये का ही खर्च आता है।

(x) अव: भूमि में जल का भण्डारण पर्यावरण के अनुकूल है।

(xi) भूमि में रिसते समय फिल्टरित होता सतही जल, भौम जल में मिलकर, इसकी कठोरता तथा अन्य दोषों को कम करता है।

(xii) बाढ़ वाले तेज़ बहते पानी को रोककर अव:भूमि में डालने पर, सतही खेतीहर मृदा का अपरदन (Erosion) रूक जाता है।

प्रश्न 4—वर्षा जल संचयन (Rain Water Harvesting) क्या है? इसकी आवश्यकता क्या है? *(UPBTE 2009)*

उत्तर—वर्षा जल संचयन (Rain Water Harvesting)—नगरों, कस्बों, ग्रामों में भवनों की छतों, लान, सड़कों, पार्कों, मैदानों से बाहर आता वर्षा जल नालियों/सीवरों में बेकार बह जाता है। क्षेत्र में वर्षा की तीव्रता को देखते हुए, यह बरसाती जल बड़ी मात्रा में होता है। इस बरसाती पानी को सतही नालियों द्वारा एकत्र करके, अव: भूमि में अन्त: स्रवण क्रिया द्वारा भौमजल में मिलने दिया जाता है। इसे ही **वर्षा जल संचयन** कहते हैं।

वर्षा जल संचयन की आवश्यकता (Necessity of Rain Water Harvesting)—वर्षा जल संचयन निम्न कारणों से आवश्यक है—

(i) भौम जल स्तर को नीचे गिरने से रोकने के लिये।

(ii) शहरी क्षेत्रों में पेयजल की लगातार बढ़ती माँग को पूरा करने के लिये, जब सतही जल स्रोत नगरों की आवश्यक जल माँग पूरी करने में सक्षम न हों।

(iii) सड़कों तथा खुले क्षेत्रों को बाढ़-मुक्त रखने के लिये।

(iv) बरसाती नाले-नालियों को अपवाह के कारण चोक (Choke) होने से रोकने के लिये।

(v) खेतीहर मृदा का अपरदन (Erosion) कम करने के लिये।

(vi) भौमजल की कठोरता/प्रदूषणता घटाने के लिये।

(vii) भौमजल की गुणता में सुधार लाने के लिये।

(viii) क्षेत्र में सूखा-काल के लिये, अव:भूमि में पेयजल का पर्याप्त भण्डार सुनिश्चित करने के लिये। जब अव:भूमि में भौमजल लबालब भरा रहता है, लोगों को आकाश की ओर ताकना नहीं पड़ता।

प्रश्न 5—वर्षा जल संचयन से क्या लाभ है? वर्षा जल संचयन के लाभ (Advantags of RainWater Harvesting)—वर्षा जल संचयन के लाभ निम्नलिखित हैं—

(i) इस प्रकार के जल संचयन से भौमजल स्तर ऊपर उठ जाता है, अत: कुओं/नलकूपों की जल प्रदाय क्षमता में बढ़ोतरी हो जाती है।

(ii) यह जल पीने तथा सिंचाई के लिये उपयुक्त होता है। भौमजल का कोई विशेष उपचार नहीं करना पड़ता है।

(iii) सतही जल स्रोतों (नदी, नाले, झील, पोखर आदि) में पानी उपलब्ध न रहने पर भी, भौमजल उपलब्ध रहता है।

(iv) जब सतही जल स्रोत नगर की जल-माँग पूरी न कर पाये, भूमिगत संचित वर्षा जल, विकल्प के रूप में इस माँग को पूरी कर सकता है।

(v) बरसाती नालों व सीवरों में बेकार बहता अपवाह जल का उत्तम उपयोग हो जाता है।

(vi) सीवेज निपटान/उपचार संयन्त्रों पर बोझ कम हो जाता है, क्योंकि बरसाती पानी को सीधा अव:भूमि में डाल दिया जाता है।

(vii) शहरी क्षेत्रों में बाढ़ के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

(viii) प्रथम बौछाड़ के बाद का वर्षाजल अनेक अशुद्धियों से मुक्त होता है, अत: इसका संचयन मितव्ययी होता है।

(ix) जहाँ भौम जल कुछ कठोर प्रकार का है, वहाँ वर्षाजल संचयन से उसकी कठोरता सुधारी जा सकती है।

(x) वर्षा जल संचयन निर्माण सरल प्रकार के होते हैं, जो कम लागत में तैयार किये जा सकते हैं।

(xi) वर्षा जल संचयन एक स्थायी भूमिगत जल-टैंक उपलब्ध कराता है, जिसको उपयोग क्षेत्र में सूखा पड़ने तथा आपातकाल में किया जा सकता है। इस जल का वाष्पीकरण के कारण ह्रास नहीं होता है।

प्रश्न 6–अग्निरामन तथा अग्निशमन उपस्कर से आपका क्या अभिप्राय है?

उत्तर—

अग्निशमन तथा अग्निशमन उपस्कर
(Fire Fighting and Fire-fighting Equipments)

भवन में आग लगने की सूचना, भवनवासियों तथा सम्बन्धित व्यक्तियों व अग्निशमन (दमकल) विभाग को तुरन्त देनी चाहिए। यदि भवन में सार्वजनिक सम्बोधन व्यवस्था (Public Address System) है, तो इससे आग लगने की सूचनायें प्रसारित करने चाहिएँ। आग लगने पर, पहले पाँच मिनट का समय विशेष तौर पर बड़े ही महत्व का तथा मूल्यवान होता है। घबराकर इधर-उधर भगाने के स्थान, पर इस समय सूझ-बूझ तथा साहस से काम लेना होता है और जब तक अग्निशमन दस्ता आता है, जीवित प्राणियों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने का प्रयास करना चाहिए।

अग्निशमन कार्य में निम्न उपस्कर बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं, अत: इनको स्थायी रूप से भवनों में स्थापित कर देना उत्तम रहता है।

(i) आग की सूचना देने वाले संकेतक (अलार्म) (Fire Alarm)

(ii) हस्त चालित अग्नि-शामक (Manual Fire Extinguishers)

(iii) आन्तरिक अग्नि हाइड्रैन्ट (Internal Fire Hydrant)

(iv) जलाशय व गीली राइजर प्रणाली (Reservoir and Wet Riser System)

(v) स्वत: छिड़काव प्रणाली (Automatic Sprinkler System)

(I) आग की सूचना देने वाले संकेतक (अलार्म)—अग्नि-भय संकेतक (अलार्म) भवन के मुख्य द्वार, सोपान तथा उचित स्थान पर लगाने चाहिएँ। ये अलार्म निम्न दो प्रकार के होते हैं—

(i) स्वत: चालित अलार्म (Automatic Alarm)—यह अलार्म आग के धुआँ या ऊष्मा से प्रभावित होकर कार्य करते हैं, और नियन्त्रण कक्ष को आग भड़कने के संकेत भेजते हैं तथा समीपवर्ती अग्निशमन कार्यालय को सूचित करते हैं। यह साइरन (Siren) विशेष प्रकार की ध्वनि निकालते हैं ताकि नियन्त्रण कक्ष तथा अग्निशमक कर्मचारी आग लगने की सूचना पा जायें।

बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियों, मिलों तथा बहुतली भवनों में प्राय: स्वत: चालित अलार्म लगाये जाते हैं।

(ii) हाथों से बजाये जाने वाले अलार्म (Manual Alarm)—इसके लिए घण्टा, काल प्वाईंट (Call Point) अथवा अन्य साधन, जो विशेष प्रकार की ध्वनि निकाले, मुख्य द्वार के पास लटकाये जा सकते हैं, जिसे आग लगाने पर, चौकीदार अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा बजाकर या संचालित करके, भवनवासियों को सूचना दी जाती है।

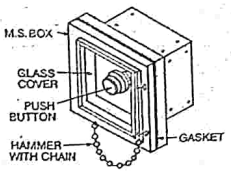

चित्र 13.2–हस्त कालप्वाईंट (Manual Call Point)

evilguru.net

(2) हस्तचालित अग्निशामक—आरम्भिक चरण में तथा सीमित घेरे में भड़की छोटी-मोटी आग बुझाने के लिए हस्तचालित अग्निशामक बड़े उपयोगी व सन्तोषजनक सिद्ध होते हैं। ये निम्न प्रकार के होते हैं—

(i) रेत तथा पानी से भरी बाल्टियाँ—सार्वजनिक भवनों में, जीनों के निकट अथवा अन्य उपयुक्त स्थान पर विशेष पैदे वाली बाल्टियाँ, जिनमें रेत व बालू भरा होता है, लटकायी/रखी जाती हैं, जिनका इस्तेमाल आग लगने पर ही किया जाता है। समय-समय पर इतन बाल्टियों में रेत/पानी के भरा होने की जाँच करते रहना चाहिए।

यह विधि छोटी आग बुझाने के लिए ही उपयुक्त है।

(ii) सचल अग्निशामक (Portable Fire Extinguisher)—यह छोटे आकार का सुवाह्य सिलिण्डर होता है, जिसमें कॉर्बन डाइऑक्साइड अथवा आग बुझाने वाली कोई अन्य गैस भरी जाती है। ये सिलिण्डर प्रत्येक तल पर दीवार में कील गाड़कर टाँग दिए जाते हैं। इसे आग लगने के स्थान पर जोर से पटक दिया जाता है, जिससे एक नोब दबती है और गैस बाहर आने लगती है, जो आग को बुझा देती है।

(3) आन्तरिक अग्नि हाइड्रैन्ट—आग बुझाने के लिए अग्निशमन दस्ते को पानी की आवश्यकता पड़ती है। पानी उपलब्ध कराने के लिए भवन के चारों ओर, भूमितल पर तथा प्रत्येक मन्जिल पर उपयुक्त संख्या में हाइड्रैन्ट (जल टोंटी) लगाये जाते हैं। इस कार्य के लिए भवन के चारों ओर 150 mm व्यास की मुख्य पाइप लाइन बिछाकर, उस पर उपयुक्त दूरी पर हाइड्रैन्ट लगा दिए जाते हैं। मुख्य पाइप लाइन को पानी की टंकी से जोड़ दिया जाता है। अग्नि हाइड्रैन्ट में पानी का पर्याप्त दाब (3·5 kg/cm^2) बना रहना चाहिए।

(4) जलाशय व गीली राइजर प्रणाली—इस प्रणाली में उपयुक्त धारिता का एक भूमिगत जलाशय (Reservoir) बनाया जाता है और इस पर एक शक्तिशाली पम्प (Fire Pump) लगाया जाता है। भवन के अन्दर प्रत्येक मन्जिल से होते हुए 100–50 mm व्यास के पाइपों की ऊर्ध्वाधर लाइन डाली जाती है, जिसे उपरोक्त अग्नि पम्प से जोड़ दिया जाता है। इस ऊर्ध्वाधर पाइप लाइन पर, प्रत्येक मन्जिल के लिए कनेक्शन छोड़ा जाता है। ऊर्ध्वाधर पाइप के उच्चतम बिन्दु पर पानी का दाब 3 kg/cm^2 से कम नहीं होना चाहिए। आग भड़काने पर अग्नि पम्प चला दिया जाता है और जिस तल पर पानी की आवश्यकता हो, वहाँ कनेक्शन पर होज पाइप जोड़ कर पानी ले लिया जाता है। ऊर्ध्वाधर पाइप लाइन को गीली राइजर लाइन के नाम से जाना जाता है। गीली राइजर प्रणाली चित्र 18.3 में दिखायी गयी है।

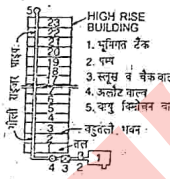

चित्र 18.3–गीली राइजर प्रणाली (Wet Riser System)

(5) स्वतः छिड़काव प्रणाली—इस प्रणाली में भवन की पूरी अन्तरछद (Ceiling) में 20 mm व्यास की पाइप लाइनें 3 मीटर के अन्तराल पर वितरक पाइपों (लटकायी) जाती हैं। इन पाइप लाइनों पर प्रत्येक 3 मीटर के अन्तराल पर, फर्श की ओर मुँह किए नोजल (Nozzles) फिट की जाती हैं। सभी पाइप लाइनों को 40 mm व्यास की मुख्य सप्लाई पाइप लाइन (Header Pipe) से जोड़ दिया जाता है, जिसमें शिरोपरि टैंक (Over Head Tank) से पानी आता है।

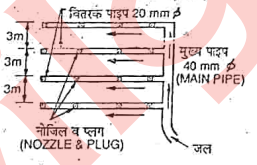

चित्र 18.4-स्वतः छिड़काव प्रणाली

पाइपों पर लगी नोजलों के शीर्ष (मुँह) पर गलनीय प्लग (Fusible Plug) लगाये जाते हैं, जो अग्नि के एक निश्चित तापमान ग्रहण करने पर स्वतः पिघल जाते हैं और पानी बाहर आने लगता है। आग लगने पर, सबसे निकट का प्लग अग्नि ताप पर पिघल जाता है और नोजल से पानी तेज बौछार के रूप में निकलकर आग पर गिरता है और इसे बुझा देता है (चित्र 18.4)।

स्वतः छिड़काव प्रणाली तेल अथवा अन्य औद्योगिक आग को बुझाने में भी सन्तोषजनक रहती है।

इस प्रणाली में सभी तलों पर, प्रत्येक कक्ष की अन्तरछद में पाइपों का जाल बिछाना पड़ता है, जिनमें हर समय पानी उच्च दाब पर भरा रहता है, अतः यह एक महंगी अग्निशमन प्रणाली है।

मॉडल पेपर–I
भवन निर्माण एवं अनुरक्षण इंजीनियरिंग

समय : $2\frac{1}{2}$ घण्टे पूर्णांक : 50

नोट : सभी प्रश्नों को हल कीजिए।

1. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिये— 2×5
   (अ) पत्थर की गढ़ाई की आवश्यकता क्यों पड़ती है? पत्थर गढ़ाई की किन्हीं दो विधियों को बताइये।
   (ब) नींव के विभिन्न कार्य क्या हैं? इसके विफल होने के क्या कारण हैं?
   (स) सील रोधक पदार्थ क्या होते हैं?
2. निम्नलिखित में से किन्हीं तीन भागों का उत्तर दीजिये— 3×4
   (अ) आर्च तथा लिन्टल में अन्तर स्पष्ट कीजिये।
   (ब) रोशनदानों के महत्त्व को समझाइये। एक संयुक्त रोशनदान और दरवाजे का स्केच बनाइये।
   (स) संवातन और प्रकाशकरण की मुख्य विशेषतायें क्या हैं?
   (द) चित्र सहित टैराजो फर्श बनाने का पूर्ण तरीका लिखिये।
3. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिये— 2×4
   (अ) एक मध्य थूनी या किंग-पोस्ट कैंची छत का सचित्र वर्णन कीजिए।
   (ब) सोपानों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत कीजिए।
   (स) टीप से आप क्या समझते हैं? इसकी आवश्यकता एवं उद्देश्य को स्पष्ट कीजिये।
4. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिये— 2×4
   (अ) सीमेन्ट कंक्रीट के क्या गुण होते हैं?
   (ब) वातानुकूलन प्रक्रम को समझाइये।
   (स) किसी भवन में आग लगने के क्या कारण हैं? अग्निशमन की क्या विधि है?
5. निम्नलिखित में से किन्हीं चार पर टिप्पणी कीजिये— 3×4
   (अ) पश्च दृढ़ीकरण (ब) गुनाइटीकरण (स) भवन किराया निर्धारण। (द) वर्षा जल संचयन।

मॉडल पेपर–II
भवन निर्माण एवं अनुरक्षण इंजीनियरिंग

समय : $2\frac{1}{2}$ घण्टे पूर्णांक : 50

नोट : सभी प्रश्नों को हल कीजिए।

1. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— 2×5
   (अ) गहरे और उथले नींव का प्रयोग बताने वाले कारणों को समझाइये। खसकेदार नींव के निर्माण को स्केच की सहायता से समझाइये।
   (ब) कंक्रीट बनाने की सामग्रियों को बतायें। उनके अलग-अलग गुण बतायें, जो उन्हें निर्माण के योग्य बनाते हैं।
   (स) $1\frac{1}{2}$ ईंट की दीवार का ऊ-जंक्शन प्लान फ्लेमिश बंध में खींचें।
2. निम्न में से किन्हीं तीन भागों का उत्तर दीजिये— 3×4
   (अ) लिन्टल और आर्च में अन्तर कीजिये। एक स्केच की सहायता से किसी आर्च के चार मुख्य भागों को बताइये और उसके कार्य इंगित करें।

civilguru.net